उपहार



मेवाड़ ! मेवाड़ ! मेवाड़ !

भूमिका

संसारमें अनेक देशोंने स्वाधीनताके लिये आदर्श त्याग और दृढ़ता दिखायी, भयानकसे भयानक कठिनाइयोंका सामना किया, परन्तु मेवाड़के वीर नर-नारियोंने जिस ढङ्गसे स्वाधीनताके लिये भीषण संग्राम छेड़ कर प्राणाहुति दी, वह वास्तवमें सर्वोपरि होनेके कारण विशेष रूपसे उल्लेखनीय है। मेवाड़के महाराणा ही नहीं, सामन्त-सरदार ही नहीं, राज-दरबारके कर्मचारी ही नहीं, रनवास की वीर-बालाएं ही नहीं, देशके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य; शूद्र, धनी निर्धन, बालक, युवा और वृद्ध सभी मातृभूमिके गौरवके लिये हंसते हंसते प्राण देना जानते थे। मेवाड़ महाराणाकी पैतृक सम्पत्ति नहीं, बल्कि सभी अधिवासियोंकी गौरवस्थली समझी जाती थी। देशके लिये कोई भी बड़ा त्याग और कोई भी कठिनाई भयानक न थी। देशके लिये स्त्री-पुरुषका प्रेम कोई चीज न था और कुल-गौरवके लिये संसारका रूपलावण्य निछावर था। मोक्ष प्राप्तिके लिये योगीजन निर्जन वनोंमें कन्दमूल फल खाकर जिस तरह घोर तपस्या किया करते हैं, उसी तरह मेवाड़के सहस्रों वीर देश-गौरवके लिये नाना प्रकारके कष्ट सहा करते थे। मेवाड़के बालक बचपनसे रणस्थलके शिक्षालयमें प्राणमोह विनाशनी शिक्षा ग्रहण किया करते थे और रनवासमें सुन्दर बालिकाएं सतीत्वके सामने संसारके बहुमूल्यसे बहुमूल्य आभूषण और प्रलोभन मिट्टीके समान समझा करती थीं। मेवाड़ वास्तवमें किसी समय स्वर्गपुरी थी जिसमें राजा प्रजाके बीच अनुपम प्रेम, पति-पत्नीके बीच सात्विक अनुराग था।

ऊपर जो कुछ लिखा गया है वह कविकल्पना नहीं है। सुदृढ़ प्रमाणोंके आधार पर ही वीरभूमिका गौरव अङ्कित किया गया है। वह मेवाड़ ही था जिसके वीर शिरोमणि महाराणा लक्ष्मण-सिंहने देशकी स्वाधीनताके लिये सबसे पहले अपने ११ पुत्रोंका बलिदान दिया और उन पुत्रोंकी वीर माताने प्रसन्न मुखसे उनकी आरती उतारी। वह मेवाड़ ही था जिसकी सहस्रों वीर-बालाएं सतीत्वकी रक्षाके लिये हंसती हुई अग्निमें भस्म हो गयीं। वह मेवाड़ ही था जिसमें रूप-लावण्यकी खान महारानी पद्ममिनीने अपने सतीत्व और पति-प्रेमके सामने बादशाही महलों और सुख-ऐश्वर्य पर थूक दिया और कुल-गौरवके लिये अग्नि-चिता पर चढ़ गयी! वह मेवाड़ ही था जिसमें महाराणा संग्रामसिंहने पेड़की छाल खा कर दिन काटे थे, क्योंकि उनकी प्यारी प्रजा दुर्भिक्षके कारण अन्न न पाती थी। वह मेवाड़ ही था जिसके महाराणाने न्याय-रक्षाके लिये अपने इकलौते पुत्रको वंश-संहारकी जरा भी परवाह न कर फांसी पर लटका दिया था! वह मेवाड़ ही था जिसकी रक्षाके लिये वीरवर जयमल और फत्ताने प्राणोंका कुछ भी मोह न किया। वह मेवाड़ ही था जिसके सरदारने अटूट धनकी कुछ भी परवा न कर अपने स्वामी और जातिके लिये प्राण तक दे दिये। जिसका सिर भी धड़से अलग हो गया, परन्तु जो अपनी प्रतिज्ञाकी रक्षाके लिये घोड़े पर डटा हुआ निश्चित समय तक लड़ता रहा। वह मेवाड़ ही था जिसने चन्द सरीखे त्यागी उत्पन्न किये, जिन्होंने अपना बचन पालन करनेके लिये राज्याधिकार तक त्याग दिया। क्या कहें, मेवाड़की एक एक घटना संसारके इतिहासमें अनुपम और उल्ले-खनीय है। मेवाड़का इतिहास भारतके गगन-मण्डलमें वास्तवमें सूर्य ही है। ऐसा कोई देश तो बताया जाय जिसके शासकने देशकी

स्वाधीनता और वंशके गौरवके लिये वर्षों पहाड़ी स्थानों और दुर्गम जङ्गलोंमें निवास किया हो और जिसने स्वयं घास खाकर तथा अपने परिवारको खिला कर अपने दिन काटे हों। क्या कोई देश है जिसके शासक परिवारने स्वाधीनताके लिये ऐसे भयानक कष्ट सहे हों। संसारमें जिस समय भी निष्पक्ष इतिहास-लेखक जन्म लेंगे, वे मेवाड़को ही सर्वमान्य मानेंगे।

सच पूछा जाय तो मेवाड़का इतिहास हिन्दुओंका अद्वितीय कोष है, जिसका मूल्य संसारका साम्राज्य भी नहीं हो सकता। निर्जीवोंमें यदि जीवन-शक्तिका संचार करने वाली कोई शक्ति है तो वह मेवाड़का गौरव पूर्ण इतिहास ही है, जिसका अध्ययन प्रत्येक हिन्दूके लिये गीता और रामायणके समान आवश्यक है। भारतवासी यदि स्वाधीनताके महत्वको समझना चाहते हैं, तो मेवाड़का इतिहास पढ़ें।

प्रस्तुत पुस्तक इसी उद्देश्यसे बड़े आग्रह पूर्वक लिखी गई है जो अत्यन्त अल्प-कालमें पथ-प्रदर्शनके लिये तैयार की गयी है। पुस्तक लेखक श्रीयुक्त पद्मराजजी जैन मेवाड़के गौरवपूर्ण इतिहास से इतने प्रभावान्वित हुए हैं कि वे भारतीय स्वाधीनताके लिये सदा ही मेवाड़के वीरोंके त्याग और साहसका आदर्श देखा करते हैं और मेवाड़के गौरव पर अपनेको निछावर समझते हैं। मेरे आग्रह पर उन्होंने केवल इसी लिये स्वीकार किया कि जिस पराधीन देशका स्वातन्त्र्य-प्रेम आज कल पश्चिमी देशोंका अनुकरण मात्र समझा जाता है, उसका परिचय पक्षपातपूर्ण आक्षेपकारोंको मिल जाये और भारतीय-सन्तानोंको भी अपने पूर्व-पुरुषोंके गौरवका पता लगे। लेखककी प्रबल इच्छा थी कि मेवाड़का इतिहास सर्वाङ्ग रूपपूर्ण निकले, परन्तु मेरे आग्रह ने उन्हें यह संक्षिप्त इतिहास

लिखनेके लिये ही वाध्य किया। उनकी हार्दिक इच्छा यही है कि भारतवासी अपने गौरवस्थान, स्वतन्त्रताकी लीलाभूमि मेवाड़के सम्बन्धमें यदि वर्तमान पुस्तक पढ़ कर और भी विशेष बातें जानने के अभिलाषी हुए तो वे अपना अमूल्य समय और धन व्यय कर एक बड़ा इतिहास प्राचीन शिलालेखों और मेवाड़के चारणोंके कथनके आधार पर तैयार करेंगे जो हिन्दीसंसारमें एक अपूर्व वस्तु होगी। परमात्मा उनके इस उद्देश्यको पूर्ण करे यही मेरी इच्छा है।

प्रस्तुत पुस्तकके तैयार करनेमें टाडसाहबके 'राजस्थान' नामक ऐतिहासिक ग्रन्थसे बहुत कुछ सहायता ली गयी है, परन्तु पुस्तक उस ग्रन्थकी पुनरावृत्ति ही नहीं है, बहुतसी ऐसी बातें भी वर्तमान पुस्तकमें दी गयी हैं, जिनका उल्लेख टाडसाहबने कहीं पर नहीं किया। लेखक मेवाड़के गौरवसे उत्साहित होकर स्वयं उस वीरभूमिके दर्शन करने गये थे और वहीं कई महीने रह कर उन्होंने जङ्गलों और दुर्गम स्थानोंका निरीक्षण किया। प्रातः-स्मरणीय महाराणा प्रतापकी समाधि तथा उनके अनेक आश्रय स्थान देखे, बहुतसे शिलालेख भी बड़े परिश्रमसे पढ़े और चारणों को एकत्र कर बहुतसी प्रामाणिक बातोंका संग्रह किया। मेवाड़के वीर भीलोंसे भी मिलकर उन्होंने बहुतसी पुरानी बातोंका परिचय प्राप्त किया। मेवाड़-भ्रमण और तत्सम्बन्धी अनुसन्धानकी सभी बातें मौलिक रूपसे इस पुस्तकमें दे दी गयी हैं। पुस्तक बहुत बड़ी न हो जाये इससे बहुतसी घटनायें प्रामाणिक होने पर भी न दी जा सकीं। पुस्तकका स्वरूप विस्तृत हो जाता और वह अधिक मूल्यके कारण सर्वसाधारणके लिये सुलभ न रहती, इसी

भयसे मैंने लेखकको जहां तक हो सके संक्षिप्त इतिहास लिखनेकी सलाह दी।

लेखकने यद्यपि मेरे अनुरोधसे इतिहासको संक्षिप्त रखा, परन्तु इसका मुझे भी बड़ा दुःख है क्योंकि सभी घटनायें विस्तारपूर्वक न दी जा सकीं। कुछ घटनायें तो वास्तवमें उल्लेखनीय होने पर भी स्थानाभावसे छोड़ देनी पड़ीं, असल बात तो यह हैं कि जिस देशके इतिहासमें लाखों उल्लेखनीय घटनायें हैं उसकी जो भी घटना स्थान पा जाय उद्देश्यसिद्धीके लिये पर्याप्त है।

जिस मेवाड़ने अनुपम वीर और स्वाभिमानी राजपूत कुल-केसरी महाराणा प्रतापको जन्म दिया, वह वास्तवमें बन्दनीय स्थान है। महाराणा वीरताकी ही खान थे सहृदयताके मूर्तिमान अवतार थे। एक समयकी बात है कि वे जङ्गलमें शिकार खेलकर एक गांवमें जा पहुंचे और एक राजपूत बुढ़ियाके मकान पर पानी पीनेके लिये ठहर गये, वह वृद्धा अपनी कुमारी कन्याके साथ बैठी हुई रो रही थी। महाराणाने उससे पीनेके लिये जल मांगा और बुढ़िया अतिथिसत्कारके लिये ठण्डा जल और कुछ खानेको ले आयी। जब महाराणा पानी पीकर शान्त हुए तो उन्होंने बुढ़िया से उसके रोनेका करण पूछा। बुढ़ियाने उत्तर दिया कि भाई, तुम पानी पी चुके अब अपना रास्ता लो। मेरे रोनेका कारण पूछनेसे क्या लाभ होगा। बुढ़ियाने महाराणाको पहचाना नहीं। जब अतिथिने बहुत आग्रह किया तो बुढ़िया आंखोंमें आंसू भर कर बोली कि इस कन्याका विवाह है। इसके कोई मामा नहीं जो इसका भात भरे। यही सोच कर मैं रोने लगी और मेरी कन्या भी मुझे देख कर रो रही है। महाराणाने विवाहकी तिथि पूछ ली और बुढ़ियासे कहा कि यदि कन्याका मामा नहीं तो

मुझे इसका मामा समझ लो। मैं निश्चित दिन पर आकर भात भर जाऊंगा। बुढ़ियाने इसे निर्मूल उपहास समझा और कहा कि इन व्यर्थकी बातोंसे क्या लाभ है। हम दोनोंका सम्बन्धी कौन बन सकता है। महाराणा वहांसे राजधानी चले गये और कन्याके विवाहके दिन उसके मामा बन कर बहुतसे घोड़े सजाकर तथा धन द्रव्य लेकर भात भरने पहुंच गये। जब बुढ़ियाने सुना कि स्वयं महाराणाजी उसके भाई बनकर भात भरने आये हैं तो वह कृतज्ञतासे विह्वल हो गयी। महाराणाके इस कार्यको देख प्रजा फूली न समायी। मेवाड़के शासनका भार महाराणा प्रताप सरीखे सहृदय वीरोंके हाथमें था फिर भला ऐसे उत्तम कार्य राजा-प्रजाका प्रेम बढ़ानेवाले क्यों न दिखाई दें। मेवाड़के महाराणा यदि रणस्थलमें व्याघ्रसे भी कठोर थे तो अपनी प्रजाके लिये फूलसे भी अधिक कोमल थे।

मेवाड़के रनवासकी रानियां तथा राजपूत-बालाएं भी स्वाभिमानकी साक्षात मूर्त्ति हुआ करती थीं। वे अपने अपने पतियोंको कर्त्तव्य पालनके लिये सदा उत्साहित किया करती थीं। चूड़ावत सरदारकी नवविवाहिता भार्याने पतिको रणस्थलमें निश्चिन्त बनाने के लिये अपना शिर काट कर दे दिया था। जिसे पाकर वे रुद्र बन गये थे और जिस घटनाने उन्हें औरङ्गजेब सरीखे दुर्दान्त शत्रुको कई दिन तक रोक रखनेका अपूर्व साहस प्रदान किया था। जोधपुरके कहाराज यशवन्तसिंहको उदयपुरकी कन्या व्याही हुई थी। जिस समय रानीने सुना कि मेरा पति काबुलसे पीठ दिखा कर भाग आया है, उसने अपने महलका दरवाजा इसलिये बन्द कर दिया कि कायर पतिका मुंह न देखकर चितामें भस्म हो जाऊंगी। बहुत समझाने पर उस वीर महिलाने

इस शर्त पर जीवित रहना स्वीकार किया था कि जबतक यशवन्तसिंह रणस्थलको न लौट जायेंगे अन्न ग्रहण न करूंगी। उसने वास्तवमें उसी दिन अन्न ग्रहण किया जिस दिन उसका पति फिर लड़नेके लिये चला गया।

इसी महिलाके जब अजीतसिंह नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था तो जोधपुरमें बड़ी धूम मचायी गयी थी। बालककी नानी जब उदयपुरसे जोधपुर पहुंचीं तो इस बातकी लोगोंमें बड़ी चर्चा थी कि बालकके लिये अमूल्य रत्न, वस्त्र, और आभूषण लाये गये होंगे, परन्तु उदयपुरकी महारानीने एक ढालका पालना बना कर बालकको उस पर सुलानेकी आज्ञा दी और उसके खेलनेके लिये एक छोटीसी तलवार दी। उसके तकियेके स्थानमें एक हथियार रखा और उसका अंगूठा चीर कर रक्तसे उसका तिलक किया! महारानीका यह कार्य देख सब बड़े चकित हुए। महारानीने गर्जती हुई वाणीसे कहा कि देशकी स्वतन्त्रता खोयी समझ हम लोग अपने बालकको मखमल और रेशमके कोमल वस्त्रों पर किस तरह सुला सकते हैं! कांटोंकी शय्या वीरोंके बालकोंके लिये उपयुक्त है। जिस समय सारा देश दुःखी हो रहा है उस समय हम अपने महलोंमें किस तरह आनन्द मना सकते हैं। महारानीके इस पवित्र उपदेशको सुनकर विलासी दर्शक अवाक् खड़े रह गये। मेवाड़की इन वीर रमणियोंने ही सदा देशमें स्वतंत्रताका दीपक प्रज्वलित रखा और देश पर आये हुए सङ्कटके समय स्वयं खड्ग धारण कर कुल-गौरवकी रक्षा की।

मेवाड़के वीरोंने अल्प संख्यामें होने पर भी दिल्लीके बादशाहोंकी विराट् सेनाओंका बड़ी वीरतासे सामना किया। दिल्लीके राज

सिंहासन पर जो भी बादशाह बैठा उसने अपना प्रभाव बढ़ानेके लिये मेवाड़को जीतना चाहा, परन्तु वीरोंने कभी अपने देशकी स्वतन्त्रता नष्ट नहीं होने दी। यदि किसी एक महाराणाने कभी साधारण कमजोरी भी दिखायी तो राजसिंह सरीखे उत्तराधिकारीने उस कमजोरीका बदला ब्याज समेत चुका लिया। यदि दिल्लीके बादशाहोंके साथ महाराणाओंका राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित हुआ तो वह सदा बराबरीकी शर्तों पर ही रहा। मेवाड़का कोई भी महाराणा कभी दिल्लीके दरबारमें उपस्थित नहीं हुआ। मेवाड़के महाराणा सदा हिन्दूपति कहलाये क्योंकि हिन्दू तीर्थों पर जब कभी कोई संकट उपस्थित हुआ तो मेवाड़के महाराणा सबसे आगे रणस्थलमें दिखायी दिये। महाराणाने अपने प्रथम कुल गौरवकी रक्षाके लिये विधर्मियोंको कभी अपनी लड़कियां नहीं दीं। यह ऐसी बात है जिसका अभिमान प्रत्येक स्वाभिमानी व्यक्ति कर सकता है। मेवाड़का राजघराना जितना पवित्र और साहसी था उतना ही धार्मिक भी रहा। समस्त इतिहासमें एकभी ऐसा उदाहरण नहीं पाया जाता कि किसी भी महाराणाने शक्तिके मदमें कोई अनुचित काम किया हो। औरङ्गजेबकी बेगम और कन्या युद्धस्थलमें गिरफतार हुईं, परन्तु महाराणाने उन्हें अपनी बहन बेटीके समान राजमहलमें रख कर वापस कर दिया। जब शत्रुकी रमणियोंके साथ ऐसा पवित्र वर्ताव किया; तो क्या कोई कल्पना कर सकता है कि मेवाड़के महाराणाने कभी व्यभिचारसे अपनी उज्वल कीर्त्तिमें धब्बा लगायी होगी। रूपनगरकी राजपूत कन्याके समान उन्होंने अबलाओंका उद्धार अपने प्राण सङ्कटमें डाल कर किया।

बप्पारावलके वंशधरोंमें महाराणा राजसिंह अन्तिम प्रतापी

महाराणा हुए, उनके बाद जो शासक हुए वे साधारण श्रेणीके ही थे। यद्यपि उन्हें अपने कुलगौरवका पूरा ज्ञान था, परन्तु मेवाड़में जो परस्परकी फूट उत्पन्न हुई उसे दबानेमें वे असमर्थ सिद्ध हुए। घरेलू फूटके कारण मराठोंने राज्यको बहुत तङ्ग किया और कोषमें धन न रहने पर भी बड़ी निर्दयतासे कर वसूल किया। यदि मराठोंमें प्राचीन हिन्दू शासकोंके गौरवकी रक्षाका भाव होता तो वे अपनी अधम धन-लालसाको दबा कर अच्छा सङ्गठन कर सकते थे, परन्तु छत्रपति शिवाजीके बाद उनके वंशधर भी तो पराधीनताकी बेड़ियां पहननेवाले थे। जयपुर, जोधपुरके शासक ही यदि राजपूत गौरवको कोई चीज समझते और समय समय पर की हुई प्रतिज्ञाओंका पालन कर महाराणाओंका साथ देते तो मेवाड़का ही नहीं उनका भी कल्याण होता।

मराठोंने लूट और आक्रमणोंकी जैसी धूम मचायी थी, उससे अपनी रक्षा करनेके लिये उदयपुरके महाराणाको १९ वीं शताब्दी के आरम्भमें अंग्रेजोंसे सन्धि कर लेनी पड़ी। अंग्रेजोंने इस तरह मेवाड़को तलवारसे नहीं जीता बल्कि उदयपुरके राजघरानेकी इच्छासे ही उसे पाया।

मेवाड़के राजघरानेमें अन्तिम उल्लेखनीय परन्तु साथ ही अत्यन्त शोचनीय घटना कुमारी कृष्णाकी मृत्यु है, जिसके शापसे राजघरानेमें कई पीढ़ी तक कोई पुत्र ही उत्पन्न न हुआ और गोदके लड़कोंको गद्दी देकर काम चलाना पड़ा। जयपुर जोधपुरके राजपूत शासक ही कुमारी कृष्णाकी मृत्युके कारण थे। हृदय दहल जाता है जब स्मरण होता है कि एक अबोध निरपराध कन्याको हलाहल विषका प्याला पीकर अपने प्राण देने पड़े थे। यदि उस बिचारीका कोई अपराध था तो यही कि उसने ईश्वरसे रूपका

अनुपम वर पाया था।

मेवाड़के इतिहासमें जहां पन्नाकी स्वामिभक्ति, पद्मिनीकी चतुराई, चूड़ावत सरदारकी भार्याकी कर्तव्यशीलता उल्लेखनीय है, वहां कुमारी कृष्णाका हलाहल विषपान भी चिरस्मरणीय रहेगा।

पश्चिमी सभ्यताके सङ्घर्षने भारतीयोंमें इस बातकी प्रबल इच्छा उत्पन्न की है कि ऐतिहासिक परिशोध किया जाये। जो लोग इस विषयमें अनुराग रखते हैं वे मेवाड़में बहुत कुछ सामग्री प्राप्त कर सकते हैं। भारतमें वीरपूजाका तो कभी अभाव रहा नहीं। आज भी वीर सतियों और वीर सरदारोंकी पूजा मेवाड़में होती है तथा उनके पवित्र सरदारोंके दर्शन कर लोग अपनेको भाग्यशाली मानते हैं, परन्तु यह वीरपूजा यदि वास्तवमें कुछ महत्व रखती है तो यही कि वीरोंके अनुसार आचरण करनेकी चेष्टा करनी चाहिये। वर्तमान पुस्तकके लेखकको वास्तवमें बड़ी प्रसन्नता होगी यदि हमारे देशके बालक-बालिकायें अपने पूर्वजोंकी अनुपम रता, साहस और स्वाभिमानका थोड़ा भी अनुकरण कर सकें। खक अपना परिश्रम सफल समझता है, पाठक यदि पढ़ी हुई बातोंको शीघ्र ही न भूल जायें। आशा है यह उद्योग पाठकोंके पसन्द आयेगा और उन्हें इससे लाभ पहुंचेगा। उनकी प्रेरणासे लेखकको सर्वाङ्ग सुन्दर और विस्तृत मेवाड़-गौरव लिखनेके लिये वाध्य होना पड़े यही ईश्वरसे फिर प्रार्थना है।

——:❀:——

मेवाड़-गौरव ।

प्रथम-परिच्छेद ।

मेवाड़-परिचय ।

—:—

आज भारतके पैरोंमें दासत्वकी बेड़ियां पड़ी हुई हैं, इससे इसका सारा गौरव दब रहा है, जिस तरह कि मेघाच्छन्न आकाशमें सूर्यका तेज छिपा रहता है। पराधीनताने भारतवासियोंको उत्साहहीन बना दिया है। उनका प्राचीन इतिहास ही उनके निर्बल हृदयोंको आशापूर्ण बना सकता है। इसीसे भारतीय इतिहासके चमकते हुए रत्नोंका कुछ परिचय देना आवश्यक समझा गया है। भारतकी प्राचीन सभ्यतापूर्ण भूमिमें मेवाड़का नाम प्रातःस्मरणीय है ? क्योंकि इस अञ्चलके शासकोंने भयानकसे भयानक कष्टोंका सामना करते हुए भी आर्यजतिका गौरव रखा। वह पवित्र स्थान राजस्थानके दक्षिणमें अजमेरके पास है। इसका क्षेत्रफल लगभग १३ हजार वर्गमील है। आबू पर्वत मेवाड़की सीमासे मिला हुआ है। अरावली पर्वतमाला इस सिरेसे दूसरे सिरे तक फैली हुई है। मेवाड़की वर्तमान राजधानी उदयपुर अस्सी मील लम्बे चौड़े पर्वतके बीचोबीच है। प्राचीन राजधानी चित्तौड़ भी पर्वत श्रेणीके ऊपर है। प्रायः सारा मेवाड़ ही

पर्वतोंके बीच बसा हुआ है। पर्वतोंके बीच आज भी पुरानी वीर जाति भील स्वतन्त्रतापूर्वक निवास कर रही है। बानास नदी मेवाड़ होकर चम्बलमें गिरती है। इस वीर देशकी भूमि उर्वरा है। यहां पर गल्ला औररुई बहुतायतसे पैदा होती है। स्वतन्त्र अवस्थामें यह देश इन चीजोंका व्यापारकेन्द्र माना जाता था।

देशकी सम्पन्न अवस्था और उसके चित्ताकर्षक दृश्य ही आक्रमणकारियोंके मुंहमें पानी लाने वाले बने। मेवाड़के शहरों में उदयपुर, चित्तौड़, भीलवाड़ा, कपासन आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। उदयपुर एक सुन्दर तालाबके किनारे पर बसा हुआ है, जिसके तीन ओर पहाड़ हैं। यही कारण है कि इस शहरकी शोभा बहुत बढ़ गयी है। मेवाड़के राणाओंने अपने अपने नाम पर अपने वीरतापूर्ण उद्योगोंके स्मारकमें यहां तालाब खुदाये। जिनसे पानीकी कमी कभी नहीं रही। इन तालाबों के अतिरिक्त बहुतसे प्राकृतिक तालाब भी हैं। राजपूतानेमें पानीकी कमीकी जो बात प्रसिद्ध है वह मेवाड़में न समझनी चाहिये। तालाब इतने बड़े बड़े हैं कि उन्हींके बीच राजमहल बने हुए हैं जिन तक डोंगियोंकी सहायतासे पहुंचा जाता है। तालाबोंमें समुद्रकी तरह बड़ी बड़ी भयानक लहरें आती हैं। जनता वायुसेवनके लिये इन तालाबोंके किनारे ग्रीष्म-ऋतुमें बहुत बड़ी संख्यामें एकत्र होती है। महाराणाका वर्तमान महल जिसमें वे निवास करते हैं तालाबके किनारे पर है। इसी महलके पास पुराने महलके अग्रभागमें पीतलका एक बहुत बड़ा सूर्य लगा हुआ है जो सूर्यवंशका परिचय देनेवाला है। नये महलके नीचे बहुतसे बैठकखाने हैं जिनमेंसे एकमें उन

राणाओंके चित्र हैं जो चित्तौरसे उदयपुर राजधानी उठ आनेपर सिंहासन पर बैठे। इन चित्रोंमें महाराणा प्रताप और महाराणा राजसिंहका चित्र बहुत बड़ा है ।

मेवाड़में पर्वत श्रेणियोंके कारण मीलों तक बड़े भीषण जङ्गल हैं जिनमें पानीके झरने भी हैं। इन्हीं जङ्गलोंमें भील खेती किया करते हैं। जङ्गलोंके बीच भीलोंकी चौकियां बनी हुई हैं। एक चौकी पर कर चुका देनेसे भील दूसरी चौकी तक यात्रीको पहुंचा आता है। भील बड़े वीर और स्वाभिमानी हैं। वे आज भी मेवाड़के लिये रक्त बहानेको तैयार हैं और बाण चलानेमें बड़े ही सिद्धहस्त हैं। वे काले होते हैं और वस्त्र धारण नहीं करते। शिर पर कौआ या मारका पर बांधे रहते हैं और सुपारीके पत्र सामने लगाकर लज्जानिवारण किया करते हैं। वे पत्तोंकी झोपड़ियोंमें रहते और खेती कर अपना पेट भरते हैं। जाड़ेके दिनोंमें लकड़ी जलाकर अग्नि सेवन किया करते हैं। यद्यपि वे लुटेरे नहीं हैं परन्तु स्त्रीको देख कर वे मनमें भी लूटकी इच्छा नहीं करते। वे स्त्री जातिको बड़े गौरवकी दृष्टिसे देखते हैं। वे वर्तमान शहरोंके लोगोंको देखकर आश्चर्य में पड़ जाते हैं। उनसे यदि कोई कह दे कि तुम अपनी लड़की दे दो तो वे बड़ा बुरा मानते हैं। मुसलमान बादशाहों ने राजपूतोंकी लड़कियां लेनेकी जो धूम मचायी थी, उस समय मेवाड़ने अपनी लड़कियां प्राणोंकी आहुति देकर भी नहीं दीं यही कारण है कि भील लड़कीकी मांग सबसे अधिक अपमानजनक मानते हैं। वर्तमान कालमें जब कि मेवाड़ और राजघरानेके आदमी यह नहीं जानते कि वीर शिरोमणि महाराणा प्रतापकी समाधि कहां है, उस समय भी यही साधे

सादे भील उस पवित्र समाधिका पूरा परिचय रखते हैं जो बड़े घने जङ्गलके बीचमें उदयपुरसे २० मीलकी दूरी पर हैं। यह समाधि बड़ी जीर्ण अवस्थामें है। भीलोंने उसके ऊपर बांस लगाकर पत्ते डाल रखे हैं। समाधिसे दो ढाई मील इधर उधर जङ्गलमें आज पर्य्यन्त भी वृक्षोंमें और पहाड़के गुप्त निरापद स्थानोंमें लोहेके बड़े बड़े कड़े और कीलें गड़ी हुई दिखायी देती हैं। कहा जाता है कि इन्हीं स्थानोंमें राज-घरानेके लड़के लड़कियां विदेशियोंके आक्रमणके समय टोक-रियोंमें भर कर इन कीलों और कड़ोंसे बांध दिये जाते थे। समाधिके पास मिट्टीका एक खंभा बना हुआ है। जिसके नीचे भील पूजा किया करते हैं।

मेवाड़में फलोंकी भी कमी नहीं हैं। जो फल उत्पन्न होते हैं वे बड़े मीठे होते हैं। अमरूद और अनार तो बहुतायतसे पैदा होते हैं। घोड़े भी यहांके मजबूतीके लिये प्रसिद्ध हैं। पहाड़ी घोड़े ऊंचे ऊंचे पहाड़ों पर ४० मील दूर चले जाते हैं।

विदेशियोंके आक्रमणके समय मेवाड़में जो सतियां चिता बनाकर भस्म हो गयी थीं उनकी समाधियां चित्तौड़में पर्वत के ऊपर और उदयपुरमें पहाड़के नीचे बहुत बड़े घेरेके भीतर बनी हुई हैं। मेवाड़के अनेक वीरोंकी भी समाधियां देखनेमें आती हैं। श्राद्धके दिनोंमें वर्तमान महाराणा इन समाधियोंकी पूजा करने जाया करते हैं। उदयपुरकी समाधियोंके दर्शन सर्वसाधारणको बड़ी कठिनाईसे हो सकते हैं।

चित्तौड़में पहाड़के ऊपर १२।१३ मील या इससे भी अधिक दूरीमें बड़ा भारी किला बनाया गया था, जिसके लाखों कमरे आज भी देखनेमें आते हैं। यह किला खंडहरके रूपमें पड़ा

हुआ है। जगह जगह ईंट पत्थरके ढेर दिखायी देते हैं। किलेके खंडहरोंमें महारानी पद्मिनीका महल, देवीका मन्दिर, जैन मन्दिर तथा जयस्तम्भ अब भी बचे हुए हैं। इस किलेके अन्दर ही कई तालाव हैं जो सब सूखे पड़े हैं। पद्मिनी-गुफाके पास एक गोमुखी झरना अब भी वह रहा है। यह स्थान चित्तौड़की महासतियोंके स्थानके नामसे प्रसिद्ध है। गुफाके दो दरवाजे हैं जो विल्कुल बन्द हैं। पद्मिनी-स्मारक दो छतरियोंका वना हुआ है, जिसकी लोग अब भी पूजा करते हैं। किलेके भीतर जिन जिन राणाओंके महल हैं, उनमें ही उनकी समाधियां देखी जाती हैं। इन समाधियोंके ऊपर पत्थरके चौखटे पर पत्थरमें खुदी हुई मूर्त्तियां बनी हुई हैं। राणाओंकी मूर्त्तियां घोड़ोंपर सवार हैं। हाथमें भाला और कमरमें ढाल वंधी हुई हैं। स्त्रियोंकी मूर्त्तियां खड़ी हैं। उनका पहनाव पुराने ढङ्गका है। मुंह खुला हुआ है। महलोंके भीतर अलग अलग मूर्त्तियां रहनेसे पता लगता है कि वह किसकी मूर्त्ति है। मूर्त्तिके नीचे किसीका नाम नहीं लिखा है। चितौड़में प्रवेश करने पर एक दरवाजे पर सरदार जयमलकी और दूसरे दरवाजे पर सरदार फतेहसिंहकी छतरी है जो इतिहासमें जयमल और फत्ताके नामसे प्रसिद्ध हैं। बादशाह अकबरने इन दोनोंकी वीरता पर मोहित होकर अपने दरबारमें इनकी प्रतिमूर्त्ति बनायी थी। चित्तौड़की तराईमें अलाउद्दीनकी खाई भी देखनेमें आती है। चित्तौड़के अधिवासी वहांकी चहदिवारी देखकर अब भी बताया करते हैं कि अमुक स्थानोंमें अमुक चढ़ाईके गोले लगे थे। चित्तौड़में बहुत से शिलालेख पाये जाते हैं। वहांके अधिकारी न जाने किस कारणसे उन्हें पढ़ने नहीं देते।

उदयपुरमें ही आजकल महाराणा निवास करते हैं। सोलहवीं शताब्दीमें महाराणा उदयसिंह चित्तौड़से उदयपुर चले आये थे और उन्होंने अपने नाम पर यह राजधानी बनायी। उदयसागर नामक एक बहुत बड़ा तालाब भी खुदाया गया। पहले उदयपुरकी चहदीवारीके बाहर बस्ती न थी, परन्तु अब कुछ आबादी देखनेमें आती है। चहदीवारी का प्रधान दरवाजा सबेरे ६ बजे बाद खुलता और रातको ८ बजे बाद बन्द हो जाता है। ११ बजे छोटी खिड़की भी बन्द हो जाती है। उदयपुर चौक बाजार देखने लायक है। सोने-चांदी सराफेकी दुकानें इसी चौकमें हैं। पुराने हथियार और पुराने चित्र भी यहां बहुत मिलते हैं परन्तु दाम ज्यादा हैं। मकान बहुत ऊंचे नहीं परन्तु देखनेमें अच्छे मालूम होते हैं। चौक बाजारसे ही महाराणाके महलोंको रास्ता गया है। उदयपुरमें आज लोग प्रातः-स्मरणीय महाराणा प्रतापका नाम नहीं जानते, यह बड़े दुःखकी बात है। महाराणाके पुराने महलके पास जो उनका फीलखाना है उसमें महाराणा प्रतापके घोड़े चेतककी काठी और उनका भाला रखा हुआ है जो देखने योग्य हैं। इन्हें देखनेमें बड़ी कठिनाई होती है। उदयपुरमें यद्यपि महाराणा प्रतापका गुणगान नहीं होता, परन्तु आज भी यदि वहांकी स्त्रियोंको पता लग जाये कि कोई व्यक्ति उनके देश और महाराणाके गौरव सुन कर वहां पहुचा है तो वे उसकी बड़ी खातिरदारी करती हैं। फल बेचनेवाली स्त्रियां फलोंके दाम तक नहीं लेतीं। उदयपुरसे पश्चिम कुछ दूर पर हल्दीघाटीका मैदान है जहां पर महाराणा प्रताप और अकबरके बीच अन्तिम ऐतिहासिक युद्ध हुआ था। यह स्थान बड़ा ही भयानक है। रास्ता इतना संकीर्ण है कि दो

बैलगाड़ियां एक स्थान नहीं निकल सकती। मैदान चारों ओर पहाड़ोंसे घिरा हुआ है। बीच बीचमें बड़े बड़े समस्थल दिखायी देते हैं जहां पर सेनायें एकत्रित कर लड़ाई की जा सकती हैं। घाटीसे आठ दश मील आगे एक बड़े भारी पहाड़ी किलेके पास अब भी एक चबूतरा बना हुआ है जो चेतकका चबूतरा कहलाता है। यह वही स्थान हैं जहां पर महाराणा प्रतापके घोड़े चेतककी मृत्यु हुई थी और महाराणाकी श्री सगरसिंहसे भेट हुई थी। इस चबूतरेकी बड़ी बुड़ी दशा है परन्तु प्रसन्नताकी बात है कि लोग उसे आज भी जानते तो हैं।

चित्तौड़से कुछ दूर कमलमीर दुर्ग है। जब कभी राणाओंके हाथसे चित्तौड़ निकल जाता था तो वे इसी किलेकी शरण लिया करते थे। आजकल यह भी खण्डहर हो गया है। वह किला चित्तौड़के समान तो नहीं है परन्तु बड़ा बहुत है। किलेके भीतर खेती होने लग गयी है। मेवाड़में और भी सैकड़ों छोटे छोटे किले और महल हैं जिनका वर्णन आवश्यक नहीं।

उदयपुरसे २२ मील दूर जैनियोंका प्रसिद्ध तीर्थ स्थान श्री केसरियाजीका मन्दिर है जो बड़ा प्राचीन है। इसमें खण्डित प्रतिमा है परन्तु ऊपरी भाग ठीक बना हुआ है। मन्दिर बड़ा ही दर्शनीय और नदीके पास एक शिलालेख है जो पुजारियोंकी कृपासे अब पढ़ा नहीं जाता। उस पर सेरों केसर चढ़ चुकी है। मन्दिरके पास ही गांव है जहां पर सब चीजें बिकती हैं। केसरियाजी पर चढ़ानेके लिये गांवमें सौ रुपया सेरके हिसाबसे भी दूध नहीं मिल सकता यदि दूध पानी मिश्रत न हो। पानी मिश्रित दूध किसीको चढ़ानेके लिये दिया नहीं जाता। मन्दिर पहाड़ोंके बीचमें है। चारों ओर पत्थरोंके ऊंचे ढेर दिखायी देते हैं।

मेवाड़में श्री एकलिंगेश्वर महादेवका मन्दिर बड़ा प्रसिद्ध है। यह उदयपुरसे छ सात मील उत्तरमें हैं। मन्दिरके चारों ओर पहाड़ है। कहा जाता है कि यहां पर हरीत ऋषिका आश्रम था। मन्दिरकी स्थापना शिशोदिया वंशके आदि पुरुष महाराणा वप्परावालने की। ऋषिके आश्रमका स्थान अब भी लोग दिखाया करते हैं। मन्दिरसे थोड़ी दूर पर बहुत बड़ा तालाब हैं जिसका नाम लम्बा चौड़ा पाट है और उसका पानी बड़ा ही अच्छा है। मन्दिरका घेरा बड़ा लम्बा चौड़ा है जिसमें बहुत सुन्दर फूल उत्पन्न होते हैं। घेरेके भीतर भी एक तालाब है और कई धर्मशालाएं हैं। दूर दूरके यात्री दर्शनके लिये आया करते हैं। मन्दिर छोटा होने पर भी बड़ा ही सुन्दर है। महादेवजीकी मूर्तिके सामने पीतलका नादिया है जो भीतरसे पोला है। महादेवजीकी मूर्ति बड़ी ही प्रभावोत्पादक है। ऐसी अच्छी मूर्ति भारतमें शायद ही कहीं पर हो। मन्दिरसे बाहर नंगी तलवारोंका पहरा रहता है। रणस्थल जानेके पूर्व राणा इस मन्दिरमें पूजा करने आते थे। महाराणा एक लिङ्गके दीवान कहलाते हैं। आज भी हर महीने महाराणा शिवजीकी पूजा करने जाया करते हैं।

मन्दिरमें बहुतसे शिलालेख हैं जिन्हें कोई पढ़ने नहीं देता। यदि वे पढ़े जायें तो बहुत सी नयी बातें मालूम हो सकती है। महाराणाकी ओरसे बहुतसा सदावर्त इस मन्दिरमें लगा हुआ है। मन्दिरके बाहर जो तालाब हैं उसकी चारों ओर हजारों बौद्ध और जैन मूर्तियां खण्डित हुई पड़ी हैं।

चित्तौड़ और उदयपुरके बीच जो स्टेट रेलवे लाईन है उसी पर एक स्टेशन हैं जो नाथद्वाराके नामसे प्रसिद्ध है। स्टेशनसे चार मील पर नाथद्वारा शहर बसा हुआ है। इसी शहरमें वल्लभ-

कुली वैष्णवोंका प्रख्यात मन्दिर है जो गोसांइयोंके अधीन है। गोसाईंजी बड़े सम्पन्न हैं और वे तमाम शहरके अधिपति हैं। शहर यद्यपि मेवाड़ राज्यके अन्तर्गत है परन्तु कानून और नियम सब गोसाईंजीके माने जाते हैं। गोसाईंजीके कई महल हैं। मन्दिर हजारों हैं। प्रधान मन्दिर तीन हैं, जिनमेंसे एक सर्वप्रधान है। इस नगरको यदि मन्दिरमय कहें तो कोई अत्युक्ति न होगी। व्यापार भी माला, कण्ठी, चन्दन फूल, मेवा, मिठाई तथा तीर्थ यात्रियोंकी अन्य आवश्यकीय वस्तुओंका ही होता है। नगर भरमें हिन्दुओंकी ही बस्ती है। दो चार गुजराती मुसलमान हैं जो आधेसे ज्यादा हिन्दू हैं। नगरमें एक वार घुस जाने पर गोसाईंजीकी लिखित आज्ञाके बिना शहरके बाहर कोई नहीं जा सकता। शहरमें गोसाईंजीके प्रबन्धसे बिजलीकी रोशनी है। मन्दिरके पुजारियों और अधिकारियोंको पनवाड़े मिलते हैं जो वे स्वयं नहीं खा सकते इसलिये उन्होंने मिष्ठान्नकी दुकानें खल रखी हैं। यात्रियोंकी कम या अधिक भीड़के अनुसार भर पेट मिठाई खानेका भाव भी घटता बढ़ता रहता है। मन्दे बाजारमें चार आनेमें एक व्यक्ति बढ़िया मिठाई खाकर पेट भर सकता है। मिठाई बहुत बढ़िया बनती है।

सर्वप्रधान मन्दिरके बाहर सैकड़ों मालिनें फूलकी टोकरियां लिये हुए बैठी रहती हैं। वे खुदरा विक्री उसी समय करती हैं जब कि उन्हें थोक ग्राहक नहीं मिलता। ऐसा मौका बहुत कम होता है। भक्त आकर दरवाजे पर खड़े हो जाते हैं और पचास साठ टोकरियां एकदम चढ़वा देते हैं। भक्तोंके शिर पर आधा टोपा और हाथमें गोमुखी रहती है। भक्त स्त्रियां हजारों की संख्यामें आकर वहां रहती हैं और गोसाईजी सबको श्रेणीके

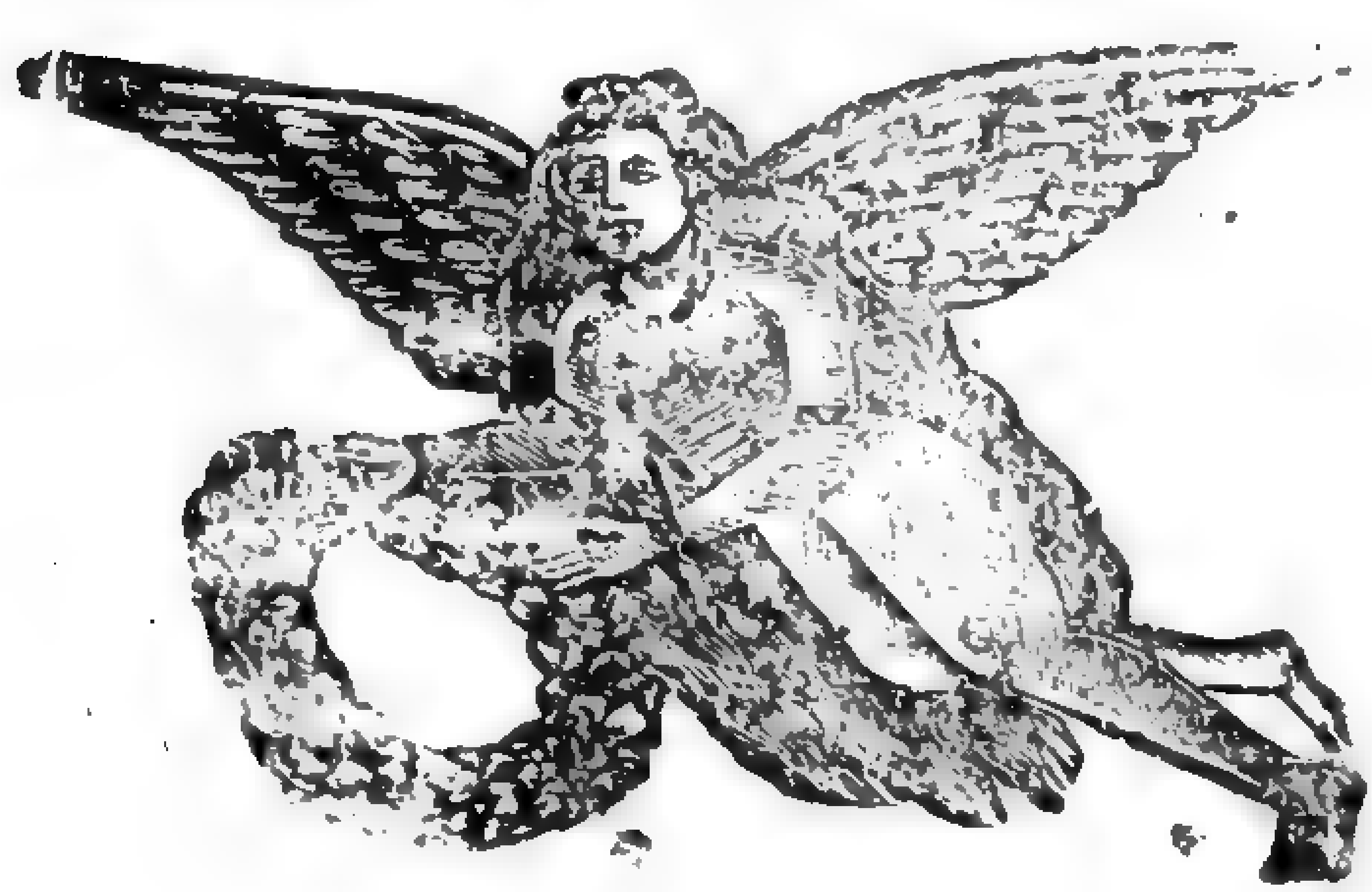
अनुसार स्थान दे देते हैं। स्त्रियां मन्दिरमें प्रसाद चढ़ानेके लिये पंक्तियां बांधकर बादाम फोड़ती, पिश्ता चुनती और अंगूरका साग बनाती हैं। सैकड़ों स्त्रियां प्रसाद तैयार करती हैं। बम्बई से फलोंकी हजारों टोकरियां आती हैं। स्टेशन पर फल और मेवाके ढेर लगे रहते हैं।

मन्दिरके पट समय पर खुलते हैं। पट खुलनेकी खबर सारे शहरमें फैल जाती है और बड़ी धूम मचती है। मन्दिरमें भीड़ पर कोड़े चलते हैं और कोड़ेवाले कोड़ा मार कर पैसा मांगा करते हैं। एक एक मन्दिरमें कई कोड़ेवाले होते हैं। गायन और नृत्यका समारोह रात दिन रहता है। गोसाईंजी मन्दिरमें केवल एक बार जाते हैं। उनके स्नानकी बोली बुला करती है। जो अधिक डाक चढ़ाता है वह स्नान करानेका भार लेता है। स्त्रियां भी स्नान कराती हैं। नालोंसे गुलाब जल केवड़ा और इत्र बहता है और लोग नीचे खड़े रह कर चरणोदक लेते हैं। चक्कियोंसे केशर पीसी जाती है तब वह तिलकोंके लिये काफी होती है। शामको गोसाईंजी हवा खाने निकलते हैं तब उनके दर्शन सब कोई कर सकता है।

महाराणा प्रतापने प्रतिज्ञा की थी कि देश जब तक स्वाधीन न हो हमारे वंशज पत्तोंमें खायेंगे, घास पर सोयेंगे और कुटियामें रहेंगे। उनकी इस प्रतिज्ञाकी रक्षाके लिये आज भी महाराणा अपने थालके नीचे पत्ते, बिछौनेके नीचे घास रखवा लेते हैं और शयनालयके सामने एक छप्पर लगा रहता है। महाराणा हिन्दू धर्मके पूर्ण अनुयायी हैं। वे अपने भाई-बेटोंके साथ पुरानी प्रथाके अनुसार थाल लगवा कर भोजन करते हैं।

जिन चारणोंने मेवाड़में सजीवता रखी थी आज उनका अभाव दिखायी देता है । उदयपुरमें महाराणाकी सच्चरित्रता की आज भी प्रशंसा है जो राजपूतानेके अन्य नरेशोंको प्राप्त नहीं । उनका मिजाज सीधा सादा है उनसे साधारण आदमी भी मिल सकता है । प्राचीन गौरवका स्मरण होने पर वे बड़े दुःखी होते हैं और कातरता प्रकट करने लग जाते हैं ।

मेवाड़के सरदार नयी सभ्यतामें लीन नहीं हुए । वे प्रजाके हितकी ओर ध्यान देते हैं और अपने राज्यके बाहर अन्न इत्यादि नहीं जाने देते ।



द्वितीय-परिच्छेद ।

वंश-परिचय ।

—:—

भारतके शासक क्षत्रिय पुराने जमानेसे दो वंशोंमें विभक्त हैं—सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी । दोनों वंशोंकी स्थापना एक ही साथ हुई थी । संसारके इतिहासमें इन दोनों वंशोंकी स्थापनाके पहले किसी राजवंशकी स्थापना नहीं हुई थी । सीरिया, चीन और मिश्रके राजवंश बड़े प्राचीन बताये जाते हैं परन्तु वे भी भारतके सूर्य-वंश और चन्द्रवंशके पहलेके नहीं । सूर्यवंशके आदि पुरुष मनु और चन्द्रवंशके आदि पुरुष बुध थे । पुराणोंमें इस बातका उल्लेख है कि दोनों वंशोंके बीच वैवाहिक सम्बन्ध था । सूर्यवंशमें प्रख्यात महाराज रामचन्द्रजी हुए । श्रीकृष्णचन्द्रजी युधिष्ठिर आदि चन्द्रवंशमें उत्पन्न हुए । मेवाड़के शासक सूर्यवंशी हैं । महाराज रामचन्द्र जी के दो पुत्र थे, जिनका नाम लव और कुश था । लवने लोह-कोटकी स्थापना की जो आजकल लाहौरके नामसे प्रसिद्ध है । इसी लोहकोटमें लवकी सन्तान बराबर शासन करती चली आयी । एक वंशज कनकसेनने लगभग सन् १४४ ई० में लोहकोट से सौराष्ट्र प्रस्थान किया । सौराष्ट्र वर्तमान काठियावाड़ है । सौराष्ट्र पहुंच कर उन्होंने विराटगढ़में अपनी राजधानी बनायी । यह विराटगढ़ वही है जहां पंच पांडवोंने द्रौपदी समेत एक वर्ष तक भेष बदल कर निवास किया था । इसके कई वर्ष बाद विजय-सेन नामक राजाने विजयपुर बसाया । विजयसेनने बल्लभीपुर भी

बसाया था, जहां पर उनके वंशके कई राजाओंने राज किया। यह कवियोंका कहना है कि बल्लभीपुरसे ही मेवाड़ राजवंश उत्पन्न हुआ। महाराज कनकसेनकी आठवीं पीढ़ीमें वल्लभीपुरमें शिलादित्य नामक राजा गद्दी पर बैठे। म्लेच्छोंने उनपर आक्रमण किया और राज्यको तहस नहस कर दिया। महाराज शिलादित्यके कई रानियां थीं। महारानी पुष्यवतीके सिवा और सब रानियां उनके साथ सती हो गयीं। पुष्यवती चन्द्रावती नामक स्थानके परमारोंके घरानेकी थीं। शिलादित्यकी मृत्युके पहले ही रानीके गर्भ रह गया था। म्लेच्छोंके आक्रमणसे पूर्व वे अपने पिताके घर चली गयी थीं। एक दिन वे किसी दूसरे गांवमें देवीकी पूजा करने गयी थीं। राहमें उन्होंने शिलादित्यकी मृत्युका समाचार सुना।

रानी सती होना चाहती थीं परन्तु गर्भवती होनेके कारण ऐसा न कर सकीं। रानीने अपने पिताके घर लौटना उचित न समझा और एक पहाड़की गुफामें रहने लगीं, जहां पर उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। गुफाके पास एक वीरनगर नामक एक गांव था जिसमें कमलावती नामक ब्राह्मणी रहती थी। रानीने उसको अपना पुत्र सौंप कर कहा कि तुम इसका लालन पालन करना और वह जब बड़ा हो जाये तो क्षत्रिय कन्यासे उसका विवाह कर देना। कमलावतीके कोई सन्तान न थी इसलिये उसने बच्चेको बड़े प्यारसे पाला। बच्चेका नाम गोह रखा गया क्योंकि वह गुफामें पैदा हुआ था। जब कुमारकी अवस्था बड़ी होने लगी तो वह बड़ी धूम मचाने लगा। वह भीलोंके साथ रह कर शिकार करता और जरा भी न डरता। जब वह ११ वर्षका हुआ तो मेवाड़के ईदर नामक स्थानके भील

राज मण्डलीकने उसे अपना सारा राज्य सौंप दिया क्योंकि भीलोंके बालकोंने खेलते हुए राजकुमारको अपना राजा चुन लिया था और राजा मण्डलीकके पुत्रने अपना अंगूठा काठ कर उसके माथे पर अपने रक्तसे तिलक कर दिया था। राजाने प्रसन्नता पूर्वक इस कार्यका समर्थन किया। गोहके वंशधर गहिलोतके नामसे पुकारे गये और गोहकी आठ पीढ़ियां भीलों पर बराबर शासन करती रहीं। भील अपनी बातके इतने पक्के निकले कि उन्होंने अपनी परमप्रिय स्वाधीनताकी कुछ परवा न की। आठवीं पीढ़ीमें राजा नागादित्य हुए। भीलों और नागादित्यके बीच कुछ मनमुटाव उत्पन्न हुआ। परिणाम यह हुआ कि भीलोंने उन्हें घेर कर एक दिन मार डाला जब कि वे एक हिरणका शिकार खेलनेके लिये जङ्गलमें निकले हुए थे। नागादित्यके तीन वर्षका एक लड़का था जो बप्पाके नामसे पुकारा जाता था। मन्त्रियोंको इस बालककी रक्षा की बड़ी चिन्ता हुई। बालक उपरोक्त कमलावती ब्राह्मणीके वंशधरोंको सौंप दिया गया जो गहिलोतोंके कुल पुरोहित बन गये थे। वह नागदानगरमें रखा गया जिसमें शिव उपासक ब्राह्मण अधिक रहते थे और जिसकी चारों ओर बड़ा घना जङ्गल था। पहाड़ी भील भी महादेवकी पूजा किया करते थे।

जब बालक बप्पाकी उम्र अधिक हुई तो वे जङ्गलमें जाकर गायें चराने लगे। सूर्यवंशी महाराज शिलादित्यके वंशधर आज ब्राह्मणोंकी गायें चरा रहे हैं! कौन कह सकता था कि इन्हीं गहिलोत कुल तिलक महाराज बपाके वंशधर राजपूतोंकी जीवन कहानी इतिहासमें प्रधान स्थान ग्रहण करेगी। मेवाड़में बप्पाके विषयमें चारणों और भाटोंने अनेक प्रकारकी अपूर्व

बातें लिख रखी हैं। कहा जाता है कि नागदानगरमें उस समय सोलंकी वंशीय कोई राजा राज्य किया करता था। जब बप्पा गौ चरानेके लिये जाया करते थे तो सावनके महीनेमें देखा करते थे कि बहुतसी बालिकायें जङ्गलमें भूलनोत्सव मनानेके लिये आया करती हैं। बप्पाका भी दिल इनके साथ खेलनेको चाहता था। एक दिन बप्पा उस ओर जा निकले जहां पर बालिकाओं की भुण्ड भूलनेकी तय्यारीमें लगा हुआ था। दैवयोगसे उस दिन बालिकाएं भूलनेके लिये लेनेके लिये घर जाना पड़ा तो खेलका समय न रहेगा। बप्पा एक जगह अपने कुछ साथियों समेत गौएं चरा रहे थे। कुछ बालिकाए उनके पास गयीं और बोलीं कि हमारे लिये रस्सीका प्रबन्ध कर दो। बप्पाने उन्हें कृतज्ञ बनानेका अच्छा अवसर देखा। रस्सियोंकी कुछ कमी थी ही नहीं। बहुतसी गौओंके गलेमें रस्सियां पड़ी हुई थीं। बप्पाने कहा कि तुम मेरे साथ खेलो तो जितनी रस्सिया मांगो उतनी ही दूंगा। बालिकाएं सब राजी हो गयीं विवाह खेल आरम्भ किया गया। बालिकाओंमें सोलंकी राजकुमारी भी थी। उसके वस्त्रका सिरा बप्पाके वस्त्रसे बांधा गया और सब लड़कियोंने मिल कर उन दोनोंके साथ एक आमके पेड़की परिक्रमा की। संयोगवश परिक्रमाएं उतनी हुईं जितनी कि वर वधूके विवाहके लिये यथेष्ट होती हैं। उस दिन इस बातकी किसीके मनमें कल्पना भी न थी कि आज खेलमें जो विवाह हो रहा है वह एक दिन सच्चा ही मान लिया जायेगा। इस विवाह खेलके कारण ही बप्पाका भाग चमक गया।

बालिकाएं राजकुमारीके साथ अपना खेल पूरा कर घर चली गयीं। एक दिन जब राजकुमारीके विवाहका प्रस्ताव

उठा तो एक ज्योतिषीकी यह बात सुन कर सबको आश्चर्यमें पड़ जाना पड़ा कि राजकुमारीका तो विवाह हो चुका है। राजाके क्रोधकी सीमा न रही। चारों ओर तलाशी होने लगी कि राजकुमारीके साथ किसने विवाह किया है। विवाह-खेलकी बात तो कई बालिकाओंको मालूम ही थी। सब भेद खुल गया। बप्पाने अपने ऊपर राजक्रोध उपस्थित देख भाग जाना ही उचित समझा। वे अपने साथ बाली और देव नामक दो भीलोंको लेकर पहाड़ोंमें भाग गये। उन्होंने अपने साथियोंसे प्रतिज्ञा करायी कि अन्त तक विपत्तिमें हम तुम्हारा साथ देंगे।

उन दिनों चित्तौडमें परमार वंशकी शाखा मौर्य वंशके एक राजा राज्य करते थे जिनका नाम मान था। बप्पाकी माता परमार वंशीय थीं इसलिये राजा मान बप्पाके मामा थे। बप्पा अपने साथियों समेत राजाके पास चले आये। महाराज मानने उन्हें अपना सामन्त बना कर उनके निर्वाहके लिये कुछ भूमि दे दी। महाराजके पुराने सामन्त इस कार्यसे बड़े असन्तुष्ट हुए। उसी समय एक मुसलमान आक्रमणकारीने चित्तौड़ पर धावा किया। यह बात प्रायः निश्चित हो चुकी है कि आक्रमणकारी मुहम्मद बिनकासिम था, जिसने सन् ७१३ ई० में सिन्ध पार कर चढ़ाई की थी। आक्रमणके समय जब सहायताके लिये सब सामन्त बुलाये गये तो उन्होंने ताना मार कर कहा कि आप अपने भानजेसे सहायता लीजिये। सबने अपने पासकी भूमि भी त्याग दी। बप्पा जरा भी हतोत्साह न हुए और अकेले सामना करनेको तैयार हो गये। सामन्तोंने भूमि तो त्याग दी परन्तु लज्जावश उन्होंने चित्तौड़की रक्षा करनी उचित समझी। सामन्त आक्रमणकारीका सामना करने गये और बप्पाके साथ लड़े।

शत्रु मार भगाया गया । बप्पा वीरता दिखा कर चित्तौड़ वापस न लौटे । रणविजयोन्मत्त वीरने अपनी विजयी सेना खुरासान की ओर बढ़ायी । उस समय गजनीमें सलीम नामक एक मुसलमानका शासन था । बप्पाकी सेना आती देख वह घबराया । बप्पाने उस पर विजय प्राप्त की और उसकी लड़कीसे विवाह कर लिया । वहांसे बहुतसे खुराशानी सैनिक लेकर वे चित्तौड़ लौटे । इधर चित्तौड़के सामन्तोंने असन्तुष्ट होकर महाराज मानके विरुद्ध शिर उठाया । उन्होंने वीरशिरोमणि बप्पाको अपना सेनापति बना कर चित्तौड़ पर आक्रमण किया; और महाराज मानको गद्दीसे उतार कर बप्पाका राजतिलक किया । महाराज बप्पाका सोलंकी राजकुमारीके साथ अन्तमें विवाह हो गया और सब बालिकायें भी उन्हींसे व्याही गयीं ।

मेवाड़ वालोंने बप्पाको 'हिन्दू सूर्य' 'राजगुरु' और 'सार्वभौम' की उपाधियां प्रदान कीं । चित्तौड़की गद्दी पा जानेके बाद महाराज बप्पाने खुरासान आदि देशों पर आक्रमण किया और बहुतसी नयी स्त्रियोंसे विवाह किया । उनके कुल २२८ पुत्र हुए । जिस समय उनकी मृत्यु हुई पुत्रोंमें इस बातका विवाद हुआ कि उनको लाश जलायी जाये या जमीनमें गाड़ दी जाये । परन्तु अन्तमें देखा गया कि लाशका कुछ पता ही नहीं । कपड़ेके नीचे कमलके फूल पड़े हैं !

बप्पाकी मृत्युके बाद जो कोई राणा हुए उनका विशेष वर्णन नहीं पाया जाता । 'खोमान रासा' में महाराणा खोमानकी वीरताका वर्णन है । खोमान सन् ८१२ ई० में चित्तौड़की गद्दी पर बैठे । उनके शासनकालमें हेरूनुल रशीदके पुत्र मामूनने चित्तौड़ पर चढ़ाई की । महाराणा खोमानने २८ बड़े बड़े सर-

दारोंके साथ उनका बड़ो दिलेरीके साथ सामना करना निश्चित किया। मुसलमानोंको कर देना स्वीकार न कर वे मातृभूमिकी रक्षाके लिये रणस्थलमें कूद पड़े। क्षत्रियोंने ऐसी वीरता दिखायी कि मुसलमानोंको हार मान भाग जाना पड़ा। विजयी खोमानने मुसलमान सेनापतिको गिरफ्तार कर लिया और उसे जीवित चित्तौड़ ले आये। इसके बाद २० वर्ष तक चित्तौड पर कोई मुसलमानी आक्रमण न हुआ। चित्तौड़की स्वतन्त्रता बनाये रखनेके लिये महाराणा खोमानने चौबीस वार युद्ध किया। महाराणाके पुत्र मङ्गलसिंह अपने पिताको हत्या कर गद्दी पर बैठे, परन्तु वे इतना बडा पाप कर बहुत दिन राजसुख न भोग सके। सरदारोंने उन्हें शीघ्र ही गद्दोसे उतार दिया। महाराणा खोमान के दूसरे पुत्र भर्तृभाट गद्दी पर बैठाये गये। इनके बाद पन्द्रह पीढ़ी तक जो मेवाड़ शासक हुए उनका विशेष वर्णन नहीं मिलता। केवल इतना पता लगता है कि अजमेरके चौहानोंके साथ मेवाड़ वालोंकी कई बार प्रीति और विवाहके सम्बन्ध हुआ और कभी कभी दोनों रणभूमिमें एक दूसरेका सामना करनेके लिमे उतरे।

तृतीय-परिच्छेद ।

समरसिंह ।

—:—

१२ वीं शताब्दीमें चित्तौड़की गद्दी पर महाराणा समरसिंह बैठे जिनके जीवनकी घटनाएं विशेष रूपसे उल्लेखनीय हैं। जिस समय वे गद्दीपर बैठे उस समय भारतमें अनेक छोटे छोटे राज्य बन चुके थे, परन्तु दिल्लीकी गद्दी प्रधान मानी जाती थी। कुंवर वंशी महाराज अनङ्गपाल भारतके अन्तिम हिन्दू सम्राट दिल्लीके राजसिंहासन पर विराजमान होकर चल बसे थे। उनके कोई पुत्र न था, इस लिये इस बातकी बड़ी चिन्ता हुई कि उनका उत्तराधिकारी कौन हो। महाराजने अपनी दोनों कन्याओंका विवाह अपनी जीवित अवस्थामें ही कर दिया था। बड़ी राजकुमारीका विवाह कन्नौजके राठौर नरेशके साथ और छोटीका अजमेरके चौहान वंशमें किया गया। बड़ीसे जयचन्द और छोटीसे पृथ्वीराज उत्पन्न हुए। महाराज अनङ्गपालने जयचन्द को अपने राज्यका कुछ अंश और पृथ्वीराजके गुणोंसे मोहित होकर उन्हें दिल्लीकी गद्दीका उत्तराधिकारी बनाया। जयचन्द बड़ी राजकुमारीका पुत्र था और अवस्थामें भी बड़ा था, इस लिये उसे आशा थी कि दिल्लीका राजसिंहासन मुझे ही मिलेगा और इस तरह सारे भारतके शासनकी बागडोर मेरे हाथ आ जायेगी परन्तु जब उसकी सभी आशाओं पर पानी फिर गया तो वह पृथ्वीराजके प्रति ईर्ष्या दिखाने लग गया। जब पृथ्वीराज राज-

सिंहासन पर बैठे तो अन्य सब राजाओंने तो उनका सार्वभौमित्व स्वीकार कर लिया, परन्तु जयचन्द तथा उसके सहायकोंने उसे स्वीकार न किया। एक बार जयचन्दके कहनेमें आकर मन्दोरके नरेशने पृथ्वीराजके पास अपनी कन्याका विवाह करनेके लिये नारियल भेजा। जब पृथ्वीराजने उसे स्वीकार कर लिया तो मन्दोर नरेशने अपनी राजकुमारीका विवाह उनके साथ करना अस्वीकार किया। यह अपमान हिन्दू कुलपति महाराज पृथ्वीराजको असह्य हो गया। उन्होंने मन्दोर राज्यको बड़ी भारी सेना भेजी। इधर जयचन्दने पृथ्वीराजकी सेनाके बहुतसे लोगों-को अपनी ओर मिलानेका प्रयत्न किया। आपसकी इस फूट से लाभ उठानेके लिये गजनीके शहाबुद्दीन गोरीने दिल्ली पर चढ़ाई कर दी।

चित्तौड़ाधिपति महाराणा समरसिंहको पृथ्वीराजकी बहन पृथा ब्याही हुई थी। जब दिल्लीश्वर पर आपत्ति आयी तो उन्होंने सहायताके लिये लाहौरके राना चण्डपुण्डीरको दूत बना कर चित्तौड़ भेजा। महाराणाने सहर्ष यह निमन्त्रण स्वीकार किया। वे सेना लेकर दिल्लीके लिये रवाना हो गये। दिल्लीमें यह बात तय हुई कि मुसल्मान आक्रमणकारीका सामना करनेके साथ ही साथ पट्टनके राजाको भी दबाना होगा। इस लिये महाराज पृथ्वीराज पट्टनकी ओर रवाना हुए और महाराणा समरसिंहने मुसल्मानोंका सामना करना अङ्गीकार किया। महा-राणाकी अधीनतामें दिल्लीकी सारी सेना कर दी गयी थी। उन्होंने बड़ी वीरतासे मुसल्मानोंका सामना किया और शहाबुद्दीनको गिरफ्तार कर लिया। इधर महाराज पृथ्वीराज पट्टन नरेशको हरा कर उनसे आ मिले थे। कविवर चन्दने अपने 'रासो' में इस घटना

का उल्लेख बड़े उत्तम ढङ्गसे किया है। उनका कहना है कि जब शहाबुद्दीन पकड़ कर दिल्लीपतिके सामने लाया गया तो उसने मुंहमें तिनका दबाकर महाराजसे कहा कि मैं आपकी गाय हूं। मेरा जीवन मरण आपके हाथ है। गायका नाम सुनते ही महाराणा समरसिंहका हृदय द्रवीभूत हो गया और उनकी सिफारिशसे शहाबुद्दीन छोड़ दिया गया। दिल्लीमें जो विजयोत्सव मनाया गया उसमें महाराणा उपस्थित रहे। जब वे दिल्लीसे प्रस्थान करने लगे तो महाराज पृथ्वीराजने नगरकोटकी जमीनमें मिले हुए बड़े भारी खजानेका आधा भाग विदाईमें उन्हें दिया। महाराणाने वह सारा द्रव्य अपनी सेनाके बीच बटवा दिया।

महाराज पृथ्वीराजने एक राजसूय यज्ञ करनेका विचार किया। देश देशान्तरोंमें खबर भेजी गयी। जयचन्द इस खबरको सुनकर चौंक पड़ा। उसने विचार किया कि पृथ्वीराजका विचार पूर्ण होनेके पहले ही स्वयं कुछ कर डालना चाहिये। जयचन्दके एक परम रूपवती कन्या थी, जिसका नाम संयुक्ता था। जयचन्दने उसके विवाहके लिये स्वयंबर रचा। देश विदेशोंके राजाओंके पास पत्र भेजे गये। यह केवल स्वयम्बर ही न था, बल्कि उसके अन्दर राजसूय यज्ञकी भावना भी छिपी हुई थी। भट्ट कवियोंने उस समयकी कन्नौजकी तैयारीका बड़ा अपूर्व वर्णन किया है। अस्तु, सबको निमन्त्रण दिया गया, परन्तु दिल्लीपतिके पास निमन्त्रण न गया और न महाराणा समरसिंहको ही बुलाया गया। राजकुमारी संयुक्ता पहलेसे ही पृथ्वीराजके गुणोंपर मुग्ध थी। शहाबुद्दीनका सामना करनेमें उन्होंने जो वीरता दिखायी थी, उसके कारण राजकुमारीका स्नेह उनपर और भी अधिक हो गया था।

राजकुमारीने अपने प्रेमकी सूचना पृथ्वीराज तक पहुंचा दी थी और उन्होंने भी अपना कर्तव्य निश्चत कर लिया था। इधर कन्नौजमें जब स्वयम्बर-मण्डप तैयार हो गया और विभिन्न देश के राजाओंके लिये स्थान निर्दिष्ट कर दिये गये तो महाराज पृथ्वी-राजकी मूर्ति दरवाजे पर द्वारपालके स्थान पर उनका अपमान करनेके लिये बैठायी गयी। महाराज पृथ्वीराज पहलेसे ही तैयार थे। जब राजकुमारीने चारों ओर घूम कर पृथ्वीराजकी मूर्तिके गलेमें माला डाली, तो सारे मण्डपमें खलबली मच गयी। कहा जाता है कि महाराज पृथ्वीराज कन्नौज पहुंच कर मण्डपके पास किसी स्थानमें छिपे हुए थे। अपनी प्रतिमाके गलेमें माला गिरते देख वे सहसा सामने आये और राजकुमारीको अपने घोड़े पर बैठा कर तुरन्त ही दिल्लीको रवाना हो गये। जयचन्दकी सेनाने उनका पीछा किया। पृथ्वीराज अपने साथ जो वीर लाये थे, उन्होंने जयचन्दके आदमियोंको राहमें अटकाये रखा और महा-राज पृथ्वीराज सकुशल दिल्ली पहुंच गये।

इस घटनासे जयचन्दके क्षुद्र हृदयमें विद्वेषकी ज्वाला और भी जोरोंसे भभक उठी। अबकी बार उसने शहाबुद्दीन गोरीको फिर भारत पर आक्रमण करनेके लिये बुला भेजा और अपनी ओरसे सहायताका वचन दिया। शहाबुद्दीन बड़े दलबलके साथ कुरुक्षेत्र के मैदानमें आ डटा। दिल्लीश्वरने इस विपत्तिमें फिर महाराणा समरसिंहका स्मरण किया। महाराणा इस समय अपना जीवन राज्यकार्योंके किसी विशेष झंझटोंमें न बिता कर धर्मकार्यमें ही लगे हुए थे। आज पर्यन्त भी मेवाड़में वे योगीश्वरके नामसे पुकारे जाते हैं। मेवाड़के चारणोंका कहना है कि महाराणा समरसिंह हाथमें माला लेकर मृग-चर्मपर बैठ कर ही राज्यशासन करते थे।

जिस समय पृथ्वीराजका निमन्त्रण उन्हें मिला तो महाराणी पृथाने कई बार उनसे कहा कि जब आप सब कार्योंसे विरक्त हो चुके हैं, तो फिर युद्धमें भाग लेने क्यों जाते हैं ? महाराणाने इसके उत्तर में कहा कि यह आक्रमण मुझ पर नहीं सारे देश पर है। स्वदेशानुराग और स्वतन्त्रताके मोहिनी मन्त्रने महाराणाके हाथसे माला रखवाकर फिर उन्हें खड्ग धारण करनेके लिये वाध्य किया। महाराणा अपने सामन्त और इष्ट मित्रोंको साथ लेकर बड़ी भारी सेनाके साथ दिल्लीके लिये रवाना हुए, परन्तु अबकी बार चित्तौड़ छोड़ते हुए न जाने उनका हृदय क्यों कांपा। उन्हें ऐसा मालूम हुआ कि कोई कानमें कह रहा है कि अबकी बार चित्तौड़को हृदय भर कर देख लो ! कई प्रकारके अशकुन भी हुए। महाराणा समरसिंहने इन सब कारणोंसे राज्य शासनका भार अपने छोटे पुत्र कर्णसिंहके हाथमें दे दिया। महाराणीने अपने पतिको अकेला न भेजा। वे स्वयं भी उनके साथ हो गयीं। दिल्लीमें महाराजके स्वागतके लिये बड़ी धूम रही। महाराज पृथ्वीराज कविवर चन्दके साथ कई कोस चल कर उन्हें लेनेको पहुंचे। कहा जाता है कि संयुक्ताके विवाहके पश्चात् महाराज महलोंसे बहुत कम बाहर निकलते थे। अपने हृदयसम्राट्के दर्शन कर दिल्लीकी जनताने बड़ा आनन्द मनाया। जब महाराणाने प्रश्न किया कि शत्रुको नीचा दिखानेका क्या उपाय सोचा गया है, तो उन्हें यह उत्तर सुनकर बड़ा दुःख हुआ कि अब तक कोई उपाय नहीं हुआ है। तब दिल्लीश्वरकी सेना एकत्र कर महाराणा स्वयं सेनापति बने।

कुरुक्षेत्रके मैदानमें घग्गर नदीके किनारे महासमर आरम्भ हुआ, जो तीन दिन तक बड़ा भयानक स्वरूप धारण किये रहा

पहले दिन तो किसीकी जय न हुई, परन्तु तीसरे दिन भारतके भाग्याकाशमें घोर काली घटाएं दिखाई देने लगीं। एक दिन शाहबुद्दीनको भारतसे भगानेके लिये सारे देशके हिन्दू राजा एकत्र हुए थे, परन्तु इस बार शहाबुद्दीनका पक्ष लेकर भारतके पैरोंमें दासत्वकी बेड़ियां पहनानेके लिये कुलकलङ्की जयचन्द और उसके सहायक मित्रोंने अपने कलुषित हृदयका परिचय दिया। जिस दिन जयचन्दके क्षुद्र हृदयमें द्वेषाग्नि प्रज्वलित हुई थी, उसी दिन निश्चय हो चुका था कि यह अग्नि भारतीय स्वतन्त्रताको भस्म कर देगी। कुरुक्षेत्रके युद्धके तीसरे दिन जो प्रातःकाल हुआ वह भारतके गौरवपूर्ण समयकी अन्तिम घड़ी थी। जिस समय महाराणा समरसिंह ईश्वरोपासना कर रहे थे, मुसलमानोंने हिन्दू सेना पर आक्रमण किया। भयानक युद्ध प्रारम्भ हो गया। महाराणा समरसिंह २३ हजार राजपूत सेना तैयार कर सके। इतनी अल्प सेनाके साथ ही हिन्दू कुल तिलक महाराणाने मातृ-भूमिकी स्वतन्त्रताके लिये दिल खोलकर अपनी वीरता दिखायी। अन्तमें मुसल्मानोंकी बढ़ी हुई सेनाके सामने उनके पैर न जमे और वे रणक्षेत्रमें अपने पुत्र समेत काम आये। इधर मुसल्मानों ने महाराज पृथ्वीराजको भी बन्दी कर लिया। पृथ्वीराजके पुत्र रणसिंह भी मारे गये। चौहान कुलका प्रदीप बुझ गया, महा-राज युधिष्ठिरकी लीलाभूमि श्मशान बन गयी। महाराणी पृथा और महाराणी संयुक्ताने चितामें भस्म होकर क्षत्रिय धर्मका पालन किया।

विश्वासघाती शहाबुद्दीन दिल्लीकी विजयसे उन्मत्त होकर अपने कर्त्तव्यको भूल गया और कन्नौजके राजा जयचन्द पर उसने चढ़ाई कर दी। जयचन्द जरा भी तैयार न था। वह

शहाबुद्दीनके भयसे एक नावमें सवार होकर भागा। नाव पानीमें डूब गयी और कलङ्की जयचन्द पानीमें डूब गया ! यद्यपि उसकी आकिर्ति सदाके लिये अमर हो गयी। कविवर चन्द देवीके मन्दिरमें बैठे हुए 'रासो' लिख रहे थे। उन्होंने स्वयं इस बातका उल्लेख किया है कि पृथ्वीराजकी दोनों आंखें फोड़ दी गयीं और उन्हें लोहेकी जञ्जीरें पहना कर शहाबुद्दीनने गजनीके जेलखाने को रवाना कर दिया। एक दिन था जब कि शहाबुद्दीनने महाराज पृथ्वीराजके सामने गौ बन कर प्राण-भिक्षा मांगी थी, परन्तु विजयी होने पर वह उस कृपाको भूल गया और महाराज के साथ उसने ऐसा नीचतापूर्ण वर्ताव किया।

कुछ दिनों बाद कविवर चन्दने विचारा कि गजनीके जेलसे महाराज पृथ्वीराजका उद्धार करना चाहिये। इसलिये वे गजनी पहुंचे। बड़ी कठिनाईसे उन्हें महाराजसे मिलनेकी आज्ञा मिली। जब जेलखानेमें महाराज पृथ्वीराजने चन्दके आनेकी खबर पायी तो वे हर्षमें इतने उत्तेजित हो गये कि लोहेकी भारी जञ्जीरों समेत खड़े हो गये। जब बादशाहको यह बात मालूम हुई तो उसने हुक्म दिया कि सौ मनकी लोहेकी सांकल उनके गलेमें और डाल दी जाये। जब कविवरने देखा कि मेरे कारण महाराजका दुःख और भी बढ़ गया तो वे बड़े दुःखी हुए। उन्होंने बादशाहसे जाकर कहा कि महाराज पृथ्वीराजकी आंखें चली गयी हैं। उन्हें विशेष कष्ट देना उचित नहीं। आपको उचित था कि उनके बहुतसे गुण देखते। शहाबुद्दीनको यह बात जच गयी और महाराज पृथ्वीराज द्वारा शब्द-वेध किया जाना निश्चित हुआ। बड़े मोटे मोटे सात तवे बनवाये गये और दीवालमें जड़वा दिये गये। महाराज पृथ्वीराज दरबारमें लाये

गये। उनके हाथमें कई बार तीर कमान दिया गया, परन्तु वे सब टूट गये। अन्तमें उनका निजका धनुष बाण दिया गया। बादशाह शहाबुद्दीन ऊपर एक खिड़ी पर बैठे। चन्दने उनसे कहा कि आप 'शाबास' बोल कर महाराज पृथ्वीराजको उत्साह दिलाइयेगा, जब कि मैं अपनी कविता सुना चुकूं। कविने अपनी कविता पढ़ी जो इस प्रकार थी—

इही बाण चहुआन, राम रावण उत्थर्‌यो।
इही बाण चहुआन, कर्णशिर अर्जुन कट्यो॥
इही बाण चहुआन, शंभु त्रिरपुरासुर संध्यो।
इही बाण चहुआन, भ्रमर लच्छमन कर बेध्यो॥
सो बाण आज तो कर चढ्यो, चढ़े विरद सांचो चवे।
चहुआन राजसंभर धनी, मत चूके मोटे तवे॥

दोहा—चार वंस चौबीस गज, अंगुल अष्ट प्रमान।
मार मार मोटे तवे, मत चूके चहुंआन॥

इस कविताका गूढ़ अर्थ महाराज पृथ्वीराज समझ गये। कविता समाप्त होते ही ज्योंही बादशाहने खिड़कीसे अपना शिर 'शाबास' करनेके लिये निकाला, त्योंही महाराज पृथ्वीराजने १०० मनकी लोहेकी जञ्जीर लादे हुए इस ढङ्गसे निशाना मारा कि वह सातों तवोंको वेधता हुआ बादशाहके शिरमें जा लगा और बादशाहका शिर धड़से अलग होकर दूर जा पड़ा! चारों ओर कोलाहल मच गया। मुसलमानोंके हाथसे मरनेमें अपनी सद्‌गति न देखकर चन्दने महाराज पृथ्वीराजका मस्तक खड्‌गसे उड़ा दिया और महाराजके खड्‌गसे चन्दका मस्तक कट कर पृथ्वी पर गिर पड़ा। इस प्रकार भारतके दो रत्न एक ही साथ वीरगति को प्राप्त हुए और पहले समयकी की हुई दोनोंकी यह प्रतिज्ञा

भी पूर्ण हुई कि दोनों एक ही साथ मरेंगे। महाराज पृथ्वीराज के भक्तने जेलकी दारुण अवस्थासे अपने स्वामीका उद्धार किया।

महाराणा समरसिंह दिल्ली जानेके पूर्व यद्यपि राजकुमार करणसिंहको राजतिलक कर गये थे, परन्तु उनकी अवस्था छोटी होनेके कारण वे राज्य शासन न करते थे। उनकी माता कर्णदेवी सारा शासन कार्य किया करती थीं। चित्तौड़की गद्दी पर एक बालकको बैठा देख कर दिल्लीके मुसलमान शासक कुतुबुद्दीन ऐबकने मेवाड़की पवित्र भूमि पर आक्रमण कर दिया। महारानी कर्णदेवीने इस आक्रमणको उपस्थित देख स्वयं रणस्थलमें जानेका विचार किया। सारे चित्तौड़में रणडङ्का पिटवाया गया। चित्तौड़की विपत्तिके समय सभी सामन्त अपनी अपनी फौजें सजा कर लाये। वीर माता कर्णदेवीने स्वयं लोहेका बख्तर पहना। जिन हाथोंमें सदा सोने और जवाहरातोंके कङ्कण पहने जाते थे, आज उन्हीं हाथोंमें देशकी स्वाधीनताके लिये लोहेके अस्त्र सुशोभित दिखायी देने लगे। महाराणीने साक्षात रणचण्डीका वेष धारण कर स्वयं सेनाकी हिरौल (अगवानी) ग्रहण की। अम्बरके निकट जहां कुतुबुद्दीन छावनी डाले पड़ा हुआ था, महाराणीकी वीर सेनाने आक्रमण किया। भयानक संग्राम प्रारम्भ हो गया। क्षत्राणीके प्रचण्ड तेजके सामने भला कौन ठहर सकता है। कुतुबुद्दीनकी सारी सेना मारी गयी। जो थोड़ेसे सैनिक बचे उन्होंने भाग कर अपनी जान बचायी। नवाब कुतुबुद्दीन भी बड़ी कठिनाईसे अपनी जान बचा कर भागा। मेवाड़के चारण आज पर्यन्त भी इस युद्धका वर्णन बड़े सुन्दर कवित्तोंमें बना कर गाया करते हैं। महाराणी कर्ण-

देवीने चित्तौड़का शासन बड़ी बुद्धिमानीसे किया। सामन्तोंका परस्परका विरोध और ईर्षा उन्होंने मिटा दी। सन् ११९३ ई० में राजकुमार कर्णने शासनका भार अपने हाथमें लिया। थोड़े ही दिनों बाद महाराणा कर्ण स्वर्ग सिधार गये। उनके पुत्र राहुक सन् १२०१ में गद्दी पर बैठे। इनके समयमें यवन सेनापति शमशुद्दीनने चित्तौड़ पर चढ़ाई की। वह चित्तौड़ तक पहुंचने भी न पाया था कि नगरकोटके मैदानमें घेर लिया गया। उसकी सारी सेना महाराणा राहुकने काट डाली। शमशुद्दीनका कहीं पता तक न चला। महाराणाने इस विजयोपलक्षमें शिशोद नामक गांव बसाया। तभीसे मेवाड़के महाराणा शिशोदिया कहलाये। महाराणा राहुकने ३८ वर्ष तक राज कर स्वर्गयात्रा की। इनके नौ पीढ़ी पीछे तक कोई विशेष उल्लेखनीय बात मेवाड़के भट्ट ग्रन्थोंमें नहीं पायी जाती। कई बार विधर्मियोंके त्राससे काशी, गया आदि हिन्दूतीर्थोंका उद्धार करनेके लिये चित्तौड़के महाराणाओंको खड्ग धारण करनी पड़ी। कई महाराणाओंने हिन्दू धर्मकी रक्षामें अपने प्राण गंवाये।

चतुर्थ-परिच्छेद ।

लक्ष्मणसिंह और पद्मिनी ।

—:—

सन् १२७५ ई० में क्षत्रियकुल चूड़ामणि वीरकेसरी महाराणा लक्ष्मणसिंह चित्तौड़की गद्दी पर बैठे। जिस समय आपका अभिषेक चित्तौड़के परम पवित्र राजसिंहासन पर हुआ, उस समय आपकी अवस्था कुछ कम थी, इसलिये गद्दी पर पूर्ण अधिकार होने पर भी आपके चाचा राणा भीमसिंह राज्यकी देख-रेख किया करते थे। सिंहलनिवासी चौहान कुलोद्भूत हमीरशंखकी परम रुपावती कन्या पद्मिनीदेवीके साथ राणा भीमसिंहका विवाह हुआ था। रानी पद्मिनीकी सुन्दरता देश विदेशोंमें इतनी विख्यात थी कि वही सुन्दरता मेवाड़के गौरवको भस्म करनेके लिये अग्निके समान हो गयी। जब पद्मिनीजीके सौन्दर्यकी बात दिल्लीके अधिपति अलाउद्दीन खिलजीने सुनी तो वह उन्हें पानेके लिये विकल हो उठा। वह रातदिन इसी चिन्तामें रहने लगा कि पद्मिनी किस तरह दिल्लीके महलोंमें लायी जायें। अन्तमें उसने अपनी सेना सजा कर इस वीर हिन्दू रमणीको पानेके लिये चित्तौड़ पर चढ़ाई कर दी। अलाउद्दीनको कई दिन तक चित्तौड़के चारों ओर घेरा डाल कर पड़े रहना पड़ा। पद्मिनीजीको प्राप्त करनेके लिये उसने पूर्ण चेष्टा की, परन्तु जब कोई परिणाम न निकला तो अलाउद्दीनने ढिंढोरा पिटवा दिया कि पद्मिनीको पाते ही मैं चित्तौड़ त्याग कर जानेको तैयार हूं।

इस समाचारको पाते ही स्वाभिमानी क्षत्रिय वीर क्रोधसे उन्मत्त हो उठे। कई दिनों तक जब ढिंढोरेका कोई परिणाम न हुआ, तो अलाउद्दीनने भीमसिंहजीके पास दूत भेज कर कहलाया कि एक जरासी बातके लिये इतने मनुष्योंकी हत्या दोनों ओर होनी उचित नहीं। मैंने राणीजीके रूपलावण्यकी प्रशंसा सुनी है। यदि मुझे किसी तरह वे एक बार दिखा दी जायें, तो मैं वापस लौट जानेको तैयार हूं। राणा भीमसिंहने यह समझ कर कि वृथा युद्धसे क्या लाभ है, तथा लक्ष्मणसिंहके राज्यशासन ग्रहण करनेके पूर्व कोई युद्ध न हो तो अच्छा है, यह बात सोच कर महाराणाजीके प्रतिवाद करने पर भी अलाउद्दीनका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। महाराणा लक्ष्मणसिंहके महलके एक कमरेमें एक शीशा लगाया गया और इसी स्थान पर अलाउद्दीन के स्वागतकी सारी तैयारी की गयी। अलाउद्दीन भी यह बात अच्छी तरह जानता था कि राजपूत विश्वासघाती नहीं होते। एक बार जिस बातको कह देंगे, उसे वे अवश्य पूरा करेंगे। इसी धारणाके बलपर उसे शत्रु-नगरीमें कुछ थोड़ेसे सैनिक लेकर प्रवेश करनेका साहस हो सका। जिस अलाउद्दीनने पवित्र शिशोदिया कुलमें कलङ्क लगाना चाहा था, जिसके घृणित प्रस्ताव के सुन कर शिशोदिया जातिका रक्त उबल उठा था, वही शत्रु अतिथि होनेके कारण राजमहलमें बिना विरोध प्रवेश कर सका। भीमसिंहने उसका पूर्ण सत्कार किया। अलाउद्दीनने भी बहुतसी मीठी बातें बनायीं, अपराधोंके लिये क्षमा मांगी। दर्पणमें पद्मिनीजीकी प्रतिमूर्ति उसे दिखायी गयी। अनुपम जगद्विमोहिनी सुन्दरता देख कर अलाउद्दीन बेहोश हो गया। पास ही खड़े वीरवर गोरा और बादलने अच्छा अवसर समझ कर तल-

वार निकाली और अलाउद्दीनकी नीचताका अन्त कर देनेके लिये आगे बढ़े, परन्तु धर्मप्राण राणा भीमसिंहने उन्हें ऐसा करनेसे रोक दिया । गोरा और बादलकी तलवारें म्यानके भीतर चली गयीं । दुराचारी जब कुछ देर बाद होशमें आया तो उसे पद्मिनी की प्रतिमूर्तिके सिवा और कुछ नहीं दिखायी दे रहा था । अलाउद्दीनने चलनेकी तैयारी की । राणा भीमसिंह उसे पहुंचाने के लिये अकेले ही चित्तौड़के बाहर तक आये । किलेके दरवाजेके बाहर बादशाहका इशारा पाते ही कुछ अस्त्रधारी सिपाही गुप्त स्थानसे बाहर निकल पड़े और उन्होंने राणाको बन्दी कर लिया । विश्वासघातियोंने राणाजीकी धर्मपरायणता और अतिथि सत्कार का यह पुरस्कार दिया । राणाको बन्दी कर अलाउद्दीनने ढिंढोरा पिटवा दिया कि यदि मुझे पद्मिनी मिल जायेंगी तो मैं राणाको छोड़ दूंगा । विश्वासघातका यह समाचार चित्तौड़ पहुंच गया । जगह जगह चर्चा होने लगी । यदि युद्धमें राणा बन्दी हो जाते तो क्षत्रियोंको जरा भी दुःख न होता । सब सोचने लगे कि अब क्या होगा । क्या राणाजीके बदले पद्मनीजीको दिया जायेगा या खड्गकी सहायतासे राणाका उद्धार किया जायगा । सारे मेवाड़में इस बातकी चर्चा फैल गयी और सब जनता महाराणा तथा पद्मिनीजीके निर्णयकी ओर बड़ी व्यग्रतासे देखने लगी । महाराणा लक्ष्मणसिंह, रानी पद्मिनी, गोरा और बादलने बैठ कर निश्चय किया कि कर्त्तव्य क्या है । शीघ्र ही लोगोंने सुना कि महाराणाके परामर्शसे निश्चय हो गया है कि राणाजीके उद्धारके लिये पद्मिनीजी स्वयं बादशाहके पास चली जायेंगी ।

इस बातसे चित्तौड़ और शिशोदिया वंशके कुछ क्षत्रियोंमें बड़ी अशान्ति उत्पन्न हुई । क्या यथार्थमें हिन्दू रमणियोंका आदर्श

सतीत्व एक विश्वासघाती विधर्मीको अर्पण कर दिया जायेगा! क्या राणीजी इस घृणित प्रस्तावको मान चुकी हैं इत्यादि इस प्रकारके बहुतसे प्रश्न सबके मनमें उठने लगे। जो हो, महाराणा और राणीजीके निश्चयके विरुद्ध किसीको कुछ बोलनेका साहस न हुआ। शीघ्र ही अलाउद्दीनके पास दूत भेजा गया और सूचना दी गयी कि पतिकी रक्षाके लिये हिन्दू स्त्रियां सब कुछ कर सकती हैं, इस लिये राणाजीने निश्चय कर लिया है कि राणाजीको छोड़कर जिस रोज आप चित्तौड़का घेरा उठाकर जानेकी तैयारी करने लगेंगे, उसी दिन राणीजी आपके यहां आ जायेंगी। दूसरी बात यह है कि पद्मिनीजी उच्च वंशकी हैं और चित्तौड़में उनकी बहुतसी सखी सहेलियां हैं। वे सब उन्हें विदा करने आयेंगी। इस लिये आपको अपनी सेनामें यह हुक्म करा देना होगा कि स्त्रियोंके जो डोले आवें, उनका कोई स्पर्श तक न करे। यदि उनके सम्मानमें किसी तरहका फर्क पड़ेगा तो राणीजीको बड़ा दुःख होगा। अलाउद्दीनने प्रसन्न होकर तमाम सेनामें ढिंढोरा पिटवा दिया कि स्त्रियोंके डोलोंके साथ जो कोई जरा भी छेड़ छाड़ करेगा उसे बड़ा कड़ा दण्ड दिया जायेगा। तमाम सेनामें रोशनी करायी गयी और पद्मिनीजीके स्वागतके लिये खूब तैयारी की गयी। मूर्ख अलाउद्दीनने एक बार भी यह न सोचा कि हिन्दू कुलकामिनियां हंसते हंसते अग्निचितामें प्रवेश कर सकती हैं, तेज छुरियां कलेजेमें भोंक सकती हैं, किन्तु परपुरुष कामनाकी पूर्ति प्राण रहते नहीं कर सकतीं।

निश्चित दिन निकट आया। चित्तौड़में सातसौ पालकियां सजायी गयीं। प्रत्येक पालकीको चित्तौड़के छ छ राजपूत

वीरोंने कहार बनकर कन्धों पर रखा और एक एक राजपूत वीर स्त्रीका भेष बना कर पालकीके भीतर हथियारबन्द होकर बैठा । अलाउद्दीनके खीमेमें हल्ला मच गया । बादशाहने पहलेसे ही एक अलग तम्बू तनवा रखा था । सारे डोले उसके भीतर पहुंचाये गये । दूतने बादशाहके पास जाकर कहा कि राणीजी को राणासे मिलनेके लिये आज्ञा दीजिये । पद्मिनीजीको भीम-सिंहजीसे अन्तिम मुलाकात करनेके लिये आधा घण्टा दिया गया । राणा भीमसिंह उसी स्थान पर लाये गये । चित्तौड़का एक वीर पालकीके भीतरसे निकला और उसने भीमसिंहजीसे कहा कि आप तुरन्त पालकीमें बैठ कर चित्तौड़ चले जाइये । राणाजीकी पालकीके साथ उनकी रक्षाके लिये और भी कई पालकियां हो लीं । जब आधा घण्टा हो गया और भीमसिंह पद्मिनीजीके पाससे वापस न लौटे तो अलाउद्दीनके क्रोधकी सीमा न रही । वह कामान्ध मूर्ख खीमेके भीतर चला गया और उसने पालकीका पर्दा ऊंचा कर दिया । बस, राजपूत वीरोंने युद्ध आरम्भ कर दिया । कई वीरोंने अलाउद्दीन पर आक्रमण किया, परन्तु वह सुरक्षित था इस लिये बच गया । इधर भीमसिंहजी थोड़ी दूर जाकर घोड़ेपर सवार हो गये और सकुशल चित्तौड़ पहुंच गये । राजपूत सेनाके प्रधान नायक वीरवर गोरा और बादलने अलाउद्दीनसे लड़नेमें बड़ी वीरता दिखायी । इन दो साहसी वीरोंका ही काम था कि उन्होंने इतनी बड़ी मुगल सेनाको उस समय तक रोक रखा, जब तक भीमसिंहजी चित्तौड़ न पहुंच गये । ग्यारह बारह वर्षके वीर बालक बादलकी रणनिपुणता देखकर अलाउद्दीनको बड़ा आश्चर्य हुआ । इसी समरमें वीर गोरा पांच हजार राजपूतोंके साथ धराशायी

हुए। बादल बादशाहके भागने पर चित्तौड़ लौट आये। इस संग्रामका वर्णन खोमान-रासोंमें बड़ी अपूर्वतासे किया गया है। केवल पांच हजार राजपूतोंने इतनी बड़ी मुगल सेनाको काटकर किनारे कर दिया। बादशाहकी तरफसे लड़नेवाले कई सेनानायक और राजकुमार अपना कलङ्की जीवन समाप्त कर बैठे। क्षत्रियोंने जो व्रत ग्रहण कर रणस्थलमें पदार्पण किया था, वह प्राणाहुति देकर पूरा किया गया। यद्यपि इस बार विजय महाराणाकी हुई, परन्तु मेवाड़के पांच हजार योद्धाओंकी पूर्ति बहुत दिनों तक न हो सकी। इधर अलाउद्दीन पराजयसे इतना हतोत्साह हो गया कि उसने कई वर्ष तक और किसी देशपर चढ़ाई तक न की।

बालक बादल जब युद्धस्थलसे लौटकर घर आया और अपनी चाची वीर गोराकी भार्यासे मिलने गया तो उस धर्मपरायण क्षत्राणीने उसे अकेला देख सब अनुमान पहलेसे ही कर लिया। उसने कहा कि बादल, मैं सब जान चुकी हूं। मुझे केवल यह बताओ कि मेरे प्राणनाथने कैसी वीरता दिखाकर वीरगति प्राप्त की है? अन्तिम समयकी यदि उनकी कोई आज्ञा हो तो वह मुझे सुनाओ। देर न करो, मुझे प्राणपतिके पास शीघ्र ही जाना है। बादलने मुंह सुखाकर कहा कि "मां, उनकी वीरताका वर्णन तो सहस्र जिह्वासे भी नहीं किया जा सकता। उनके पराक्रमने ही शिशोदिया कुलके गौरवकी रक्षा की है। उन्हींकी वीरताने महाराणी पद्मिनी और अनेकानेक राजपूत महिलाओंका चरित्र उज्ज्वल रखा है। संसारके सामने वे अपना कर्त्तव्य पालन कर रणशैया पर शत्रुकुलके मृतसैनिकोंका बिछौना बिछाकर अनन्त निद्रामें मग्न हो गये। उनके

तकियेकी जगह पर एक यमन राजकुमारकी देह है।" गोराकी विधवा भार्याने इन बातोंको कई बार सुना और अन्तमें वे जलते हुए अग्निकुण्डमें कूदकर अपने प्राणवल्लभसे जा मिली।

अलाउद्दीन इस युद्धसे लौट तो गया, परन्तु उसके हृदयका दाह न बुझा। सन् १२९० में वह फिर बड़ी भारी सेना सज्जाकर चित्तौड़ पर आ धमका। इस बार उसने अपना डेरा दक्षिण ओरके पहाड़ोंको घेर कर बहुत दूर तक डाला। आज तक भी वह स्थान अलाउद्दीनकी खाईके नामसे प्रसिद्ध है। चित्तौड़में महाराणा लक्ष्मणसिंहको चिन्ता हुई कि इस बार आक्रमणसे किस तरह रक्षा होगी। अगणित मुसल्मान सेनाकी गति रोकनेके लिये रणक्षेत्रमें सेनाका भार कौन वीर संभालेगा। परन्तु चिन्ता व्यर्थ थी। चित्तौड़की वीर नगरी सर्वथा वीरशून्य न हुई थी। स्वतन्त्रताकी उपासक भूमिपर मुसल्मान आसानीसे अधिकार करनेमें अब भी समर्थ न थे। महाराणा लक्ष्मणसिंहके झण्डेके नीचे चारों ओरसे मेवाड़के सामन्त एकत्र होने लगे। घोर संग्राम प्रारम्भ हो गया। इसी संग्रामके समय एक रातको घोर परिश्रमके बाद जब महाराणा लक्ष्मणसिंह अपनी शय्यापर लेटे हुए चिन्तामग्न थे, रात्रि प्रायः आधी व्यतीत हो चुकी थी। उनके मनमें अचानक यह संकल्प उत्पन्न हुआ कि इस समय मेवाड़में विशेष उत्साह उत्पन्न करनेके लिये आत्मत्यागका ज्वलन्त उदाहरण पेश करना चाहिये। यदि ऐसा न किया जायेगा तो मेवाड़का राज्य शिशोदिया कुलके हाथसे चला जायेगा। इस समय १२ राजकुमारोंका बलिदान कर देना उचित है, क्योंकि स्वतन्त्रताके सामने पुत्रोंका मोह न होना चाहिये। उन्होंने

राजपूत सरदारोंको निमन्त्रित कर कहा कि मेवाड़की अधिष्ठात्री देवी राजकुमारोंके बलिदानसे सन्तुष्ट होंगी। सरदार इस बात को सुनकर अवाक् रह गये। अन्तमें यही निश्चय किया गया कि प्रत्येक दिन एक एक राजकुमारका राज्याभिषेक किया जाये। महाराणी स्वयं उनकी आरती उतारें। तीन दिन तक उनकी आज्ञा मानी जाये। चौथे दिन एक एक राजकुमार रणस्थलमें कूदकर भाग्यका लेख पूरा करें। महाराणीजी बुलायी गयीं और उन्होंने मेवाड़की स्वाधीनताके लिये अपने प्राणप्यारे पुत्रोंका बलिदान सहर्ष स्वीकार कर लिया। महाराणीजीके बारह पुत्रोंमें इस बातका तर्क वितर्क-होने लगा कि स्वाधीनता की वेदी पर बलिदान होनेके लिये सबसे पहले किसे गौरव प्राप्त होगा। सबसे बड़े कुमार अरिसिंह थे। वे पहले राजसिंहासन पर बैठाये गये। तीन दिन तक यथायोग्य राज्यकी सारी प्रथाएं पूर्ण कर चौथे दिन बड़ी वीरतापूर्वक वे रणस्थल में लड़े और वीर गतिको प्राप्त हुए। दूसरे दिन छोटे भाई अजयसिंहकी बारी आयी। उन्होंने बहुतेरा चाहा कि मैं भी अपने भाईका अनुकरण करूं, परन्तु वे महाराणाको सब पुत्रोंसे अधिक प्यारे थे। साथ ही वंशरक्षाके लिये एक पुत्रका जीवित रहना आवश्यक था, इसलिये सबके परामर्शसे वे कुछ सरदारोंके साथ कैलवाड़ा भेज दिये गये। इसके बाद क्रम क्रमसे अन्य १० राजकुमार रणस्थलमें भेज दिये गये और वे मातृभूमिकी रक्षा करनेमें अपने प्राणोंकी आहुति दे बैठे। राजमहलमें शोकका नामोनिशान भी न दिखायी देता था। चारों ओर मङ्गलगान हुआ करते थे। एक राजकुमारकी मृत्यु होने पर जब दूसरा कुमार राजसिंहासन पर बैठता था तो उनकी

मता शृङ्गार कर मङ्गल द्रव्य हाथमें लेकर आरती उतारा करतीं थीं। इस आरतीके समय यदि आंखोंसे एक भी आंसू निकल पड़ेगा तो व्रत भङ्ग हो जायेगा इस विचारसे मङ्गलगान हुआ करते थे। यह कैसा स्मरणीय व्रत था जो मेवाड़की क्षत्राणीके भाग्यमें लिखा हुआ था जिसकी तुलना संसारके इतिहासमें कहीं पर नहीं मिलता। जब इस तरह स्वाधीनताके यज्ञमें ११ पुत्रोंकी आहुति हो चुकी, तो महाराणाजीने स्वयं संग्राम भूमिमें जाकर प्राण निछावर करनेके अभिप्रायसे सरदारोंको एकत्र किया। रणस्थलमें जानेके पूर्व एक और भी भयानक व्रत उपस्थित हुआ। बड़े बड़े अग्नि कुण्ड जलाये गये। विजयी शत्रुओंके हाथसे राजपूत महिलाओंके सतीत्व पर कलङ्क कालिमा न लगे, इसलिये राजपूत ललनाएं दल बांध कर उन जलते हुए अग्नि कुण्डोंमें हंसती हंसती कूद पड़ीं! इस प्रथाका नाम 'जुहार व्रत' है। जब शत्रुसे रक्षाकी कोई आशा न रहती थी, तो इसी प्रथाका पालन किया जाता था। महाराणी पद्मिनीके महलके पीछे एक अन्धकारमय सुरङ्ग थी उसीमें अग्नि कुण्ड जलाये गये थे। महाराणी पद्मिनी सब राजपूत बालाओंको एकत्र कर बाल खोले हुए शोक सङ्गीत गाती हुई चितामें कूद पड़ी। जिस रूप लावण्यको देख कर अलाउद्दीनके हृदयमें पापवृत्ति जागृत हो उठी थी और जो रूपलावण्य बादशाह अलाउद्दीनको महारानी पद्मिनीका गुलाम बना सकता था, वही रूपलावण्य कुलगौरवकी रक्षाके लिये जलती हुई अग्निमें समा गया! सभी राजपूत अपनी प्यारी बहनों, बेटियों, माताओं और स्त्रियोंको अग्निमें कूदते देखते रहे। वीरोंका हृदय इस दृश्यको देख कर जरा भी विचलित न हुआ और मातृभूमिकी

स्वाधीनता ही उन्हें सब कुछ दिखायी दी।

महाराणा लक्ष्मणसिंह स्त्रियोंके सम्बन्धमें निश्चिन्त हो अपने सरदारोंके साथ चित्तौड़गढ़का दरवाजा खोल कर बाहर निकले। उन्होंने इस वीरताके साथ युद्ध किया, जिसका वर्णन स्वयं भट्ट कवि भी नहीं कर सके। भीषण संग्रामके बाद महाराणा अपने सरदारों समेत रणस्थलमें वीरगतिको प्राप्त हुए। इधर बादशाह अलाउद्दीनने चित्तौड़ पर अधिकार कर महाराणी पद्मिनीकी खोज की। जब उसे मालूम हुआ कि सती शिरोमणि पद्मिनी पहले ही चितामें भस्म हो गयी हैं, तो उसकी निराशा और सन्तापका ठिकाना न रहा। वह कई दिन तक चित्तौड़में रहा। इसके बाद झालोरके सोनगढ़ वंशीय सरदार मालदेवको चित्तौड़का शासक बना कर अपनी राजधानीको लौट गया। वह जाते समय पद्मिनीके महलको छोड़ कर अन्य महलों और भवनोंको जमीनमें मिला गया।

यह चित्तौड़का पहला 'साका' था। मेवाड़के इतिहासमें चित्तौड़के साढ़े तीन 'साका' माने जाते हैं। आधा 'साका' वह माना जाता है, जिसमें पद्मिनीजीकी रक्षाके लिये पांच हजार चुने हुए वीरोंकी प्राणाहुति दी गयी थी। 'साका' का अर्थ नाश माना जाता था। राजपूत आपसमें इस शपथका प्रयोग भी करते थे कि 'चित्तौड़के साकाका पाप' हो।

——:o:——

पंचम-परिच्छेद ।

अजयसिंह ।

चित्तौड़के पहले 'साके' के बाद महाराणाके वंशमें पितरोंके पिण्ड देनेके लिये केवल अजयसिंह रह गये। महाराणा लक्ष्मण-सिंहके यही उत्तराधिकारी थे। महाराणा अजयसिंहको रात दिन इसी बातकी चिन्ता रहती थी कि जो चित्तौड़ हमारे पूर्वजोंकी लीलाभूमि है वह एक मुसलमान दासके अधीन है। महाराणा लक्ष्मणसिंहने अजयसिंहजीको विदा करते हुए कह दिया था कि तुम्हारे बाद तुम्हारा उत्तराधिकारी तुम्हारे बड़े भाई अरिसिंहका पुत्र होगा। अजसिंहने बहुत खोज करायी परन्तु अरिसिंहके पुत्र हमीरका पता न लगा।

महाराणा अजयसिंहके दो पुत्र थे। बड़ेका नाम अजीतसिंह और छोटेका नाम सुजनसिंह था। महाराणा इन दोनों पुत्रोंसे विशेष प्रसन्न न थे। अजयसिंह जिन पहाड़ी प्रदेशोंमें रहते थे, उसके पासके स्थानोंका शासक भीलोंका सरदार मुंज था। उसने कई बार महाराणाके साथ लड़ाई लड़ी। महाराणा उसे अपना बड़ा भारी शत्रु समझा करते थे। कई दिनोंके बाद महाराणा अजयसिंहने पता लगा कर कुमार हमीरसिंहको उनके मामाके यहांसे बुला लिया। कुमार हमीरने आते ही महाराणासे भील सरदार पर चढ़ाई करनेकी आज्ञा पायी। कुमार थोड़ेसे सर-दारोंको लेकर मुञ्जसे लड़नेके लिये चल पड़े। चलते समय

महाराणाके चरण छूकर उन्होंने प्रतिज्ञा की कि यदि शत्रुका शिर काट कर आपके चरणोंमें अर्पित कर सकूंगा, तो लौटूंगा अन्यथा नहीं। थोड़े ही दिनोंके पीछे कुमारने भालेकी नोक पर मुञ्जका कटा हुआ शिर लाकर महाराणाके चरणों पर रख दिया। महाराणा इस भेटसे बड़े प्रसन्न हुए और उन्हें निश्चय हो गया कि मेवाड़का उद्धार हमीर करेगा। भीलके कटे हुए शिरसे रुधिर लेकर महाराणाने राजकुमारका तिलक कर दिया। महाराणा की इस कार्यवाहीसे उनके दोनों पुत्र बड़े खिन्न हुए। उन्हें मालूम हो गया कि मेवाड़की राजगद्दी हमारे भाग्यमें नहीं। अजीतसिंह तो शोकमें ही स्वर्गवासी हो गये और सुजनसिंह महाराणाकी आज्ञा लेकर दक्षिणकी तरफ चले गये। दक्षिणमें उनका वंश चला जिसमें छत्रपति शिवाजीका जन्म हुआ।

महाराणा अजयसिंहकी मृत्युके बाद सन् १३०१ ई० में वीर हमीर महाराणा बने। वे वीरमाताके वीर पुत्र थे। एक समय स्वर्गीय अरिसिंह जो हमीरके पिता थे, कई सरदारोंके साथ वनमें शिकार खेलने गये थे। एक जङ्गली शूकरके पीछे उन्होंने अपना घोड़ा छोड़ा। शूकर जुआरके एक खेतमें घुस गया। उसे खेतमें जाता देख अरिसिंहको बड़ी निराशा हुई। एक मञ्च पर एक राजपूत पुत्री बैठी खेतकी रक्षा कर रही थी। उसने अरिसिंहसे निराश न होनेको कहा। जुआरके एक पेड़को उखाड़ कर उसकी नोक तेज कर उसने मञ्च परसे ऐसा निशाना मारा कि सुअर तुरन्त ही मर गया। अरिसिंहको इस वीरता पर बड़ा आश्चर्य हुआ। वे थोड़ी दूर जाकर एक नदीके किनारे ठहरे। इतनेमें उनके घोड़ेकी टांगमें एक ढेला लगा जिससे घोड़ा गिर पड़ा। पता लगानेसे मालूम हुआ कि वही राजपूत

कन्या ढला मार कर पशुओंसे खेतकी रक्षा कर रही है। कन्या ने अरिसिंहसे क्षमा प्रार्थना की। उसी समयसे वह कन्या उनकी स्नेहभाजन बन गयी। जब वे शिकार खेल कर राजमहलको लौट रहे थे, उन्होंने वही कन्या देखी जो शिर पर दूधका बर्तन रखे हुए दो भैसोंको हांकती जा रही थी। अरिसिंहके एक मित्रने हंसीमें अपना घोड़ा कन्याकी तरफ बढ़ाया। कन्याने भैंसको घोड़ेकी टांगमें इस तरह अड़ा दिया कि सवार नीचे गिर पड़ा। अरिसिंह घर लौट आये और कन्याकी खोज करने लगे। उन्होंने कन्याके पिताको बुला कर कहा कि अपनी लड़की का विवाह मेरे साथ कर दो, पिताने यह प्रस्ताव न माना। जब वह घर लौटा तो उसकी स्त्रीने उसके इस कार्यकी बड़ी निन्दा की। दूसरे ही दिन राजपूतने अरिसिंहके पास जाकर क्षमा मांगी और उनके साथ अपनी कन्याका विवाह कर दिया जिससे वीरवर हमीरकी उत्पत्ति हुई।

यद्यपि हमीरका जन्म चित्तौड़में हुआ था, परन्तु किसी कारण वश वे अपनी माताके साथ अपने मामाके यहां रहा करते थे। अलाउद्दीनकी चढ़ाईके समय उनकी मां तो चित्तौड़ चली आयी परन्तु वे अपने मामाके पास ही बने रहें। जिस दिनसे हमीर महाराणा हुए और उनके द्वारा चित्तौड़का उद्धार हो गया। उनकी तलवार म्यानके भीतर न गयी। महाराणा होते ही उन्हें चित्तौड़के उद्धारकी प्रबल इच्छा हुई उन्होंने सारे मेवाड़में इस बातका ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो लोग महाराणा हमीर को अपना स्वामी मानते हों वे अपने अपने निवास स्थानोंको छोड़ कर परिवार समेत पूर्व और पश्चिमके पहाड़ोंमें आ बसे, नहीं तो वे शत्रु समझे जायेंगे। जिन नगरोंमें प्राचीर थे, उन्हें छोड़

कर मेवाड़के सभी स्थान नष्ट कर दिये गये। महाराणा हमीरने जब जब मौका पाया मुसल्मानोंकी सेना पर आक्रमण किया। और उसे काट कर पहाड़ी स्थानोंमें जा छिपे। मेवाड़के सारे बाजार, हाट, चौक खण्डहर हो गये। महाराणाने कैलवाड़ेको बसाया और वहां बहुतसी प्रजा जाकर रहने लगी। कैलवाड़ेमें किले भी बनाये गये। चित्तौड़का मुगल प्रतिनिधि मालदेव हमीरके इस पराक्रमसे घबड़ा उठा। यदि महाराणाके पास कुछ द्रव्य और युद्धसामग्री होती तो वे चित्तौड़ पर धावा किये बिना न रहते, परन्तु वे इस बातकी प्रतीक्षामें अपने दिन काटते रहे।

इसी बीचमें मालदेवने उन्हें सन्तुष्ट करनेके लिये अपनी पुत्रीका विवाह उनके साथ कर देना चाहा। सगाईका नारियल महाराणा ने मन्त्रियोंके प्रतिवाद करने पर भी स्वीकार कर लिया। यह शर्त तय हुई कि बारातके साथ पांचसौसे ज्यादा सवार न लाये जायें। महाराणाने अपने मन्त्रियोंसे कहा कि विवाहके बहाने चित्तौड़के दर्शन तो अवश्य हो जायेंगे। विवाहकी तैयारी हुई। महाराणा चित्तौड़की ओर रवाना हुए। महाराणाने प्रतिज्ञा की कि या तो पितृ-भूमिका उद्धार किया जायेगा या उसके आंगनमें प्राण दे दूंगा। बारात चित्तौड़ पहुंची। सिंहद्वार पर तोरण या विवाहका कोई मङ्गल चिन्ह दिखायी न दिया। महाराणाको बड़ा आश्चर्य हुआ परन्तु उन्होंने उस समय कुछ भी बोलना उचित न समझा।

मालदेवकी पुत्रीके साथ उनका बिवाह हो गया। विवाहमें मङ्गल-गान इत्यादि कुछ न हुआ। सुहागरात्रिके लिये महाराणा महलमें पधारे। नववधूने चरणोंमें गिर कर कहा कि इस दासीका अपराध क्षमा कीजिये। मैं आपकी विकलताका कारण जानती

हूं। यह भी जानती हूं कि पिताने गुप्त रीतिसे मेरा विवाह क्यों किया। निरीह बालिकाके मुखसे ये बातें सुन कर महाराणा हमीरका दिल पिघल गया। राजपूत बालाने उन्हें बताया कि मैं विधवा हूं, इसीसे मेरा विवाह गुप्त रीतिसे किया गया है। आप मुझसे घृणा न करें। मेरी बहुत ही छोटी अवस्थामें एक राज-कुमारके साथ मेरा विवाह हुआ था, उसकी मृत्यु हो गयी। मैंने जो कुछ अपनी माताके मुखसे सुना है आपसे कह दिया। मैंने अपने स्वामीका मुख-दर्शन तक नहीं किया। नववधू यह कह कर रोने लगी। मालदेवके इस अपमानसे यद्यपि हमीरका हृदय जल उठा था, परन्तु अबलाके अश्रुजलने उसे शान्तकर दिया था। महाराणाने अपनी नवविवाहिता स्त्रीसे प्रतिज्ञा करायी कि मैं चित्तौड़के उद्धारमें आपकी पूर्ण सहायता करूंगी। इसके बाद उन्होंने उसे स्वीकार किया। हमीरसे राजकुमारीने कहा कि आप दहेजमें चतुर राजकर्मचारी जलधरको मांग लेना। महाराणाने ऐसा ही किया और वे केलवाड़ा लौट आये।

कुछ दिनोंके बाद मालदेवकी स्त्रीने पुत्ररत्न उत्पन्न किया। इस आनन्दोत्सवमें मालदेवने महाराणा हमीरको अपने कुछ पहाड़ी देश दे दिये। लड़केका नाम क्षेत्रसिंह रखा गया। क्षेत्रसिंह पर चित्तौड़के देवताओंके कोपकी धूम मचायी गयी। मालदेवको सूचना दी गयी कि चित्तौड़के देवताओंको क्षेत्रसिंहकी रक्षाके लिये 'जात' देनी होगी। मालदेवने कुछ सरदारोंको भेजकर अपनी कन्या और नातीको चित्तौड़ बुला भेजा। मालदेवकी पुत्रीने जल-धरकी सहायतासे चित्तौड़के सरदारोंको अपनी ओर मिला लिया। जब मालदेव चुने हुए सरदारोंको लेकर मदेरियाकी ओर चले गये तो हमीरके आगमनका यही उपयुक्त समय समझा गया।

क्षेत्रसिंहकी माताने पतिको इस सुअवसरकी सूचना दे दी। हमीर ने शीघ्र ही चित्तौड़ पर धावा कर उसे वशमें कर लिया। जैसे ही चित्तौड़ उनके अधिकारमें आया चित्तौड़ निवासियोंने उनकी अधीनता स्वीकार कर ली। जब मालदेव शत्रु जीत कर चित्तौड़ पहुंचा तो उसका होश बिगड़ गया। वह निरुपाय होकर अल्लाउद्दीनके उत्तराधिकारीके पास दिल्ली पहुंचा। बादशाह यह सुनकर बड़ा क्रुद्ध हुआ और उसने चित्तौड़ पर धावा करनेकी तैयारी कर दी। इधर जब महाराणाको खबर मिली कि चढ़ाई होनेवाली है तो उन्होंने सामन्त आदिको एकत्र किया और बादशाहका सामना करनेके लिये वे आगे बढ़े। जिस दिन महाराणाने चित्तौड़ पर अधिकार किया था चित्तौड़के सभी पुराने सामन्त वापस आ गये थे। महाराणा दिल्लीके आक्रमणका अनुमान पहले से ही कर चुके थे। बादशाह सी मार्गसे चित्तौड़ न आया। पहाड़ी-प्रदेशोंको पार करनेमें उसकी बहुतसी सेना पानी आदिके कष्टसे नष्ट हो गयी। बादशाहने सिंगोलीमें डेरा डाला और महाराणाकी सेनाने वहीं पर आक्रमण किया। भयङ्कर युद्ध छिड़ गया और महाराणाने अपने हाथसे मालदेवके पुत्र हरिसिंहको मारा। कई दिनोंके युद्धके बाद बादशाह कैद हो गया। वह चित्तौड़के जेलखानेमें लाया गया और तीन महीने तक उसे बन्द रहना पड़ा। अन्तमें अजमेर, रणथंभोर, नागोर, शिवपुर तथा पचास लाख रुपये और एकसौ हाथी महाराणाको देकर उसने छुटकारा पाया। विदाईके समय महाराणा हमीरने कहा कि आप यह न समझना कि दिल्लीके बादशाह होनेके कारण आप छोड़े गये हैं। आप सरीखे शत्रुओंका सामना करनेके लिये हमीर सदा तैयार हैं। आपने चित्तौड़को अपनी जायदाद समझ चढ़ाई

की थी, इसीसे आपकी यह हालत हुई। यदि आपमें कुछ भी वीरत्व है तो फिर आक्रमण करना। हमीर चित्तौड़के द्वार पर नङ्गी तलवार लिये हुए आपको दिखायी देगा। बादशाहसे कुछ भी उत्तर देते न बना। उसने यह प्रतिज्ञा की कि जीवित रहते मैं चित्तौड़ पर कभी चढ़ाई न करूंगा। इसके बाद वह छुटकारा पाकर भागा।

जब मालदेवने देखा कि सारा श्रम विफल हुआ तो उसके बड़े पुत्र बनवीरने अधीनता स्वीकार कर ली। महाराणाजीने भी अपने ससुरालवालोंको कई स्थान निर्वाहके लिये दे दिये। भूमि देते हुए महाराणाने कहा कि एक दिन आप तुर्कोंके दास थे, परन्तु अब स्वधर्मी हिन्दुओंके भाई हो। यद्यपि तुम्हें अपने राज्यके खोनेका दुःख होगा, परन्तु जरा बिचार कर तो देखो कि वास्तवमें यह राज्य किसका है। जिस मेवाड़को मेरे पूर्व पुरुषोंने अपने रुधिर से सींचा है उसीको मैंने बाहुबलसे फिर पाया है। बनवीरने अपने बहनोईके उपदेश वाक्य ध्यानपूर्वक सुने। इसके बाद उसने स्वयं कई देशों पर चढ़ाई कर उन्हें मेवाड़के अधीन बनाया। उस समय सारे राजपूतानेमें महाराणा हमीरकी दुहाई फिर रही थी। मारवाड़, जयपुर, बून्दी, चन्देरी, सीपरी, काल्पी और आबूके राजा महाराणाकी कृपाको अपना बड़ा सौभाग्य समझा करते थे और कार्य पड़ने पर अपनी अपनी सेना सजा कर महाराणाको सहायता दिया करते थे।

इस महायुद्धके बाद मेवाड़में कई वर्षो तक शान्ति रही। मुसलमानोंका कोई आक्रमण नहीं हुआ। महाराणाने नगरकोट और दिल्लीके द्वार तक अपनी विजयका डङ्का बजाया। कई वर्षोंकी शान्तिके कारण मेवाड़के निवासी अत्यन्त सम्पन्न

हो गये । चित्तौड़ और मेवाड़में कई महल, मन्दिर और विजयस्तम्भ बनाये गये। महाराणा हमीरके परलोकवासी होने पर उनके पुत्र क्षेत्रसिंह संवत् १३६५ ई० में चित्तौड़के सिंहासन पर बैठे। उन्होंने शीघ्र ही मण्डलगढ़, जहाजपुर, चम्पन आदिको अपने राज्यमें मिला लिया। बकरोल नामक स्थानमें नसीरुद्दीन तुगलकका बड़ा बेटा हुमायूं महाराणाके साथ लड़ा। दिल्लीको सेना हरा दी गयी। थोड़े ही दिनोंमें मेवाड़के वनोदा नामक प्रदेशके शासक हाड़ावंशीय क्षत्रियकी पुत्रीके साथ क्षेत्रसिंहकी सगाई हुई। पीछेसे हाड़ा सरदारने क्षत्रसिंहकी छातीमें तलवार भोंक दी। महाराणाकी अकाल मृत्यु होने पर सन् १३८३ ई० में महाराणा लाखा गद्दी पर बैठे।

विदनौरका प्रसिद्ध किला इन्होंने ही बनवाया था। चप्पन देशकी चांदी और टीनकी खानें इन्हींके समयमें निकलीं, जिनसे राज्यको बड़ी भारी आमदनी हुई। दिल्लीके बादशाह मुहम्मदशाह लोदीके साथ महाराणा विदनौरके पास लड़े। बादशाह हार कर मुंह छिपा कर भागा। कुछ ही दिनों बाद खबर आयी कि विधर्मियोंने हिन्दूतीर्थ गया पर आक्रमण किया है। महाराणा शीघ्र ही अपनी सेना सजा कर गयाके रणस्थलमें पहुंचे। और भी देशोंके राजा वहां पहुंचे। प्रधान सेनापति महाराणा लाखा ही बनाये गये। बड़ी वीरताके साथ लड़ कर महाराणा उसी तीर्थक्षेत्रमें स्वर्गवासी हुए। अलाउद्दीनने चित्तौड़के जो महल और मन्दिर नष्ट कर दिये थे, वे महाराणा लाखाने फिर ठीक करा दिये थे। पद्मिनीजीके महलके समान एक दूसरा महल चित्तौड़में बनवाया गया। महाराणाके सबसे बड़े पुत्र चण्ड थे। महाराणा लाखाकी मृत्युके बाद वे गद्दी पर न

बैठ सके, इसका कारण यह था कि एक दिन महाराणा लाखा दरबारमें बैठे हुए थे, उसी समय मारवाड़के राठोर राजा रणमलका भेजा हुआ एक दूत राठोर राजकुमारीकी सगाई का नारियल लेकर आया। महाराणाने दूतका यथोचित सम्मान कर उससे आनेका कारण पूछा। दूतने कहा कि युवराज चण्डके साथ अपनी कन्याका विवाह करनेके लिये महाराज रणमलने नारियल भेजा है। चण्ड इस समय दरबारमें न थे। उन्हें बुलानेके लिये आदमी भेज दिया गया। महाराणा दूतसे बातें करने लगे। बातोंमें उन्होंने उपहास पूर्वक कहा कि ऐसी खेल-सामग्री मुझ सरीखे सफेद दाढ़ी मूछ वालोंके लिये राठोरके महाराज क्यों नहीं भेजते। दरबारके सब लोग हंस पड़े और सभी उस दूतसे हंसी मजाक करने लगे। जब युवराज चण्ड सभामें आये और उन्होंने सुना कि ऐसी बातें हो रही हैं ,तो उनके मनमें यह बात उत्पन्न हुई कि जिस सम्बन्ध को पिताने किसी भी भावसे एक वार अपने साथ करनेको कहा है, उसे मैं कैसे स्वीकार कर सकता हूं। महाराणाजीके पूछने पर चण्डने प्रस्ताव अस्वीकार किया। महाराणा और दरबारियोंने उन्हें बहुत समझाया, परन्तु चण्डके दृढ़ संकल्पको कोई न डिगा सका। महाराणाजीको बड़ी चिन्ता हुई। एक ओर युवराज चण्डका हठ और दूसरी ओर मारवाड़ नरेशका घोर अपमान सामने था। महाराणाजी बड़े रुष्ट हुए। उन्होंने अपने लिये ही नारियल स्वीकार करते हुए कहा कि तिलक तो लौटाया नहीं जा सकता, यह बात याद रखनी होगी कि इस विवाह सम्बन्धसे जो पुत्र होगा, वही चित्तौड़की गद्दी पर बैठेगा। चण्ड इस कठोर बचनसे जरा भी दु:खी न हुए और उन्होंने

महाराणाकी बात सहर्ष मान ली। उन्होंने एकलिंगेश्वरकी शपथ खाकर महाराणाको विश्वास दिलाया। कहां तो महा-राणा संसार छोड़ कर चण्डको गद्दी देकर धर्म जीवन बितानेकी चिन्तामें थे और कहां उन्हें पचास वर्षकी अवस्थामें बारह वर्ष की एक कुमारीसे विवाह करना पड़ा। इस विवाहसे मुकुल उत्पन्न हुए। जिस समय मुकुल ५ वर्षके थे, गया पर विध-र्मियोंके आक्रमणकी बात सुनी गयी। महाराणाने जब गया जानेकी तैयारी की तो उन्होंने चण्डको बुला कर कहा कि मैं जिस कठोर व्रतके साधनके लिये जा रहा हूं, उसे पूरा कर वापस लौटनेकी आशा नहीं। यदि मैं न लौटा तो मुकुलकी जीविका का क्या प्रबन्ध किया जायेगा? तेजस्वी चण्ड अपनी भीष्म प्रतिज्ञाको तो भूले ही न थे। उन्होंने बड़ी गम्भीरतासे उत्तर दिया, पिताजी, मुकुलकी जीविका चित्तौड़का राजसिंहासन है। चण्डने जब देखा कि मेरे कथनमात्रसे पिताजीको शायद सन्तोष न हो इसलिये उन्होने उनके सामने ही मुकुलका अभिषेक करानेका निश्चय किया। पांच वर्षके बालक मुकुल राजगद्दी पर बैठे। सबसे पहले त्यागवीर चण्डने उन्हें 'महाराणा' कह कर अभिवादन किया। पिताके चरण और चित्तौड़का राज-सिंहासन छू कर चण्डने प्रतिज्ञा की कि मैं शुद्ध मनसे शासनकी देख भाल करूंगा, जब तक कि मुकुल पूर्ण अवस्था न प्राप्त कर लें। चण्ड मन्त्रिसभाके प्रधान बने और यह भी निश्चय हुआ कि यदि किसी सामन्तको भूमि दी जायेगी तो दानपत्र पर महाराणाके हस्ताक्षरके ऊपर चण्डकी तलवारका चिन्ह रहा करेगा।

राठोर कुमारी चाहती थी कि जब तक मुकुल बड़ा न हो,

राज्य शासन मैं स्वयं करूं। चण्डको राज्यशासन करते देख उनके मनमें द्वेष उत्पन्न हुआ और वे चण्डके प्रत्येक कार्यको घृणित समझने लगीं। थोड़े ही दिनों बाद उन्होंने लोगोंसे कहा कि चण्ड स्वयं राज्य कार्य करते हुए महाराणा बनते चले जा रहे हैं। क्या मेरा पुत्र उपाधिमात्र ही धारण किये रहेगा। चण्डने जब यह बात सुनी तो उनके दिल पर बड़ी चोट पहुंची। उन्होंने राठोर कुमारीसे एक दिन मिलकर कहा कि माताजी आपके मनमें कुधारणा उत्पन्न हुई है। यदि मैं चित्तौड़की गद्दीका अभिलाषी होता तो आज आप राजमाता न बनतीं। खैर, कुछ भी हो, मैं चित्तौड़ छोड़ कर जा रहा हूं। आप ही शासनभार ग्रहण करें। मेरी अन्तिम प्रार्थना यह है कि शिशोदिया कुलकी अपूर्व कीर्तिमें धब्बा न लगे।—वे चित्तौड़ छोड़कर मन्दूर चले गये तथा वहांके राजासे भूमि पाकर वहीं रहने लगे।

मारवाड़के राठोरोंने जब चण्डके चले जानेकी बात सुनी तो उनके आनन्दका ठिकाना न रहा। वे मारवाड़की सूखी भूमि छोड़ कर मेवाड़में आ बसे। सबसे पहले मुकुलके मामा जोधाजीने चित्तौड़में आकर डेरा जमाया। कुछ ही दिन पोछे जोधाजीके पिता अपनी सेना और नौकर-चाकरोंको लेकर चित्तौड़ आ गये। रणमल मुकुलको गोदीमें लेकर मेवाड़के राजसिंहासन पर बैठा करते थे। नाम यद्यपि मुकुलका था परन्तु राजकार्य रणमल और उनके पुत्र जोधाजी ही चलाया करते थे। जब मुकुल गोदसे उठकर इधर उधर चले जाते तो रणमल अकेले राजसिंहासन पर बैठे रहते, महाराणाके छत्र-चंवर उन पर डुला करते। यह बात मेवाड़के सरदारोंके

दिलोंमें बहुत चुभती, परन्तु राजमाताके कारण किसीको प्रतिवादका साहस न होता। एक दिन मुकुलकी दाईने राजमातासे कहा कि आप कुछ देखती हैं या नहीं ! क्या राठोर, चित्तौड़के राजसिंहासनसे शिशोदियोंको तो नहीं निकाल देंगे ? जब दाईके मुखसे राजमाताने यह बात सुनी, तो उन्हें इस बातमें बहुत कुछ सत्यता मालूम हुई। वे उपाय सोचने लगीं। महाराणी एक दिन अपने पिताके पास गयीं और उनसे सब बातोंका कारण पूछा। उत्तर सुन कर महाराणी रोमाञ्चित हो गयीं। उन्हें निश्चय हो गया कि रणमल और जोधाजीने षड्यन्त्र रच लिया है और मुकुलको इस संसारसे विदा करने की बात तय हो चुकी है। दूसरे दिन महाराणीजीने यह भी सुना कि चण्डके छोटे भाई रघुदेव कैलबाड़ेमें गुप्तचरों द्वारा मरवा दिये गये हैं, तो उनका विश्वास दृढ हो गया। अन्य कोई उपाय सामने न देख महाराणीने चण्डको एक पत्र लिखा। चण्डने सब रहस्य समझ लिया और अपने साथके विश्वासी सरदारोंको चित्तौड़ भेज दिया। उन्होंने महाराणीको यह भी लिखा कि इन सरदारोंको पासके गांवोंमें भिखारियोंको अन्न बांटनेके लिये भेजा करो और साथमें कभी कभी आप भी मुकुलको साथ लेकर इनके साथ जाया करो। दीपमालिकाके दिन आप मुकुलको लेकर गोमुण्डा स्थानमें पहुंच जाना। उस दिन चण्ड उनसे आ मिले। वे मुकुलजीको साथ ले चित्तौड़ पहुंचे। राजमहलके द्वार पर जब द्वारपालोंने उनसे पूछा कि आप कौन हैं, तो चण्डने जवाब दिया कि हम लोग राजपूत सरदार हैं, महाराणा मुकुलजीको चित्तौड़ पहुंचानेके लिये गोमुण्डासे आये हैं। यह उत्तर सुन द्वारपालोंने

दरवाजा खोल दिया, परन्तु जब बहुतसे घुड़सवार दिखायी दिये तो द्वारपालोंने उन्हें भीतर बढ़नेसे रोका। कुमार चण्डने चित्तौड़के किलेदार भट्टी सरदारको पकड़ कर कैद कर लिया। चित्तौड़के भीतर जो चण्डके आदमी थे, उन्होंने अपनी तलवारें संभाली और राठोरोंको काटना शुरू किया। रणमल एक किसी स्त्रीके साथ शराब पिये हुए सो रहा था। वह जब बेहोश हो गया, तो उस स्त्रीने उसकी पगड़ी खोल कर उसे चारपाईसे बांध दिया। जब चण्डने उसके पास पहुंच कर उसे जगाया तो वह हाथ पैर पटकने लगा। चण्डने उसे वहीं मार डाला। जोधराव अपने पिताकी मृत्युकी खबर सुन चित्तौड़के किलेसे निकल भागा। चण्डने जोधरावका पीछा किया और उसे बहुत दूर तक खदेड़ आये। जोधरावने एक राजपूतके यहां आश्रय लिया।

कुमार चण्डने मन्दोरको भी जीत लिया और मेवाड़में मिला लिया। अपने पुत्रोंको उन्होंने कई स्थानोंका राज्य दे दिया था, परन्तु जोधरावने उन्हें उनसे वञ्चित कर दिया और जोधपुर राज्यकी स्थापना की। थोड़े ही दिनों बाद दिल्लीके बादशाह मुहम्मद तुगलकने चित्तौड़ पर चढ़ाई की। यह नहीं कहा जा सकता कि उसने वास्तवमें मेवाड़ पर चढ़ाई करने की बात तय की थी, या राहमें आ जानेसे उसपर चढ़ाई कर दी गयी थी। महाराणा मुकुल चढ़ाई की बात सुन कर रामपुर पहुंचे और वहां बादशाहके साथ उनका घोर संग्राम हुआ। बादशाह की सेना काट डाली गयी या भाग गयी। बादशाह भी गिरफ्तार किया गया और अन्तमें महाराणाको सांभर झील देकर उसने छुटकारा पाया। महाराणाके तीन पुत्र और एक कन्या हुई,

जिसका नाम लालबाई था। उनका विवाह गगनोरके एक सरदारके साथ हुआ। अन्तमें महाराणा मुकुल एक दासी-पुत्रके हाथसे मारे गये। आपसमें कुछ हंसी मजाक हो रहा था कि इतनेमें दासीपुत्रने खड़े होकर तलवारसे महाराणाका शिर काट लिया।



षष्ठ-परिच्छेद ।

कुम्भसिंह ।

—:—

सन् १४१९ ई० में महाराणा कुम्भसिंह चित्तौड़के सिंहासन पर बैठे। इनके समयमें मेवाड़की बड़ी भारी उन्नति हुई। अला-उद्दीनके युद्धके बाद एकसौ वर्ष तक चित्तौड़में पूर्ण शान्ति रही। महाराणा कुम्भसिंह वीर थे, इसका पता कवियोंके वर्णनसे लगता है। उन्होंने घग्गर नदीके किनारे तक मेवाड़का झण्डा उड़ाया। मेवाड़की रक्षाके लिये जो ८४ किले थे, उनमें ३२ महाराणा कुम्भने तैयार कराये थे। दिल्लीके खिलजी वंशके बादशाहोंका तेज इतना हीन हो गया था कि भारतके अन्यान्य राजा स्वतन्त्र बन रहे थे। उस समय गोलकुण्डा, मालवा, गुजरातके मुसल्मान शासक दिल्लीकी अधीनतासे निकल कर स्वाधीन होनेके प्रयत्नमें लगे हुए थे। गुजरात और मालवाके शासक महाराणाकी उन्नति देख कर ईर्ष्या करने लगे। सन् १४४० में दोनों शासकोंने मिल कर एक साथ चित्तौड़ पर आक्रमण कर दिया। महाराणा पहलेसे ही सचेत थे। उन्होंने बड़ी वीरतासे सामना किया। उनके साथ एक लाख पैदल और घोड़े और १४ सौ हाथी थे। मेवाड़के शासक महमूद खिलजी गिरफ्तार कर ६ महीने तक चित्तौड़में कैद रखे गये। विजय चिन्ह स्वरूप महाराणाने उनका ताज अपने पास रख लिया, और उन्हें दयापूर्वक छोड़ दिया। इसी विजयकी स्मृतिमें चित्तौड़में एक विजयस्तम्भ खड़ा किया

गया, जिसे तैयार करानेमें १० वर्ष लगे। कुछ दिनोंके बाद मालवाका शासक महाराणाका मित्र बन गया। जब दिल्लीश्वर ने महाराणा पर चढ़ाई की थी तो मालवारका शासक महाराणा की सहायताके लिये झुनझुनूके मैदानमें पहुंचा। बादशाह बुरी तरह हार गया और उसकी शक्ति इतनी क्षीण हो गयी कि वह कई बरसों तक आक्रमणकी बात किसी स्थानके सम्बन्धमें भी न सोच सका। महाराणाने कमलवीर-दुर्ग खड़ा किया। आबूके पहाड़ पर एक महल बनवाया गया जिसमें गर्मीके दिनोंमें महाराणा रहा करते थे। महाराणा अच्छे लेखक और कवि भी थे। उन्होंने 'गीतगोविन्द' नामक संस्कृत पुस्तककी टीका लिखी है। महाराणाकी रानियोंमें सबसे प्रसिद्ध मीराबाई हुई हैं।

मीराबाईके पिता राठोर वंशीय थे। उनका नाम महाराज रत्नसिंह था। महारानी जितनी सुन्दरी थीं उतनी ही धर्मपरायणा भी थीं। उनका स्वर बड़ा ही सुरीला था। उन्होंने कृष्ण-गुण गान तैयार किये, जो आज भी सर्वत्र गाये जाते हैं। मीराबाई बड़ी ही कृष्णभक्त थीं और बचपनसे ही उनके हृदयमें इस भगवद्भक्तिने स्थान पालिया था। वे बचपनसेही कृष्णकी मूर्त्ति की पूजा किया करती थीं और कहती थीं कि कृष्णजी ही मेरे पति हैं। जब वे चित्तौड़ आयीं, तो अपने साथ कृष्ण-मूर्त्ति ले आयी थीं। उनकी सास इस अधिक भक्तिसे असन्तुष्ट हुईं। जब मीराबाईने अपना मत जरा भी न बदला तो उनके रहनेके लिये अलग प्रबन्ध कर दिया गया और कुम्भको आज्ञा हुई कि वे मीराबाइके पास न जायें। मीराबाई रातको कृष्णमूर्त्ति सजा कर उससे पतिकी तरह बातें किया करती थीं, जिससे लोगोंको उनके चरित्रके सम्बन्धमें सन्देह हुआ। एक रातको कुम्भने

उनके निवास स्थानके पास पहरा दिया। जब उनके कानमें मीराबाईकी बातें पड़ीं तो वे नङ्गी तलवार लेकर कमरेमें पहुंचे। उन्होंने पूछा कि किससे बातें हो रही थीं। मीराबाईने अपने सरल स्वभावसे उत्तर दिया कि मैं अपने पतिसे बातें कर रही थी। कमरेमें कृष्णमूर्तिके सिवा और कोई पाया न गया। इस घटना का प्रभाव कुम्भ पर पड़ा और मीराबाईको खर्च वगैरहका कुछ भी कष्ट न रहा। मीराबाई रात्रिके समय अकेली गाया बजाया करती थीं। यह बात रनवासकी स्त्रियोंको भद्दी मालूम हुई। कुम्भने मीराबाईको अपने हाथसे विषका ाला भर कर पिलाया, परन्तु वह हलाहल विष उनके लिये अमृत हो गया! जब मीराबाईको दूर करनेका उपाय काममें न आ सका, तो वे स्वयं ही वृन्दावन चली गयीं। वहां उन्होंने मन्दिर बनवाये। महाराणा कुम्भ उन्हें वापस लानेके लिये स्वयं वृन्दावन गये, परन्तु मेवाड़वासी फिर उनके दर्शन न कर सके, क्योंकि मीराबाईने द्वारकामें जाकर द्वारकानाथकी मूर्तिके सामने आवेशमें आकर अपने प्राण त्याग दिये। मीराबाईका नाम संसारमें अमर हो गया।

महाराणा कुम्भका विवाह मालवा गांवकी एक राठोर राजकुमारीके साथ भी हुआ था। उस कन्याकी सगाई महाराणाके साथ हो जाने पर वह किसी दूसरेको व्याही जाने वाली थी, परन्तु महाराणा इसमें अपना अपमान समझ उसका अपहरण कर लाये। महाराणा कुम्भने ५० वर्षसे अधिक शासन किया। उनके पुत्र उदयसिंहने उन्हें मार डाला। इस हत्यारेका चरित्र जैसा कलङ्कित है, वैसा मेवाड़के इतिहासमें और किसीका नहीं।

पिताको मार कर भी जब उदयसिंहको गद्दी पानेकी आशा न हुई तो उसने मेवाड़ राज्यके बहुतसे भाग राठोर तथा आस-

पासके राजाओंमें सहायता पानेके लिये बांट दिये। जब इससे भी उसका उद्देश्य सिद्ध न हुआ, तो वह दिल्ली चला गया और अपनी कन्याका विवाह कर देनेकी बात कह कर बादशाहकी सहायताका प्रार्थी हुआ। ईश्वरको यह बात स्वीकार न थी कि स्वर्गीय वप्पाके वंशका गौरव इस तरह धूलमें मिले, इसलिये उदयसिंहकी पापेच्छा पूर्ण न हो सकी। वह बादशाहसे मिल कर ज्यों ही लौटा, उसके शिर पर अकस्मात् बिजली गिरी और वह वहीं मर गया!

सन् १४७६ ई० में कुम्भके द्वितीय पुत्र रायमल चित्तौड़के सिंहासन पर बैठे। गद्दी पर बैठते ही इन्हें दिल्लीके बादशाहके आक्रमणका सामना करना पड़ा। भीषण संग्रामके बाद महाराणाकी विजय हुई। मालवाके शासक गयाशुद्दीनके साथ कई बार युद्ध हुआ, जिसमें महाराणाकी ही विजय हुई। अन्तमें मालवाके साथ सन्धि हो गयी। महाराणा जयमलके शासनमें घरेलू युद्धके लक्षण दिखायी दिये। इनके तीनों पुत्र और भाई सूरजमल गद्दी पानेके लिये आपसमें लड़ने लगे। परस्परका विरोध देखकर महाराणाने अपने दो पुत्र निकाल दिये और तीसरा मर गया। दोनों पुत्र पृथ्वीराज, संग्रामसिंह मेवाड़से चले गये। संग्रामसिंह भीलोंमें जा मिले और उन्हींके साथ भेड़ बकरी चराते रहे। उन्होंने श्रीनगरके एक राठोर कर्मचन्द्रकी पुत्रीसे अपना विवाह किया और वे अपने ससुरके साथ रहने लगे। महाराणा जयमलने पृथ्वीराजको बुलाकर खूब धमकाया और उन्हें फिर देशसे निकलवा दिया। पृथ्वीराजने जब देशसे निकल कर कई स्थान जीते तो महाराणा उनकी वीरतासे बड़े सन्तुष्ट हुए और उन्हें वापस बुला लिया। महाराणाका भाई

सूरजमल दक्षिणमें कई स्थानोंको जीतनेमें समर्थ हुआ और उसने चित्तौड़ पर भी धावा कर दिया। महाराणा उससे लड़े और दोनों भाइयोंमें खूब युद्ध हुआ। पहिले दिन युद्ध हो चुकने पर महाराणाके पुत्र पृथ्वीराज अपने चाचा सूरजमलके पास गये। दोनोंमें प्रेम संवाद हुआ और दोनोंने एक साथ भोजन भी किया। इसके बाद निश्चय हुआ कि दूसरे दिन सवेरे दोनोंमें लड़ाई हो। इस लड़ाईमें सूरजमल मारे गये।

सिरोही वालोंके साथ पृथ्वीराजकी बहनका विवाह हुआ था। उसके साथ बहुत बुरा वर्ताव किया जाता था, इसलिये पृथ्वीराजने सिरोही पर चढ़ाई की और अपनी बहनके भिक्षा मांगने पर सिरोही वालोंकी जान तो न ली, परन्तु उनके शिर पर अपनी बहनकी जूतियां रखायीं। जब वे शान्त होकर लौटे तो उनके खानेके लिये विष मिश्रित लड्डु बांध दिये गये थे, जिन्हें खाते ही वे राहमें मर गये।

कुछ ही कालमें महाराणा रायमलकी मृत्यु हो गयी और संग्रामसिंह उनके स्थान पर चित्तौड़के शासक हुए।

—:—

सप्तम-परिच्छेद ।

राणा संग्रामसिंह ।

सन् १५०९ ई० में महाराणा संग्रामसिंहको चित्तौड़की राजगद्दी मिली। ये बड़े भारी राजनीतिज्ञ थे। मेवाड़की बड़ी भारी उन्नति हुई। महाराणा संग्रामसिंह यदि अपने समयके छत्रपति राजा कहे जायें, तो कोई अत्युक्ति नहीं, क्योंकि प्रायः सभी देशोंके राजा उनका लोहा मान गये थे, उस समय भी मेवाड़में घरेलू युद्ध जारी था। इस सुयोगको पाकर गुजरात और मालवाके शासकोंने विद्रोहियोंको बहुत कुछ सहायता देनी चाही, परन्तु महाराणाकी राजनीतिज्ञताके कारण उनका उद्देश्य पूरा न हुआ। महाराणाने घरेलू झगड़ा दबा कर दोनोंको इस तरह शक्तिहीन बनाया कि वे बहुत दिनों तक शिर न उठा सके। महाराणाने दिल्ली और मालवाके साथ १८ बार युद्ध किया। दिल्लीके बादशाह इब्राहीम लोदीने दो बार चित्तौड़ पर चढ़ाई की। एक बार तो बादशाहके दो चार सिपाही ही बच कर वापस गये। दूसरी बार महाराणा बादशाहके किसी सम्बन्धीको पकड़ लाये थे जिसके लिये उन्हें बहुतसी भेट दी गयी, उत्तरमें बीनाके पास पीलाखाल नदी, पूर्वमें सिन्धु, दक्षिणमें मालबा और पश्चिम में मेवाड़के पहाड़ महाराणाकी शासन-सीमा थे।

सन् १९२६ में मुगल खान्दानका बाबर इब्राहीम लोदीको मार कर दिल्लीमें तख्त पर बैठा और मेवाड़की समृद्धि तथा सौन्दर्यकी

प्रशंसा सुन कर फरवरी १५२७ में उसने मेवाड़ पर चढ़ाई की। उसके साथ बहुत बड़ी सेना थी। इधर राजपूत-कुलवंसगी वीर-शिरोमणि महाराणा संग्रामसिंह भी अपनी सेना और सामन्तोंको लेकर उसका सामना करनेके लिये बढ़े। वियानामें बादशाहकी अग्रसेनाके साथ महाराणाकी मुठभेड़ हुई और वह एकदम नष्ट कर दी गयी। और भी सैनिक सहायताके लिये आये और वे भी काट डाले गये। इस पराजयसे बादशाहकी प्रधान सेनामें बड़ा क्षोभ और निरुत्साह उत्पन्न हुआ। बादशाह भी बड़ा दुःखी हुआ।

बाबरने अपने डेरेके चारों खोर बड़ी बड़ी खाइयां खुदायीं और मिट्टीके ऊंचे बांध तैयार कराकर उन पर तोपें लगवा दीं। इससे भी कुछ फल न हुआ। बादशाहकी सेनामें राजदूतोंका डर बहुत बुरी तरहसे समाया हुआ था। बाबरने अपनी सेनाको उत्साहित करनेका बड़ा प्रयत्न किया, परन्तु उसका साहस न हुआ। बाबरने अपने पुराने पापोंके प्रायश्चित्तके लिये ईश्वरसे प्रार्थना की और शराबकी बोतलें तथा सोने-चांदीके शराब पीनेके बर्तन नष्ट करा कर उनके टुकड़े भिखारियों और फकीरोंको बांट दिये। नमाजके बाद बादशाहने अपने सैनिकोंके हाथमें कुरान देकर उनसे शपथ करायी कि या तो इस युद्धमें विजय प्राप्त करेंगे या यहीं पर लड़ कर मर जायेंगे। इस कार्यका यथोचित फल हुआ। यदि निरुत्साहके समय महाराणा आक्रमण कर देते तो भारतका इतिहास ही बदल कर न जाने क्या हो जाता। विपत्तिके समय शत्रु पर आक्रमण करना रणनिपुण महाराणाने अपने धर्म और नीतिके विरुद्ध समझा। बादशाह बाबरने एक और चाल चली थी। महाराणाके पास उन्होंने एक दूत भेजा और उसके

द्वारा सन्धिका प्रस्ताव किया। जब महाराणाने दूतसे पूछा कि बादशाह किन शर्तों पर सन्धि करना चाहते हैं तो उसने उत्तर दिया कि सन्धिकी शर्तें आप पर ही छोड़ दी गयी हैं। शिलादित्य नामक एक तूबरवंशीय राजपूत महाराणाके अधीन काम किया करता था, जिस पर महाराणाजीका पूर्ण स्नेह और विश्वास था। महाराणाने उसे ही सन्धिकी शर्तें समझा कर बादशाहके पास भेज दिया। सन्धि स्वीकृत न हुई। देशद्रोही राजपूतने विश्वासघात किया। उसने सन्धिमें बाधा उपस्थित की। १६ मार्चको दोनों ओरसे युद्धकी घोषणा की गयी। कई दिनों तक दोनों दलोंमें घोर संग्राम होता रहा। अबकी बार बाबरके पास कई तोपें थीं, जिन्हें दागने वाले फिरङ्गी थे। तोपोंके गोलोंके कारण हजारों राजपूत मारे गये।

महाराणाने शिलादित्यको सेनाके सम्मुख-भागकी रक्षा करने के लिये रणक्षेत्रमें भेजा। जब तक महाराणा पास रहे, उसने शत्रु पर वीरतापूर्वक आक्रमण किये, परन्तु महाराणाके कुछ अलग होते ही वह बाबरसे जा मिला। जब महाराणाने विश्वास-घातकी बात सुनी तो उनका दिल एकदम टूट गया। महाराणाके बहुतसे सहायक युद्धमें काम आये। इब्राहीम लोदीके इकलौते पुत्र भी महाराणाकी सहायता करने आये थे, वे भी मारे गये। बाबर की सेनाके भी बहुतसे आदमी काम आये। महाराणा इस युद्धमें हार कर चित्तौड़ लौटे। वे मेवाड़के पहाड़ी स्थानोंमें चले गये। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि यदि मैं मुसल्मानोंका गर्व चूर न कर सका। तो चित्तौड़ न लौट सकूंगा। यदि वे जीवित रहते तो अपनी प्रतिज्ञा अवश्य ही पूरी करते, परन्तु मन्त्रियोंने उन्हें विष देकर मार डाला। कई युद्धोंमें लड़नेके कारण महाराणाकी एक आंख

जाती रही थी। एक हाथ और एक पांव भी कट गया था और शरीरमें सैकड़ों घाव थे।

महाराणा बड़े प्रजाभक्त थ। एक समय देशमें बड़ा भीषण अकाल पड़ा। लोग वृक्षोंकी छाल और घास उबाल कर खाने लगे। एक दिन जब महाराणा भोजन कर रहे थे, तो सागकी कमी होने पर रसोई बनाने वालेने कहा कि देशमें बड़ा अकाल है और प्रजा भूखों मर रही है। महाराणा यह सुन कर बड़े दुःखी हुए। उन्होंने कहा कि प्रजाके कष्टकी बात मुझसे क्यों नहीं कही गयी। यदि प्रजा पत्तियां और घास खाती है, तो मैं किस तरह उत्तमोत्तम भोजन कर सकता हूं। उन्होंने आज्ञा दी कि जब तक अकाल न मिटे मेरे लिये भी वृक्षोंकी घास उबाली जाया करे। महाराणाने अपनी इस प्रतिज्ञाके अनुसार तीन चार महीने तक उबले हुए पत्ते और घास खाया।

महाराणासंग्राम सिंहकी सेनाके अध्यक्ष सेलम्ब्राके सरदार थे। उनके अनूपसिंह नामक पुत्र थे। अनूपसिंह भी महाराणाकी सेनामें रहकर बाहरसे लड़े थे। पहले युद्धके बाद वे गिरफ्तार कर लिये गये। उनसे बाबरने पूछा कि चित्तौड़के किलेके भीतर जानेका सुगम मार्ग क्या है और महाराणाके पास कितनी सेना है। इसके उत्तरमें अनूपसिंहने कहा कि यदि आप संसारका सुगम मार्ग जान जायें तो चित्तौड़के किलेका भी मार्ग जान सकेंगे और यदि आकाशके तारे गिन सकें तो आपको यह भी पता लग जायगा कि महाराणाके पास कितनी सेना है। जब उनसे राजपूत महिलाओंके सम्बन्धमें पूछा गया तो वे क्रोधमें लाल हो गये। उन्होंने देश और धर्मके सामने अपने छुटकारे की जरा भी परवा न की। उनके मित्र जाजसिंह जो एक दूसरे

राजपूत सरदारके पुत्र थे, बाबरके विरुद्ध महाराणाकी सेनामें लड़े थे। अनूपसिंह अपनी स्त्री और पुत्रका भार इनके ही सुपुर्द कर गये थे। अनूपसिंहसे जो कन्या ब्याही गयी थी, उसे बचपनमें जाजसिंह भी बहुत चाहते थे, क्योंकि वह अत्यन्त सुन्दरी थी। अनूपसिंह भी उसे चाहते थे, परन्तु एक दूसरेको इस प्रेमकी बात न मालूम थी। अन्तमें जब अनूपसिंहके साथ विवाह हो गया तो जाजसिंहने अनूपसिंसे अपने प्रेमकी बात कही और प्रतिज्ञा की कि अब मैं इस कन्याको अपनी बहन समझूंगा और आजीवन विवाह न करूंगा। अनूपसिंह इस प्रतिज्ञा और प्रेमरहस्यको सुन कर बड़े दुःखी हुए।

जब अनूपसिंह युद्धमें बन्दी हो गये और जाजसिंह उनकी स्त्रीके पास आये तो उन्हें अकेला देख राजपूत महिला समझी कि मेरा पति मारा गया। जाजसिंहने कहा कि वे मारे तो नहीं गये, परन्तु कैद कर लिये गये हैं। उन्होंने मुझ पर आपकी रक्षाका भार सौंपा है इसलिये आप चित्तौड़में न रह कर मेरे साथ चलें। जाजसिंहकी यह बात सुन कर महिला क्रुद्ध हुई और उनसे कहने लगी कि अपनी पापेच्छा पूर्ण करनेके लिये तूने मेरे पतिको कैद कराया है। तू मेरे सतीत्वको नष्ट करनेकी कुत्सित इच्छा रखता है। जाजसिंहने अपने हृदयकी पवित्रता की बहुत सफाई दी, परन्तु जब अनूपसिंहकी स्त्री सन्तुष्ट न हुई तो वे उसके पाससे चले गये और प्रतिज्ञा कर गये कि अनूपसिंह तुम्हारे पास आयेंगे। बादशाहके कर्मचारियोंसे प्रार्थना कर वे वहां पहुंचे जहां पर अनूपसिंह कैद थे। उन्होंने अनूपसिंहके कपड़े पहने और अनूपसिंहसे कहा कि महाराणाने तुम्हें शीघ्र ही बुलाया है। अनूपसिंहको कैदसे बाहर कर वे उनकी जगह

पर फांसी चढ़ गये ! जब अनूपसिंह घर आये तो अपनी स्त्रीके मुखसे सब बातें सुन कर जाजसिंहकी रक्षाके लिये चले । जाजसिंह तो फांसी पर लटक ही चुके थे । अनूपसिंह भी गिरफ्तार कर लिये गये । उनकी स्त्री पतिकी मृत्यु सुन कर चितामें भस्म हो गयी ।

महाराणा संग्रामसिंहके सात पुत्र थे, जिनमेंसे दो तो अल्पावस्थामें ही मृत्युको प्राप्त हुए और तृतीय पुत्र रत्नसिंह गद्दी पर बैठे । राजसिंहासन पर बैठते ही उन्होंने आज्ञा निकाली कि चित्तौड़का द्वार सदा खुला रखा जाये । महाराणाके अम्बरके राजा पृथ्वीराजकी पुत्रीके साथ गुप्त विवाह किया था । स्वयं पृथ्वीराजको यह बात न मालूम थी । उन्होंने हाड़ावंशीय सरदार सूरजमलके साथ अपनी पुत्रीका विवाह कर दिया । जब महाराणाको इस विवाहकी खबर लगी तो उन्हें बड़ा दुःख हुआ । राजा सूरजमलकी बहन महाराणाको ब्याही हुई थीं, इसलिये महाराणा उनसे कुछ न कह सके, परन्तु उनके दिलमें बदला लेनेकी इच्छा दिन पर दिन बढ़ती चली गयी । थोड़े दिनमें अहेरियाका दिन आया, जिस दिन महाराणा शिकार खेलने निकलते हैं । सूरजमल यद्यपि महाराणाके अधीन न थे, परन्तु वे महाराणाको बड़ा समझ उनके साथ युद्ध-उत्सवोंमें सामन्तोंके समान सम्मिलित होते थे । सूरजमल महाराणाके साथ शिकार खेलनेको निकले । महाराणाने अवसर देख कर सूरजमलको ललकारा । दोनोंने हाथमें तलवारें ले लीं । खूब युद्ध हुआ और दोनों काम आये ।

महाराणा रत्नसिंहके एक ही पुत्र था जो महाराणाकी आज्ञासे पन्द्रह सोलह वर्षकी अवस्थामें ही फांसी पर लटका दिया गया

था। महाराणा संग्रामसिंहने मालवा और गुजरातके मुसलमान शासकोंको बुरी तरह हराया था। वे दोनों इस पराजयसे दुःखी होकर मेवाड़ पर सदा दृष्टि लगाये रहते थे। जब महाराणा रत्नसिंहके समयमें सामन्तों और सरदारोंके बीच कुछ फूट दिखायी दी तो मेवाड़ पर आक्रमण किया गया। महाराणा आक्रमणकी बात सुन और घरमें फूट देख बड़े दुःखी हुए, परन्तु मन्त्रियोंने उन्हें समझाया कि मेवाड़की रक्षा आपसमें मेल न रहने पर भी अवश्य की जायगी इसलिये रणभेरी बजायी जाये।

महाराणाने रणभेरी बजवा कर हुक्म दिया कि मेवाड़की रक्षाके लिये सब सामन्त और सरदार कराला देवीके मन्दिर में ठीक १२ बजे उपस्थित हों। सामन्त और सरदार ठीक समय पर पहुंच गये, परन्तु जिस समय मन्दिरमें बारहका घण्टा बजा, युवराज वहां पर उपस्थित न थे। उनका एक भीलिनीसे स्नेह था, इसलिये वे उससे मुलाकात करने चले गये थे कि इतनेमें ही घण्टा बज गया। घण्टा बजते ही सरदारोंमें कानाफूसी होने लगी कि युवराज तो अभी तक नहीं आये। यदि हम लोगोंमें से कोई समय पर न आता तो देशद्रोही कहलाता और सम्भव था कि वह फांसी पर भी लटका दिया जाता, परन्तु युवराज किस तरह फांसी पर लटकाये जा सकते हैं। जब महाराणाने पूछा कि सब सरदार सामन्त आ गये तो एक सरदारने खड़े होकर ताना मारा कि सब तो आ गये, परन्तु युवराज नहीं आये। महाराणाने यह बात सुन कर अपने मन्त्रीसे कहा कि फांसी तैयार करो। मन्त्री यह बात सुन कर डर गया और बोला कि महाराज, चित्तौड़के कुलका दीपक न बुझना चाहिये

महाराणाने उत्तर दिया कि युवराजकी जगह पर यदि और कोई होता तो उसे भी यही दण्ड दिया जाता। मैं कोई दूसरी बात नहीं सुन सकता। युवराज, मन्दिरमें बारहका घण्टा बजता सुन भीलिनीके पाससे दौड़ कर मन्दिरमें पहुंच गये थे और उन्हें कुछ ही मिनटका विलम्ब हुआ था। लोगोंने कहा कि महाराणाजी, युवराज तो उपस्थित हैं। महाराणाने कहा कि समय पर उपस्थित नहीं हुए। जब महाराणाका विचार दृढ़ देखा गया तो मन्दिरमें भीलिनीको बुला कर उसके साथ कच्चे बांसोंसे युवराजका विवाह कराया गया और मन्दिरमें ही सुहाग रात्रि मनवायी गयी। दूसरे दिन सवेरे चित्तौड़के युवराज न्यायके नाम पर फांसी पर लटका दिये गये!

महाराणा रत्नसिंहके कोई पुत्र न होनेके कारण उनके भाई विक्रमादित्य चित्तौड़की गद्दी पर बैठे। इनके शासनकालमें घरेलू विरोधकी आग बड़े जोरसे भभकी। भील भी उनसे नाराज रहने लगे। गुजरातके शासकने अच्छा मौका देख कर फिर चढ़ाई की। महाराणा बून्दी राज्यमें शिकार खेलने गये हुए थे। उनपर वहीं आक्रमण किया गया। यद्यपि वे बड़ी वीरतासे लड़े, परन्तु सैन्य-सहायता न रहनेके कारण कुछ न कर सके। उनके साथ जो सरदार थे, वे भी चित्तौड़ और संग्रामसिंहके पुत्र उदयसिंहकी रक्षा करने चले गये। गुजरातका सुल्तान बहादुरशाह महाराणा पर विजय पाकर चित्तौड़ पर आ धमका।

महाराणा संग्रामसिंह और बाबरके बीच जो भीषण संग्राम देशके गौरवकी रक्षाके लिये हुए थे, उनमें बहुतसे राजपूतवीर रणशय्यापर लेट गये थे, जिससे इस युद्धमें चित्तौड़ प्रायः वीरशून्य

दिखायी देता था, परन्तु मेवाड़की तो यह प्राचीन परिपाटी थी कि यदि देशमें एक बालक भी बचेगा तो वह भी देशकी स्वाधीनताके लिये प्राण त्याग करेगा। महाराणा विक्रमादित्यके आचरणसे जो राजपूत सरदार असन्तुष्ट हो गये थे, वे संकटके समय उस असन्तोषको भूलकर शिशोदिया-कुलके गौरवकी रक्षाके लिये तैयार हो गये। मध्यभारतके मुसलमान शासकोंने पहले जितनी बार चित्तौड़ पर चढ़ाई की, उन सबसे यह चढ़ाई भयानक थी। बहादुरशाह, फिरङ्गी गोलन्दाज तथा कई तोपें अपने साथ लाया था। चित्तौड़के जो वीर आक्रमणकारीका सामना करने पहुंचे, उनकी संख्या बहुत ही कम थी। मुसल्मान सेनापर बड़ी वीरतासे आक्रमण किया गया और मुसल्मानोंकी तोपें भीषण अग्निवर्षा करने लगीं। कई बार बहादुरशाहने चित्तौड़के दरवाजों पर आक्रमण किया, परन्तु वीर राजपूतोंने उन्हें पीछे हटाया। कई दिनों तक यह युद्ध चला। फिरङ्गी गोलन्दाजने एक नयी युक्ति सोची। उसने पहाड़ीके नीचे सुरङ्ग खोद कर उसमें बारूद भर दी। सुरङ्गमें आग लगाने पर बड़ा भयानक शब्द हुआ और इस शब्दके होते ही किलेकी ५० हाथ जमीन एक साथ उड़ गयी। उसी स्थान पर हाडावीर राजकुमार अर्जुनराव अपने पांचसौ वीरों समेत युद्ध कर रहे थे, वे सेना समेत जमीनके अन्दर धंस गये। किलेकी दीवारोंमें भी कई स्थानों पर छेद हो गये। जिस किलेके अन्दर मनुष्य तो क्या एक चींटी भी प्रवेश न कर सकती थी, उसके भीतर बहादुरशाहकी आज्ञासे हजारों सैनिक घुसनेको तैयार हुए। वीरवर, दुर्गाराव और दो चन्द्रावत अपनी थोड़ीसी सेना लेकर किलेपर आ डटे। ऐसा भीषण युद्ध हुआ और मुसल्मानोंकी इतनी सेना मरी कि लाशों

के ढेर पर चढ़नेसे चित्तौड़के भीतरकी कितनी ही चीजें दिखाई देती थीं।

जब बहादुरशाह इस युद्धसे वापस गया और उसने अपने सैनिकोंकी गिनती की तो उसे बड़ा भय हुआ। उसका भय किस कामका था। इधर चित्तौड़के वीरोंकी संख्या भी बहुत थोड़ी रह गयी।

अगले दिन बहादुरशाहने किलेमें प्रवेश करनेके लिये बड़ा भीषण प्रयत्न किया। छिद्रोंके रक्षक वीर दुर्गाराव आदि युद्धमें काम आ चुके थे, इसलिये किलेकी रक्षाकी चिन्ता तमाम चित्तौड़ में होने लगी। महाराणी जवाहरबाईने कहा कि द्वारोंकी रक्षा का प्रबन्ध मैं कर लूंगी। लड़नेवाले निश्चिन्त होकर रणस्थलको जायें। जब मुसलमानोंने छिद्रोंपर धावा किया तो उन्होंने देखा कि महाराणी कई बीर नारियोंको साथ लिये बाल खोले हुए, हाथमें नङ्गी तलवार लिये घोड़े पर रणचण्डीकी मूर्ति बनी बैठी हैं और छिद्रोंकी रक्षा कर रही हैं। मुसलमानोंको आगे बढ़ता देख महाराणी और उनके साथकी अन्य वीरांगनाओंने तिनकेकी तरह हजारों मुसलमानोंको काट डाला। मुसलमानोंकी सेना एक साथ सन्ध्या होते होते महाराणीकी छोटीसी सेना पर टूट पड़ी। उसी समय लोगोंने देखा कि एक भीलकुमार पांचसौ भील-बालकोंको लिये घोड़े पर चढ़ा हुआ तीर छोड़ता चला आता है। पहले तो महाराणीको इस बातकी बड़ी चिन्ता हुई कि यह नया शत्रु कौन आया, परन्तु जब आने वाले सैनिकोंके मुखसे 'मेवाड़की-जय' 'बप्पारावल और शिशोदियोंकी जय' सुनी तो महाराणीजीका उत्साह कई गुना बढ़ गया। बहादुरशाहके सब सिपाही मार कर खतम कर दिये गये।

महाराणी जब विजय दुन्दुभि बजाकर चित्तौड़ वापस लौटीं तो शिशोदियावीरोंने देखा कि भीलकुमार चित्तौड़ वापस न आकर अपने बचे हुए साथियोंको लेकर दूसरी तरफ जा रहा है। महाराणीने उसका परिचय पानेके लिये उसे बुलवा भेजा। भीलकुमारने आकर महाराणीके चरण छुए। महाराणीने अपने हाथसे भीलकुमारके मस्तक पर तिलक खींच दिया। उस समय तक महाराणाके कोई पुत्र न था। महाराणी जवाहरबाईको जब यह मालूम हुआ कि कुमार महाराणा रत्नसिंहके पुत्रके वीर्यसे उत्पन्न हुआ भीलनीका बालक है, तो उसे शिशोदिया वंशका समझ उनके हर्षका कोई ठिकाना न रहा। भीलकुमारने अपने नानाके यहां जब यह सुना कि मातृभूमि चित्तौड़ पर आक्रमण हुआ है, तो उसने नानासे इस युद्धमें भाग लेनेकी आज्ञा मांगी। नानाने कहा कि हम भील हैं इस लिये हमें महाराणाकी सेनामें कोई उच्च स्थान सामन्त रूपसे नहीं मिल सकता। मैं इसी कारण युद्धमें नहीं गया। कुमारने उत्तेजित होकर उत्तर दिया कि क्या चित्तौड़पुरी महाराणाकी ही है। जिस मनुष्यने मेवाड़में जन्म लिया है और उसका अन्न खाया है उसका कर्त्तव्य है कि देश पर संकट आने पर उसकी रक्षा करे। नानाका हृदय कुमारकी यह बात सुन कर प्रेमपूर्ण हो गया और उसने कुमारके साथ पांचसौ भील देकर उसे देशरक्षाके लिये रणस्थलमें भेज दिया। वीर बालकने महाराणी जवाहरबाईकी सहायता बड़े ही जटिल समयमें की।

पिछले दिन विजय प्राप्त कर महाराणीजी अगले दिन फिर अपनी सखी सहेलियों और भीलकुमारको लेकर चित्तौड़की रक्षाके लिये जा डटीं। इस दिन स्वयं बहादुरशाह हाथी पर चढ़

कर चुनी हुई सेना साथ लेकर आक्रमण करने पहुंचा। वीर क्षत्राणीके साहसको देख कर उसका दिल टूट गया। परन्तु उसने तैयारी पूरी कर रखी थी। जब महाराणीने चित्तौड़ रक्षाका कोई उपाय न देखा तो वे अपने दल समेत मुसलमान सेनाके भीतर चली गयी। कुछ देर तक तो वे घायल होनेपर और शिरके ऊपर तलवारें नाचने पर भी भीषण युद्ध करती रहीं। अन्तमें जब उन्हें और कोई सहायता न मिली तो धीरता, दृढ़ता और त्याग का सच्चा आदर्श दिखाकर वे वीरगतिको प्राप्त हुईं। उनका समस्त दल भी उसी दिन रणशायी बना।

इस दुर्घटनाके बाद सरदारोंने आपसमें विचार किया कि अब क्या होना चाहिये। सभामें आवाज उठी कि 'जुहार-व्रत' और 'राजबलि' की तैयारी करनी चाहिये। राजबलि किस तरह होती। महाराणाका खोज करने पर कहीं पता ही न लगा। महाराणा संग्रामसिंहका एक छोटा बालक ही मौजूद था। वह किस तरह खड्ग धारण करता। जब यह चिन्ता हो रही थी तो देवलाके सामन्त बाघाजीने आकर कहा कि मेरी नशोंमें बप्पारावलका रक्त बह रहा है। मैं इस व्रतका पालन करूंगा। सबकी चिन्ता दूर हुई। बाघाजी सिंहासन पर बैठाये गये और उन्होंने रणमें जानेकी तैयारी की। सब सरदारोंने पीले कपड़े पहने। आपसमें एक दूसरेसे मिलकर सबने अन्तिम भेट की। संग्रामसिंहके बालक उदयसिंहकी रक्षाका भार बूंदीके विश्वासी राजाके हाथ सौंपा गया। युद्धके पहले 'जुहार-व्रत' का कार्य सम्पन्न हुआ। चिताएं तैयार करनेके लिये जब समय न दिखायी दिया तो किलेके भीतर एक बड़ा गढ़ा खोदा गया और वह बारूद आदिसे भरा गया। कुछ ही देरमें महाराणी कर्णावती

तेरह हजार राजपूत बालाओंको अपने साथ लकर जलती हुई अग्निमें कूद पड़ी । किसीका कोई चिन्ह तक शेष न रहा ! रूप, यौवन लावण्य सबकी आहुति क्षण भरमें दे दी गयी ।

राजपूत-सरदार निश्चिन्त होकर चित्तौड़का द्वार खोलकर रणोन्मत हो बाहर निकले । बाघाजीने थोड़ेसे सरदारोंको लेकर मुसल्मानी सेनामें प्रवेश किया, परन्तु फल कुछ भी न हुआ। सारे राजपूत वीर बहादुरशाहके सैन्यसागर में लीन हो गये । बहादुरशाहने श्मशान समान चित्तौड़में प्रवेश किया, उसे स्थान स्थान पर कटे हुए अगणित मनुष्य शरीर तथा रक्त मांसके ढेर दिखायी दिये । घायल मनुष्य अपने ही हाथसे अपनी छुरियां पेटमें घुसेड़ते देखे गये । इस युद्धमें चित्तौड़के बत्तीस हजार वीरोंने प्राणाहुति दी । पन्द्रह दिन तक बहादुरशाह चित्तौड़में विजयोत्सव मनाता रहा । जब उसने सुना कि दिल्लीके बादशाह हुमायूं चित्तौड़के उद्धारके लिये बहुत बड़ी सेना लिये आ रहे हैं, तो वह फौरन चित्तौड़ त्याग कर अपने देशको चला गया । यह चित्तौड़का दूसरा 'साका' माना जाता है । हुमायूंने मालवेकी राजधानी माण्डूको अपने अधिकारमें कर लिया क्योंकि मालवेके शासकने चित्तौड़की चढ़ाईमें बहादुरशाहकी मदद की थी । इसके बाद विक्रमादित्य चित्तौडकी गद्दी पर फिर बैठा दिये गये ।

विक्रमादित्यके गद्दीपर बैठनेसे सरदार फिर असन्तुष्ट हुए । उन्होंने विचार किया कि विक्रमादित्यको गद्दीसे उतार कर पृथ्वीराजकी उपपत्नीके गर्भसे उत्पन्न हुए बनवीरको राजगद्दी देनी चाहिये । बनवीरने पहले तो गद्दी स्वीकार न की परन्तु पीछेसे उसने उसे स्वीकार कर लिया ।

अष्टम-परिच्छेद ।

उदयसिंह ।

जब सरदारोंने विक्रमादित्यको गद्दीसे उतार कर बनवीरको गद्दी पर बैठाया तो जिस वनवीरने एक दिन चित्तौड़की गद्दी पर बैठनेके लिये बहुत आनाकानी की थी, वही गद्दी पर बैठ कर इस चिन्तामें पड़ा कि चित्तौड़की गद्दी उसके लिये किस तरह सुरक्षित हो। उसने एक बार भी न सोचा कि यह राजसिंहासन जिसका है वह उससे एक दिन वापस मांगेगा। उसने अपना मार्ग साफ करनेका उपाय सोच निकाला। उसने निश्चित किया कि यदि बालक उदयसिंहको इस संसारसे विदा कर दिया जाये, तो मेरे वंशधर निश्चिन्त होकर राज्य कर सकेंगे। उदयसिंहकी अवस्था उस समय केवल ६ वर्षकी थी और उनका लालन पालन एक खीची वंशीय राजपूत धायके हाथमें था। एक दिन रातको दुष्ट वनवीरने राणा विक्रमादित्यको मार डाला। रनवासमें घोर आर्त-नाद हुआ। जब उदयसिंहकी दाई पन्नाने महलोंसे रोनेकी आवाज सुनी तो उसे आश्चर्य हुआ और वह सब हाल जाननेके लिये महलमें जाना ही चाहती थी कि इतनेमें एक बारी जो राजकुमारका जूठन उठाया करता था दौड़ा हुआ आया और बोला कि बहुत बुरा हुआ। वनवीरने राणा विक्रमादित्यको मार डाला। पन्ना पहलेसे ही इस बातको कुछ कुछ जानती थी। उसे निश्चय हो गया कि वनवीर केवल विक्रमादित्यको मार कर ही चुप न होगा, वह

राजकुमार पर भी हाथ साफ करेगा । दाईने राजकुमारको एक टोकरीके अन्दर रख कर उसके ऊपर पत्ते बिछा दिये और बारीके हाथमें उस टोकरेको देकर कहा कि इसे अभी लेकर किलेसे चला जा । नदीके किनारे पर ठहरना, वहीं मैं तुमसे मिलूंगी । राजकुमारके स्थानमें पन्नाने अपने लड़केको सुला दिया जिससे वनवीर को किसी तरहका सन्देह न हो । वह बाहर जाना ही चाहती थी कि वनवीर हाथमें रुधिरसे सनी नङ्गी तलवार लिये पहुंचा और उसने पूछा कि उदयसिंह कहां है ? स्वामिभक्त पन्नाने अपनी अंगुली के इशारेसे अपने पुत्रको दिखा दिया । निर्दयी वनवीरने उसका तुरन्त ही काम तमाम कर दिया । छोटा बालक थोड़ासा चिल्ला कर समाप्त हो गया, दाईके सामने उसके पुत्रकी हत्या हुई, परन्तु वह उसके लिये रो तक न सकी । पुत्रका अन्तिम संस्कार कर वह किलेसे बाहर निकली । रनवासमें रानियोंने और उदयपुरके सब सरदारोंने यही समझा कि वनवीरने संग्रामसिंहके पुत्र उदयसिंह को मार डाला । पन्ना बारीकी तलाशमें घूमने लगी । चित्तौड़की पश्चिम ओर बेरिस नदीके किनारे वह मिल गया । पन्ना राजकुमार को लेकर बाघाजीके पुत्र सिंहरावके पास पहुंची, परन्तु उन्होंने बनवीरके भयसे राजकुमारकी रक्षाका भार अपने ऊपर न लिया । इसके बाद पन्ना डूङ्गरपुरके रावल यशकर्णके पास पहुंची, परन्तु उन्होंने भी उसकी बात न सुनी । कई दिन पहाड़ोंके अन्दर और ईदरके आसपासके गांवोंमें भीलोंके साथ पन्ना घूमती रही । उन दिनों आशाशाह नामक एक जैन राजपूत कमलमीरके दुर्गमें राज प्रतिनिधि होकर शासन किया करता था । पन्नाने उनसे जाकर प्रार्थना की कि अपने भावी नरेशके प्राण बचाइये । आशाशाहकी माता उनके पास खड़ी हुई थी । जब आशाशाहने कुछ आनाकानी

की तो उनको माताने कहा कि समरसिंहका पुत्र तुम्हारा स्वामी है। यदि इसे भी आश्रय न दोगे, तो फिर किसे दोगे ? कुमारका यहां रहना निश्चित हुआ और आशाशाह उसे अपना भतीजा बना कर प्रयत्नसे रखने लगे।

आशाशाहके यहां किसी उत्सव पर जब बाहरके बहुतसे लोग भोजन करने आये, तो उदयसिंहका ढङ्ग देखकर बहुतसे राजपूतों के हृदयमें सन्देह हो गया। झलोरके सोनगड़े सरदार किसी कार्य-वश आशाशाहसे मिलने गये। उनके स्वागतका भार उदयसिंहको मिला। सरदारोंने उदयसिंहको देख कर निश्चय किया कि यह किसी तरह भी आशाशाहका भतीजा नहीं हो सकता। उन्हींके द्वारा सर्वत्र यह समाचार फैला और मेवाड़के सभी सामन्त और सर-दार, स्वर्गीय राणाके वीरपुत्रका अभिवादन करने पहुंचने लगे। चण्डवंशीय सालम्ब्रापति साहीदास, कैलवापति जागो, कटोरिया और वेदलाके चौहान आदि कमलमीर पहुंचे। दाई पन्ना और बारी बुलाया गया। कमलमीरके सभागृहमें बड़ा भारी दर-बार हुआ। आशाशाहने राजकुमारका सारा वृत्तान्त प्रकट किया, दाई और बारीने समर्थन किया। मेवाड़के वृद्ध चौहान सरदारने राजकुमारके साथ बैठ कर एक ही थालमें भोजन किया। जब यह समाचार चित्तौड़ पहुंचा तो वनवीरका हृदय कांप उठा। थोड़े ही दिनोंके बाद सोनगड़े सरदार अखिलरायने अपनी कन्याके साथ उदयसिंहका विवाह कर दिया। विवाह होने पर महाराणा कुम्भ की राजसभामें उदयसिंहके मस्तक पर चित्तौड़के सरदारोंने राज-तिलक कर दिया। चित्तौड़के सभी सामन्त वनवीरसे अप्रसन्न थे क्योंकि उसने उनके साथ अनेक प्रकारके अत्याचार आरम्भ कर दिये थे। मेवाड़में प्रथा है कि राणाके थालसे दौना निकाल कर

जिसके पास भेजा जाता, वह बड़े सम्मानकी बात समझी जाया करती थी। एक दिन चण्डके वंशधर सालम्ब्राधिपतिने बनवीरका दौना लेना अस्वीकार किया। यह कह कर दौना फेर दिया गया कि वप्पारावलके सच्चे वंशधरका ही दौना लिया जा सकता है, दासीपुत्रका नहीं लिया जा सकता। इसी कारण बनवीरने जब सभामें उनका अपमान किया तो सारे सरदार बिगड़ उठे। जब सब सरदार कमलमीर उदयसिंहके राजतिलकमें सम्मिलित होनेके लिये जा रहे थे, तो बनवीरकी लड़कीके दहेजका जो सामान जा रहा था, वह सरदारोंने लूट लिया। लूटकी सब सामग्री उदयसिंह को भेट की गयी। चित्तौड़में बनवीरने युद्धकी तैयारी आरम्भ कर दी। उसके मन्त्रीने राजकुमारके एक पक्षके एक हजार सिपाही नगरमें घुसा दिये। उन्होंने तुरन्त ही आक्रमण कर दिया। सन् १५४२ ई० में सरदारोंने बनवीरको गद्दीसे उतारकर उदयसिंहको राजगद्दी पर बैठा दिया। बनवीरकी सन्तान नागपुरके भोंसले हुए।

जिस वर्ष उदयसिंह चित्तौड़की राजगद्दी पर बैठे, उसी साल अमरकोटकी मरुभूमिमें अकबरका जन्म हुआ, जिसने कालान्तरमें चित्तौड़का ध्वंस कर हिन्दू स्वतंत्रता पर पदाघात किया। अकबरका पिता हुमायूं दिल्ली छोड़ कर भागा था, परन्तु पीछे सुअवसर पाकर वह फिर दिल्ली लौट आया और और अपने पुत्र अकबरकी सहायतासे राजसिंहासन पानेमें समर्थ हुआ। अकबरने बारह वर्षकी अल्पावस्थामें जो वीरता और साहस दिखाया, उसे देख कर उसका पिता परम सन्तुष्ट हुआ। हुमायूंकी मृत्युके बाद सन् १५५६ ई० में अकबर १४ वर्षकी अवस्थामें दिल्लीके तख्त पर बैठा। कुछ दिनों तक राज्यकार्य वैरामखांने चलाया और फिर

अकबर ही सब काम देखने लगे। अकबरने अपने बाहुबलसे बहुतसे स्थान जीते और अपना राज्य चारों ओर बढ़ाया, परन्तु राजपूताना और विशेष कर मेवाड़को जीते बिना उनकी उच्चाभिलाषा पूर्ण न हुई। वे राजपूतानाके राजाओंको जीत कर उनकी कन्याओंसे विवाह भी करना चाहते थे। यही कारण था कि मेवाड़के कुलाभिमानी राजपूतोंने बड़ी वीरतासे उनका सामना किया। राजपूताना जीतनेके लिये अकबरने सबसे पहले मारवाड़के राठोरों पर चढ़ाई की और मेरता नगर विध्वंस कर दिया। इस विजयने अम्बरके राजा भरमल्ल और उनके पुत्र भगवानदासके दिलमें बड़ी खलबली पैदा कर दी। अन्तमें उन्होंने अपने कुल-गौरव और प्राचीन स्वाधीनताके बदलेमें अकबरकी प्रसन्नता और शान्ति माल ले ली। भरमल्लने अपनी कन्याका विवाह अकबरके साथ कर दिया। इस आक्रमणके बाद अकबरका ध्यान विद्रोही उजबक सरदारोंकी ओर गया। उन्हें दबा कर अकबरने चित्तौड़ पर चढ़ाई की। पहले तो उदयसिंहने अकबरसे लड़नेमें आनाकानी की, परन्तु जब वीर सरदारों और चारणोंने उनकी बहुत निन्दा की तो उन्हें लड़ाईके लिये तैयार होना पड़ा।

युद्ध आरम्भ हो गया, परन्तु राणाके हृदयमें साहस और दृढ़ताका अभाव था। उनकी सेना पीछे हटी और मुगलसेनाने उसका पीछा किया। अन्तमें अकबरने उदयसिंहको कैद कर लिया। चारणोंका कहना है कि उदयपुरके मस्तक पर यह सर्वप्रथम कलङ्कका टीका लगा। जब उदयसिंहके पकड़े जानेका समाचार चित्तौड़ पहुंचा तो वहांके वीर सरदारोंने सुनी हुई बात अनसुनी कर दी। उदयसिंहकी उपपत्नीके हृदयमें दारुण क्रोध

उत्पन्न हुआ। उसने गहने उतार कर हाथमें तलवार ली और मेवाड़की बची हुई सेना लेकर युद्धस्थलकी ओर रवाना हुई। उपपत्नी द्वारा चढ़ाई होनेकी बात सुन कर सरदार भी सुसज्जित होकर उसके साथ लड़ने पहुंचे। बीर महिलाने अकबरसे लड़नेमें बड़ा परिश्रम दिखाया। अकबरकी सेनाके पांव उखड़ गये। राजपूतोंने भागती हुई सेनाका पीछा कर बहुतसे सैनिक मारे और वीर रमणी अपने पतिको छुड़ा कर चित्तौड़ लौटी। उदयसिंहने अपनी उपपत्नीकी बड़ी प्रशंसा की और उसे बहुत कुछ इनाम दिया। राणा बहुधा कहा करते थे कि बीराकी बहादुरीसे मेरा छुटकारा हुआ। सरदार यह बात सुन कर बड़े क्रुद्ध होते थे। अन्तमें उन्होंने षड्यन्त्र रचकर वीराको मरवा डाला। इस हत्यासे चित्तौड़में बड़ी अशान्ति फैली, घरेलू झगड़ोंने फिर जोर पकड़ा। अकबरने इस झगड़ेकी खबर पाकर चित्तौड़ पर फ़िर चढ़ाई कर दी।

चित्तौड़के पंडोली-गांवमें मुगल सेनाने डेरा डाला। अकबरके आक्रमणको देखकर उदयसिंह चित्तौड़ छोड़ भागे। उनके भाग जानेपर भी चित्तौड़ वीरशून्य न था। अगणित वीर नङ्गी तलवारें लेकर अकबरका सामना करने पहुंचे। अनेक राजाओंने मेवाड़की पतितावस्थामें भी मेवाड़की रक्षाके लिये सहायता दी। सूर्यपोलद्वारकी रक्षाका भार चन्द्रावत शाहीदासके हाथ सौंपा गया। मन्दोरियाके शेखावत, विजोलीके परमोर, मांदीके झलावत आदि बहुतसे सरदार चित्तौड़के रणस्थलमें एकत्र हुए। अकबरके पास इस बार भी कई तोपें थीं, परन्तु द्वितीय पक्षके पास तीर-कमान बर्छा और भालोंके सिवा और कुछ न था। मुसल्मानोंने सूर्यपोल पर बड़ा भयानक आक्रमण किया

और शाहीदासके साथ कई घण्टे तक भीषण युद्ध हुआ। शाही-दासकी वीरताने राजपूतोंको दूना उत्साहित किया, परन्तु वे बहुत देर तक उस स्थान पर न टिक सके और वहीं पर काम आये। विदनोरके राजा जयमल और कैलवाड़ाके चन्द्रावत फतेहसिंह (फत्ता) ने युद्धमें बड़ी बहादुरी दिखायी। दोनोंकी वीरताका इतिहास स्वयं अकबरने लिखा है। बादशाहने दोनोंकी प्रतिमूर्ति अपने दरबारमें बनवायी थी। जब सरदार शाहीदास के नाद बीरवर फत्ताने सूर्यद्वारकी रक्षाका भार अपने ऊपर लिया उनकी आयु केवल १६ वर्षकी थी। उनकी माता और धर्मपत्नी भी घोड़ेपर सवार होकर निकली और अकबरकी सेना पर आक्रमण कर अपनी वीरताका परिचय दे वीर गतिको प्राप्त हुई। अपनी माताओं और स्त्रियोंको इस प्रकार लड़ते देख राजपूत अपनी सुध भूलकर बड़ी भीषणतासे लड़े। अन्तमें फत्ता भी रणशायी हुए। जयमल उनके स्थानपर डटकर सूर्यद्वारकी रक्षा करने लगे, परन्तु वे बड़ी बुरी तरह घायल हुए। जब उन्हें विजयकी कोई आशा न दिखायी दी, तो उन्होंने 'जुहार-व्रत' के उद्यापनकी घोषणा की। आठ हजार राजपूतोंने पीले वस्त्र धारण कर अन्तिम बीड़ा उठाया। चित्तौड़का द्वार खोलकर वे बाहर निकले। परन्तु मुगल सेनाके सामने उनके पैर न जमे। अगणित सेनाका सामना कर एक भी वीर राजपूत वापस न लौटा और किसीने जुहार-व्रत और केसरिया वस्त्र पर धब्बा नहीं लगाया। इस युद्धमें महाराणाके बहुत ही निकट सम्बन्धी सत्तरहसौकी संख्यामें काम आये। राजमहलकी नौ रानियां और पांच राजकुमारियां सामन्त सरदारों और अन्य राजपूतोंकी स्त्रियोंको साथ लेकर जीवित ही

चितामें कूदकर भस्म हो गयीं ! अकबरने चित्तौड़ पर अधिकार किया और कई दिन तक विजयोत्सव मनाया। देवीके मन्दिरके कई दीपक, राजद्वारके दो बड़े बड़े नगाड़े चित्तौड़के सिंहद्वारोंके दो दरवाजे अकबर अपने साथ दिल्ली ले गया। अकबरने अपने हाथसे ही जयमलके प्राण लिये थे। जिस बन्दूकसे उन्होंने उन्हें मारा था, उसका नाम संग्राम रखा गया। चित्तौड़ पहुंच कर जब अकबरने मृत राजपूतोंके जनेऊ तराजूमें रखकर तौले तो उनका वजन चार सेरके मनके हिसाबसे साढ़े चौहत्तर मन हुआ। चित्तौड़की शोचनीय दुर्दशाका यह प्रत्यक्ष उदाहरण आज भी भारतवासियोंकी चिट्ठियों पर दिखायी देती है। चित्तौड़ पर इस बार जैसी भीषण विपत्ति आयी उसके कारण उसके उद्धारकी कोई आशा न रही। उदयसिंहने चित्तौड़से भागकर पहाड़ोंकी तराईमें एक गांव बसाया, जिसका नाम उदयपुर रखा गया। इस युद्धके चार वर्ष बाद ४२ वर्षकी अवस्थामें गोगुण्डा नामक स्थानमें महाराणा उदयसिंह स्वर्ग सिधारे। उस समय उनके पच्चीस पुत्र मौजूद थे। मरते समय महाराणा अपने छोटे पुत्र जगमलको उत्तराधिकारी निश्चित कर गये थे। महाराणाकी मृत्युका शोक जब राज-महलोंमें मनाया जा रहा था, तो जगमलके राज्याभिषेककी तैयारियां होने लगीं। मेवाड़के जो सरदार वहां पर उपस्थित थे उन्होंने शीघ्र ही गुप्तरूपसे परामर्श किया। महाराणा उदयसिंहने सोनगढ़के सरदारकी पुत्रीसे जो विवाह किया था, उन्हींके गर्भसे वीर श्रेष्ठ हिन्दूसूर्य क्षत्रियकुल चूड़ामणि महाराणा प्रतापने जन्म लिया था। प्रतापके मामा झालोरराव अपने भानजेको राजसिंहासनपर बैठानेके लिये बड़े व्यग्र हुए। उन्होंने

मेवाड़के चन्दावत सरदार कृष्णजीसे पूंछा कि प्रतापका राज-सिंहासन पर अधिकार होने पर भी उन्हें उससे वञ्चित रखनेकी सम्मति आपने कैसे दे दी। कृष्णजीने कहा कि मैंने आपके भानजेको ही उचित उत्तराधिकारी समझा है। मैं उसके पास ही खड़ा हूंगा। जगमल जब रसोईघरमें राणाकी गद्दी पर भोजन करनेके लिये बैठा और प्रताप मेवाड़ छोड़नेकी तैयारी करने लगे, उसी समय झालोरराव और कृष्णजीने मिलकर जग-मलका हाथ पकड़ कर गद्दीसे उतार दिया और कहा कि आपको भ्रम हो गया है। इस सिंहासनके अधिकारी प्रतापसिंह ही हैं। साथ ही साथ सलम्ब्राधिपतिने भी प्रतापको मेवाड़के महाराणा कह कर उनका अभिवादन किया। इसके बाद और सभी सर-दारोंने प्रतापसिंहको महाराणा मान लिया। इस चुनावके कारण जो आपसमें विद्वेषाग्नि फैली, उसने मेवाड़का बड़ा अनर्थ किया।

यह चित्तौड़का अन्तिम साका कहा जाता है।

———::❀::———

चितामें कूदकर भस्म हो गयीं! अकबरने चित्तौड़ पर अधिकार किया और कई दिन तक विजयोत्सव मनाया। देवीके मन्दिरके कई दीपक, राजद्वारके दो बड़े बड़े नगाड़े चित्तौड़के सिंहद्वारोंके दो दरवाजे अकबर अपने साथ दिल्ली ले गया। अकबरने अपने हाथसे ही जयमलके प्राण लिये थे। जिस बन्दूकसे उन्होंने उन्हें मारा था, उसका नाम संग्राम रखा गया। चित्तौड़ पहुंच कर जब अकबरने मृत राजपूतोंके जनेऊ तराजूमें रखकर तौले तो उनका वजन चार सेरके मनके हिसाबसे साढ़े चौहत्तर मन हुआ। चित्तौड़की शोचनीय दुर्दशाका यह प्रत्यक्ष उदाहरण आज भी भारतवासियोंकी चिट्ठियों पर दिखायी देती है। चित्तौड़ पर इस बार जैसी भीषण विपत्ति आयी उसके कारण उसके उद्धारकी कोई आशा न रही। उदयसिंहने चित्तौड़से भागकर पहाड़ोंकी तराईमें एक गांव बसाया, जिसका नाम उदयपुर रखा गया। इस युद्धके चार वर्ष बाद ४२ वर्षकी अवस्थामें गोगुण्डा नामक स्थानमें महाराणा उदयसिंह स्वर्ग सिधारे। उस समय उनके पचीस पुत्र मौजूद थे। मरते समय महाराणा अपने छोटे पुत्र जगमलको उत्तराधिकारी निश्चित कर गये थे। महाराणाकी मृत्युका शोक जब राजमहलोंमें मनाया जा रहा था, तो जगमलके राज्याभिषेककी तैयारियां होने लगीं। मेवाड़के जो सरदार वहां पर उपस्थित थे उन्होंने शीघ्र ही गुप्तरूपसे परामर्श किया। महाराणा उदयसिंह ने सोनगड़ेके सरदारकी पुत्रीसे जो विवाह किया था, उन्हींके गर्भसे वीर श्रेष्ठ हिन्दूसूर्य क्षत्रियकुल चूड़ामणि महाराणा प्रतापने जन्म लिया था। प्रतापके मामा झालोरराव अपने भानजेको राजसिंहासनपर बैठानेके लिये बड़े व्यग्र हुए। उन्होंने

मेवाड़के चन्दावत सरदार कृष्णजीसे पूंछा कि प्रतापका राज-सिंहासन पर अधिकार होने पर भी उन्हें उससे वञ्चित रखनेकी सम्मति आपने कैसे दे दी। कृष्णजीने कहा कि मैंने आपके मानजेको ही उचित उत्तराधिकारी समझा है। मैं उसके पास ही खड़ा हूंगा। जगमल जब रसोईघरमें राणाकी गद्दी पर भोजन करनेके लिये बैठा और प्रताप मेवाड़ छोड़नेको तैयारी करने लगे, उसी समय झालोरराव और कृष्णजीने मिलकर जग-मलका हाथ पकड़ कर गद्दीसे उतार दिया और कहा कि आपको भ्रम हो गया है। इस सिंहासनके अधिकारी प्रतापसिंह ही हैं। साथ ही साथ सलम्ब्राधिपतिने भी प्रतापको मेवाड़के महाराणा कह कर उनका अभिवादन किया। इसके बाद और सभी सर-दारोंने प्रतापसिंहको महाराणा मान लिया। इस चुनावके कारण जो आपसमें विद्वेषाग्नि फैली, उसने मेवाड़का बड़ा अनर्थ किया।

यह चित्तौड़का अन्तिम साका कहा जाता है।

[illegible] ।

महाराणा प्रताप ।

सन् १५७२ ई० में महाराणा प्रताप मेवाड़के महाराणा बने, परन्तु महाराणाके पास न तो पुरानी राजधानी ही थी, न पुराना सैन्यदल और न कोष ही था। महाराणाजी रातदिन इसी चिन्तामें रहने लगे कि चित्तौडका उद्धार किस तरह किया जाये। वे इस बातको अच्छी तरह जानते थे कि अकबरकी सेना और शक्तिके सामने हमारी शक्ति कुछ भी नहीं। चारण और भट्टोंके मुखसे अपने पूर्वजोंकी कीर्ति और वीरता सुन कर प्रतापके हृदयमें देशोद्धार और स्वाभिमानने पूरा स्थान पा लिया। मेवाड़के सभी सरदारोंने महाराणाजीकी उच्चाभिलाषाका हृदयसे समर्थन किया। अकबरने मेवाड़के सारे सरदारोंको धन-दौलत और राज्यका लोभ देकर अपनी ओर मिलानेकी चेष्टा की, परन्तु चण्ड जयमल और फत्तेके वंशधरोंने किसी भी लोभमें पड़कर महाराणाका साथ नहीं छोडा। अकबरने भी स्वयं महाराणाको कई बार लिखा कि यदि आप मेरे दरबारमें आकर एक बार आकर भारतेश्वर कह कर पुकारें तो मैं अपने राजसिंहासनकी दाहिनी और आपको स्थान देनेको तैयार हूं। परन्तु महाराणाने किसी भी प्रलोभनमें आकर अपना प्राचीन गौरव न घटाया। वे सदा कहा करते थे कि बप्परावलका वंशज मुगलोंके सामने शिर नहीं झुका सकता। एक दिन अपने सरदारोंके साथ बैठे हुए महाराणाने इस बातकी

प्रतिज्ञा करायी कि जब तक मेवाड़का गौरवोद्धार न हो, मेवाड़ सन्तान सोने-चांदीके थालोंमें भोजन न कर पेड़के पत्तों पर भोजन किया करें, कोमल शय्याके स्थानमें घास पर सोया जाये, महलोंकी जगह घास और पत्तोंकी कुटियोंमें निवास किया जाये। राजपूत अपनी दाढ़ी-मूछों पर छुरा न चलवायें। रण-डङ्का फौज के पीछे बजा करे। वीरवर प्रताप सदा कहते थे कि मेरे दादा और मेरे बीचमें यदि मेरे पिता उदयसिंह न हुए होते, तो चित्तौड़ का सिंहासन शिशोदिया-कुलके हाथसे न जाता। महाराणाने जब सबसे प्रतिज्ञा करायी तो स्वयं भी इस प्रतिज्ञाका पालन करने लगे।

मुगल-सेनाके विरुद्ध लड़नेके लिये महाराणाने एक उपाय सोच निकाला। उन्होंने राज्यमें आज्ञा निकाली कि मेवाड़की सारी प्रजा बस्ती और नगरोंको छोड़कर परिवार समेत अरावली-पर्वतोंके बीच रहने लगे। जो इस आज्ञाका पालन न करेगा, वह शत्रु समझा जायेगा और उसे प्राणदण्ड होगा। इस आज्ञाका पालन उन्होंने बड़ी कठोरतासे किया। जिसने आज्ञा पालन न की, वही मार डाला गया। एक चरवाहेको भी प्राणदण्ड भोगना पड़ा था। सामन्तोंने धन-संग्रहका एक और मार्ग निश्चित किया। उन दिनों सूरत बन्दरसे सारे भारतको मेवाड़ होकर व्यापर-सामग्री जाया करती थी। सरदारोंने दल बांध कर वह सामग्री और खजाने लूटने शुरू कर दिये। इस लूटसे महाराणाके पास बहुतसा धन आ गया। अकबरने जब महाराणाकी सब बातें सुनी, तो वह बड़ा क्रुद्ध हुआ और वह अपनी सारी सेना सजा कर अजमेरके पास डेरा डाल बैठा। अकबरके पास कई लाख सेना थी। मारवाड़के राव मालदेवने

जब अकबरकी इस भयानक चढ़ाईका हाल सुना तो उसने बड़े बेटे उदयसिंहको अकबरके पास भेज दिया। अजमेरमें उदयसिंह ने अकबरसे सन्धि कर ली और उसी दिनसे मारवाड़के राजाओं को अकबरकी दी हुई 'राजा' उपाधि भोगनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। मालदेव भी अकबरसे मिला, और उसने अपनी पुत्री जोधाबाईका विवाह अकबरके साथ कर दिया। जिन राजाओंके वंशधर मेवाड़को विपत्तिके समय महाराणाओंकी सहायता किया करते थे, वे ही मेवाड़को दासत्वके बन्धनमें डालनेके लिये अकबर का साथ देनेको तैयार हो गये। उनके साथ देनेका एक और भी कारण था। जब सारे राजपूतोंने अपनी कन्याएं अकबरको दे दीं, तो मेवाड़के शिशोदियोंने उन राजाओंसे अपना सम्बन्ध त्याग दिया। वे सबको कुलहीन राजपूत समझने लगे। एक दिन जब शोलापुरके युद्धमें विजय पाकर अम्बर नरेश राजा मान-सिंह अपनी राजधानी लौट रहे थे, तो उन्होंने सोचा कि महाराणा प्रतापसे यदि इस समय मुलाकात की जायेगी तो अपने घर आये हुए अतिथिका वे अपमान न करेंगे। यह समझ कर उन्होंने अपनी सेना यथास्थान भेज दी और कुछ चुने हुए आदमी लेकर उदयपुर पहुंचे। उदयसागरके किनारे मानसिंहका स्वागत करने का प्रबन्ध किया गया। मानसिंहने सरदारोंसे कहा कि किसी विशेष कारणवश मैं महाराणासे मिलने आया हूं। सर्दार महा-राणाके पुत्र अमरसिंहको उनके साथ लेकर पहुंचे कि महाराणाके शिरमें दर्द है। आप भोजन कीजिये इसके बाद महाराणा आप से मिलेंगे। मानसिंह समझ गये और उन्होंने महाराणासे कहलाया कि मैं आपके शिर-दर्दका कारण जानता हूं। जो कुछ हो गया वह तो वापस आ नहीं सकता। उसे तो किसी तरह

मिटाना ही होगा। हम लोगोंने जो कुछ किया है, वह हिन्दुओं की मर्यादा और आपकी प्रतिष्ठा रखनेके लिये ही किया है। मुझे भी अपनी भूल मालूम होती है। जब तक आप न आयेंगे मैं थाल पर किसी तरह नहीं बैठ सकता। घर आये हुए अतिथिका अपमान हिन्दू धर्मके विरुद्ध है। जब महाराणाने ये बातें सुनीं, तो वे कुटियासे बाहर निकल आये और बोले कि जिस राजपूतने अपनी बहन देकर धन और शान्ति खरीदी है, बप्पारावलका वंशज उसके साथ भोजन नहीं कर सकता! जिस स्वाभिमानको बेच कर आपने हिन्दू-धर्म रक्षा करनी चाही है, वह यदि आपके कार्य बिना रसातल चला जाता तो ठीक था! मानसिंहने थाल पर बैठ कर कुछ ग्रास नैवेद्यके लिये निकाले और वे भोजन किये बिना ही उठ गये। उन्होंने कहा कि यदि मेरे यहां चले आने पर भी हम लोगोंका मनोमालिन्य दूर न हुआ, तो आपको भी भयानक परिणामका सामना करना पड़ेगा। मानसिंहको उस समय क्रोध आ गया और उन्होंने घोड़े पर सवार होकर कहा कि यदि मैंने तुम्हारा यह अभिमान चूर्ण न किया तो मेरा नाम मानसिंह नहीं।

महाराणा भी मानसिंहकी ये बातें सुन उत्तेजित होकर बोले कि अब रणस्थलमें ही हम दोनोंकी मुलाकात होगी। महाराणाके एक सरदारने ताना मार कर कहा कि युद्धमें आते समय अपने बहनोईको भी साथ लेते आना। जिन पात्रोंमें मानसिंहके लिये भोजन बनाया गया था, वे सब तोड़ कर फेंक दिये गये। जिन लोगोंने भोजन बनाया या मानसिंहका स्पर्श किया था, उन सबने कपड़े बदले। जिस स्थान पर मानसिंहने भोजन किया था, उस स्थानकी मिट्टी खोदकर मेवाड़के बाहर फेंकी गयी और गङ्गाजल

से वह स्थान पवित्र किया गया। राजा मानसिंह उदयपुरसे प्रस्थान कर अकबरके पास पहुंचे और उन्होंने अपने अपमानकी सारी बातें उनसे कहीं। बादशाह बड़ा क्रुद्ध हुआ और कई लाख सेना सजाकर मानसिंह, उनके भानजेने सलीम और सगर के पुत्र मुहब्बतखांको साथ देकर महाराणा-प्रतापके विरुद्ध चढ़ाई कर दी। मुहब्बतखां सगरजीका पुत्र था जो महाराणा प्रतापके भाई थे। वह किसी मुसलमान-स्त्रीके प्रेममें फंस कर मुसलमान हो गया था। जब महाराणा पर चढ़ाई करनेके लिये घरका भेदी भेजा गया तो, उसने अपने देशद्रोहका पूरा परिचय दिया। वह गिरि-मार्गोंसे परिचित था, इसलिये उदयपुरके पश्चिम कई कोसके मैदानमें बादशाहकी सेनाने डेरा डाला। महाराणा युद्धकी तैयारी की बात पहलेसे ही सुन चुके थे, इसलिये बाईस हजार राजपूत और कुछ भीलोंको पहाड़ोंके चारों ओर रख दिया गया और शत्रुओं पर बरसानेके लिये पत्थर भी एकत्र कर लिये गये।

सन् १५७६ ई० के जुलाई मासमें हल्दीघाटीके मैदानमें दोनों दल वाले भिड़े। महाराणा अपने सामन्तोंको साथ लेकर मुगल सेनामें घुस पड़े। पहले आक्रमणसे ही मुगल-सेनाके छक्के छूट गये। वह छिन्न भिन्न हो गयी। महाराणाने पुकार कर कहा कि राजपूत-कुल-कलङ्क मानसिंह कहां हैं, परन्तु उन्हें कोई उत्तर न मिला। महाराणा अपने चेतक घोड़े पर सवार होकर सलीम के पास पहुंचे। शत्रुको सामने देखते ही महाराणाका उत्साह दूना हो गया। उन्होंने चेतककी लगाम खींची और चेतकने उन्हें लेकर अपने दोनों पांव हाथीके शिर पर जमा दिये। महाराणाने अपना भाला उठाया, जिसे देखकर सलीम घबरा गया और उसने

हाथ जोड़ कर क्षमा मांगी। महाराणाने अपना घोड़ा वापस लौटा लिया और नीचे उतर कर उन्होंने कहा कि शरणागत शत्रु पर हिन्दू आक्रमण नहीं किया करते। महाराणाने सलीमके हौदेमें बड़े जोरसे अपना भाला मारा था, जिससे हौदा फट गया और महावत मर गया। हाथी बड़े वेगसे सलीमको लेकर भागा। इधर महाराणाको नीचे उतरा देख मुगल सेनाने उन्हें घेर लिया। राजपूतोंने बड़े उत्साहके साथ महाराणाकी रक्षाके लिये प्राण त्याग दिये, परन्तु महाराणाकी सेना कम होनेके कारण उनका बल घटने लगा। महाराणाके शरीरमें इस समय तक एक गोली लगने के सिवा तलवारके तीन और भालेके तीन घाव हो चुके थे।

महाराणाने सब स्थानोंको खूब कस कर बांधा और बड़े उत्साहसे लड़ने लगे। उन्हें यह बात मालूम हो चुकी थी कि यह युद्ध बहुत देर तक न चल सकेगा, परन्तु क्षत्रियवीरने एक क्षण भर भी युद्ध स्थल छोड़ कर भागनेका प्रयत्न न किया। इसी समय थोड़ी ही दूर पर मेवाड़की जय और महाराणा प्रतापकी जय सुनायी पड़ी, जिसे सुन कर महारणा और भी जोरसे गरजने लगे। झालापति मन्नाजीने जब यह देखा कि महाराणाके शिर पर मेवाड़के छत्र-चंवर तथा अन्य सारे राजचिन्ह हैं, इसीसे मुगल अपनी सारी शक्ति उन्हींके विरुद्ध लगाये हुए हैं, तो उन्होंने वहां पहुंच कर महाराणासे कहा कि ये सारे चिन्ह मुझे देकर आप चले जाइये, परन्तु माहाराणाने कहा कि प्रताप जीवित रहता हुआ रणस्थल नहीं छोड़ सकता। मन्नाजीको जब कोई उपाय न सूझा, तो उन्होंने महाराणाका मुकुट और छत्र छीन कर अपने शिर पर रखा और चेतक घोड़ेकी पूंछ काट दी। चेतक महाराणाको लेकर युद्ध-स्थलसे निकल गया। मुगल मन्नाजीको

महाराणा समझ उन पर ही आक्रमण करने लगे और थोड़ी ही देर बाद वीर झालापति परम धामको पधारे। उनकी अपूर्व स्वामि-भक्तिके कारण उनकेवंशजोंको महाराणाकी ओरसे बहुतसी जागीर मिली, सरदारोंमें सर्वोच्च पद मिला। वे राजाके नामसे पुकारे गये और उनके नगाड़े महाराणाके भवनके द्वार तक बज सकते थे।

महाराणाकी वीरता और आत्मत्यागको देख कर राजपूत उनके चले जाने पर भी बहुत देर तक उत्साह पूर्वक लड़े, परन्तु मुगल सेनाकी अधिक संख्या होनेके कारण कोई फल न हुआ। मुगलसेनाके पास तोप, बन्दूक और गोलाबारीका पूरा सामान था, परन्तु महाराणाकी सेना भाला, तलवार और तीर-कमानसे ही लड़ती थी। सन्ध्याके बाद जब युद्ध समाप्त हुआ, तो बाईस हजार राजपूतोंमेंसे केवल आठ हजार वापस लौटे। महाराणाके कईसौ घनिष्ट सम्बन्धी युद्धस्थलमें काम आये। जब चेतक घोड़ा महाराणाको लेकर भागा, तो दो मुसल्मान और एक राज-पूतने उनका पीछा किया। पहाड़ोंके बीच होता हुआ एक नदी को पार कर चेतक दूसरी तरफ चला गया, परन्तु उसका पीछा करने वाले नदी पार न कर सके। पीछेसे बन्दूकका शब्द सुनायी दिया। किसीने आवाज भी दी। महाराणाने देखा कि दोनों मुगल सैनिक मार डाले गये हैं और उनके भाई शक्तिसिंह आ रहे हैं!

शक्तिसिंह एक दिन महाराणासे लड़ कर जन्मभूमिका मोह त्याग अकबरसे जा मिले थे। उनकी इच्छा थी कि महाराणाका नाश कर मेवाड़की गद्दी प्राप्त की जाये और इसी उद्देश्यसे अक-बरके साथ उन्होंने महाराणा पर चढ़ाई की। परन्तु जब उन्होंने अकबरकी सेनाके व्यूहके बीच खड़े होकर महाराणाका अपूर्व

त्याग और देशरक्षाका दृढ़ व्रत और शरीरके घावोंसे निकलता हुआ रुधिर देखा, तो शक्तिसिंहका हृदय पिघल गया और भाईका उद्धार करनेके लिये वे उनके पीछे रवाना हो गये। मार्गमें जब और दो मुग़लोंको उनका पीछा करते देखा तो बन्दूकसे उन्हें मार डाला। महाराणाने सोचा कि शायद शक्तिसिंह बदला लेने आ रहा है, इसलिये वे हाथमें तलवार लेकर खड़े हो गये, परन्तु शक्तिसिंह उनके पास पहुंच कर उनके चरणोंमें गिर पड़े और आंखोंमें आंसू भर कर अपने अपराधोंके लिये क्षमा मांगने लगे। इसी समय महाराणाके प्यारे घोड़ेने प्राण त्याग दिये। महाराणाने उस स्थान पर एक स्मारक बनवाया जो आज भी चेतकका चबूतरा कहलाता है।

शक्तिसिंहने अपना घोड़ा महाराणाको दिया और सलीमके सन्देहसे बचनेके लिये वे वहांसे चल पड़े। उधर शक्तिसिंहकी आकृति और उनके विलम्बको देख कर सलीमका सन्देह हो गया और जब शक्तिसिंहने यह कहा कि दोनों मुगल महाराणाके हाथसे मारे गये, तो सन्देह और भी बढ़ गया। सलीमने कहा कि यदि तुम सब बातें सच सच कह दोगे, तो मैं तुम्हारा कसूर माफ कर दूंगा। शक्तिसिंह रोकर बोले कि मेरे भाईके शिर पर मेवाड़ सरीखे बड़े राज्यका भार है। हजारों आदमियोंका सुख-दुःख उन्हीं पर निर्भर है। ऐसी विपत्तिके समय में उनकी सहायता न करता तो क्या करता। सलीमने और न कुछ कह कर अपनी सेनासे उन्हें अलग कर दिया। शक्तिसिंह हल्दीघाटीके मैदानसे लौट कर जिस समय उदयपुर आ रहे थे, तो भीम-सरोवर-किला जो अकबरके हाथमें था, जीतनेमें समर्थ हुए और अपने भाईको उदयपुरमें इस किलेकी भेट दी।

उधर नकली वजियका आनन्द मनाता हुआ सलीम हल्दीघाटके पहाड़ी स्थानोंको त्याग कर चला गया, क्योंकि वर्षाऋतुके कारण नदियां उमड़ पड़ी थीं और पहाड़ी स्थान दुर्गम हो गये थे। महाराणाका पीछा नहीं किया जा सकता था। महाराणाको इस बीच विश्राम लेनेका समय मिल गया। परन्तु सन् १५७७ ई० के जनवरी मासमें मुगल सेनाने उदयपुर पर फिर आक्रमण कर दिया। इस युद्धमें भी महाराणा अपनी थोड़ीसी सेना लेकर मुगलोंके साथ बड़ी वीरतासे लड़े। अन्तमें वे उदयपुर छोड़ कर कमलमीर चले गये। अकबरके सेनापति शहबाजखांने कमलमीरको भी जा घेरा। बहुत देर तक महाराणा इस किलेमें रह कर मुगल सेनाका सामना करते रहे। परन्तु उस मुगल सेनापतिके साथ मेवाड़का जो देशद्रोही राजपूत देवराज था, उसने महाराणासे कमलमीर भी छुड़ा दिया। देवराजको यह बात मालूम थी कि कमलमीरमें एक ही कुंआ है, जिसका पानी सब पीते हैं, इसलिये उसने कुंएमें कुछ मरे हुए जहरीले सांप डलवा दिये थे। पानी खराब हो जानेके कारण महाराणाको अपना आश्रय-स्थान त्याग देना पड़ा। महाराणा चौंड़ नामक पहाड़ी किलेमें चले गये। मुगलोंने वह स्थान भी जा घेरा। भयानक युद्धके बाद सरदार भानुसिंह और मेवाड़के प्रधान महाकवि मारे गये। उन दिनों सारे मेवाड़के लोग इतने उत्तेजित हो चुके थे कि वे जहां कहीं भी किसी मुसलमानको पाते थे उसे मार डालते थे।

जिन दिनों महाराणा कमलमीरके किलेमें बन्द थे, मानसिंहने धर्मेती और गोगुंद नामक किले जीत लिये। मुहब्बतखांने उदयपुर पर अधिकार जमाया। अमीशाह नामक एक दूसरे

मुसल्मान सेनापतिने अपनी सेनाको चौंड़ और अगुणपांडोरके बीचके मैदानमें अड़ा दिया। जिससे महाराणाका भीलोंसे सम्बन्ध न रहा। फरीदखां चप्पनको घेर कर चौंड तक बढ़ा। महाराणाका आश्रयस्थान चारों ओरसे घिर गया। यद्यपि मुगलोंने महाराणाके रहनेके लिये कोई स्थान न छोड़ा, मुगल सेना पहाड़की प्रत्येक गुफामें उन्हें पकड़नेके लिये ढूंढ़ने लगी, परन्तु प्रतापसिंहको कोई न पकड़ पाया। जब कभी वे मुगलसेनाको असावधान पाते, उस पर टूट पड़ते। कुछ ही दिनोंमें उन्होंने फरीदखांको उसकी सारी सेना समेत काट डाला। दूसरी, तीसरी और चौथी वर्षाऋतु इसी तरह निकल गयी। वर्षाऋतुमें महाराणाको विश्रामका कुछ समय मिल जाता था, बाकी समयमें वे मुगलोंका सामना ही करते रहे।

कई वर्ष बीतने पर भी महाराणाकी विपत्ति कम न हुई। उन्हें किसी तरह भी न छोड़ा गया। महाराणाके स्थान एक एक कर मुगलोंके हाथ जाने लगे। अन्तमें उन्हें अपने परिवार की रक्षा भी कठिन दिखायी दी। एक समय वे सपरिवार शत्रुओं-के हाथ पड़ ही चुके थे कि गिहलोत कुलके भीलोंने उनका उद्धार किया। महाराणा भीलोंके साथ दूसरे मार्गसे चले गये। उनके परिवारको टोकरोंमें रख कर भीलोंने जावरेकी टीनकी खानोंमें छिपा दिया। पचासों वार भीलोंको मुगलोंके हाथसे रक्षा करनेके लिये महाराणी, कुमार अमरसिंह और राजकुमारीको वृक्षोंसे लटकाना पड़ा। आज तक भी उन स्थानोंमें बहुतसे कड़े और बड़ी बड़ी किलें गड़ी हुई दिखायी देती हैं। जिस महाराणी, राजकुमारीने कभी महलोंके बाहर पैर तक न रखा था, वे पवित्र स्वाधीनता और कुल-गौरवके लिय

सन्यासी महाराणाके साथ भूखे-प्यासे कांटोंके जङ्गलों और नोकीले पत्थरोंके बीच घूमने लगीं । महाराणाकी इस धीरता, त्याग और सहनशीलताका समाचार जब अकबरने सुना तो उसने अपना विश्वासी गुप्तचर भेज कर महाराणाकी वास्तविक अवस्था जाननी चाही । उसने लौट कर जब अकबरके दरबारमें कहा कि मैंने अपनी आंखोंसे देखा है कि प्रतापसिंह अब भी पहाड़ों और जङ्गलोंमें पेड़ोंके नीचे बैठ कर अपने सरदारोंको दौना बांटते हैं, तो अकबरके चरणोंमें आत्मसमर्पन करनेवाले राजपूत भी महाराणाके गुणोंका वर्णन करने लगे । खानखानाने बड़े महत्वपूर्ण शब्दोंमें महाराणाकी प्रशंसा की ।

एक दिन महाराणीने कई दिन भूखे रहनेके बाद घासके बीज एकत्र कर कुछ रोटियां बनायीं, आधी आधी रोटी कुमार-कुमारी-को देकर आधी-आधी रोटी दूसरे दिनके लिये उनके खानेको रख दी । महाराणा भी कुछ रोटी खाकर एक वृक्षके नीचे लेटे हुए थे तो एक बनविलार कुमारीके हाथसे घासकी रोटी छीनकर भागा । कुमारी बड़े जोरसे रोने लगी । महाराणाने देखा कि बालिका रोटीके रो रही है । महाराणीकी आंखोंमें भी आंसू भर रहे हैं, तो उनका हृदय विदीर्ण हो गया । मेवाड़ाधिपति महाराणाकी कन्या घासकी रोटीके लिये दहाड़ मारकर रो रही है ! यह महाराणाके लिये असह्य हो गया । जिन महाराणाका हृदय रणस्थलमें सहस्रों वीरोंकी रणशय्या देखकर विह्वल न हुआ था, वह कन्याके आर्तनादसे शोकातुर हो उठा ।

महाराणा अधीर होकर बोले कि इस प्रकारकी पीड़ा सह कर राजमर्यादाकी रक्षा असंभव मालूम होती है । थोड़ी देर बाद उन्होंने अकबरके पास सन्धिका प्रस्ताव भेज दिया । महाराणाका

सन्धि-प्रस्ताव जब अकबरके पास पहुंचा, तो उसके हृदयमें 'हिंदू-पति' कहलानेकी इच्छा फिर जाग्रत हो गयी। सारे शहरमें रोशनी करायी गयी। घर—घर गाना-बजाना होने लगा और दिल्लीमें कई दिन तक बड़ी धूम रही। सलीम और बीकानेरके राजाके छोटे भाई पृथ्वीराजको महाराणाका पत्र दिखाया गया। इस पत्रको अकबरने उपरोक्त दोनों व्यक्तियोंको कई कारणोंसे दिखाया था। सलीम अकबरको सदा ताना मारा करता था कि महाराणा प्रतापके रहते हुए आप 'हिन्दूपति' की उपाधि नहीं पा सकते। सलीम भगवानदासकी कन्याका पुत्र था। सलीम-की माता जब कभी पितृगृह जाया करती थीं तो वे अपनी बहन-से मिला करती थीं जो उदयपुर ब्याही हुई थीं। उदयपुर ब्याही हुई बहन अकबरसे ब्याही जानेवाली अपनी बहनके साथ भोजन नहीं करती थी और उनके पीनेके लिये उदयपुरसे पानी जाया करता था। अकबरकी स्त्रीको यह बात बड़ी बुरी लगा करती थी और वह सदा अकबरसे कहा करती थी कि महाराणाके रहते हुए आप 'हिन्दूपति' नहीं कहे जा सकते। सलीम अपनी माताके कथनानुसार ताना मारा करता था। सलीमने अकबरसे यह भी कह दिया कि मैं रणक्षेत्रमें महाराणासे प्राणभिक्षा मांग कर लौटा हूं, इसलिये उनसे लड़नेके लिये अब न जाऊंगा। वह वास्तवमें कभी महाराणाके विरुद्ध लड़नेको गया भी नहीं। बीकानेर नरेशके भाई पृथ्वीराज अकबरके यहां कैद थे और वे इस बात पर विश्वास करनेके लिये तैयार न हुए कि महाराणाने सन्धिपत्र भेजा है।

पृथ्वीराजका विवाह महाराणा प्रतापके छोटे भाई शक्ताजीकी लड़कीसे हुआ था। जब बीकानेर नरेशने अपनी लड़की अकबर

को दी तो पृथ्वीराजने उनका तीव्र प्रतिवाद किया और वे लड़नेके लिये तैयार हो गये। इस पर वे कैद कर लिये गये। उनकी स्त्री जितनी सुन्दरी थी उतनी ही वीर भी थी। उन्हें अपने पितृगृहका बड़ा भारी अभिमान था। अकबर दिल्लीमें एक मेला हरसाल लगवाया करता था, जिसका नाम 'नौरोज' या 'खुशरोज' था। इस मेलेमें एक बहुत बड़ा बाजार महलोंके पीछे लगाया जाता था। राजपूतोंकी स्त्रियां और लड़कियां इस बाजारमें चीजें बेचने जाया करती थीं और उनके बीच अकबर रूपलावण्यका आनन्द लूटनेके लिये घूमा करता था और किसी पुरुषके जानेकी आज्ञा न थी। पृथ्वी-राजकी स्त्री पर उसकी आंख बहुत दिनसे लगी हुई थी, क्योंकि एक तो वे अत्यन्त सुन्दरी थीं और दूसरे उदयपुरके शिशोदिया वंश की थीं। जब वे एक दिन नौरोजके मेलेमें आयी हुई थीं तो उनके लौटने पर अकबरने और सब मार्ग तो बन्द करा दिये, केवल अपने महलका मार्ग खुला रखा। उस खुले हुए द्वारसे जब वे जाने लगीं, तो उन्हें राहमें ही दुराचारी अकबरने घेर लिया। कामोन्मत्त होकर उसने राजपूतबालाको अनेक प्रकारके प्रलोभन दिये। उसकी यह घृणित चेष्टा देख वीर महिलाने तत्काल ही अपनी बगलसे छुरी निकाली और उसे नीचे गिरा कर उसके ऊपर सवार होकर बोली कि यदि मुंहसे एक भी शब्द निकाला तो यह छुरी तेरे कलेजके पार हो जायेगी! राजपूत-सतीका यह अद्भुत साहस देख कर अकबरका होश हवा हो गया। उसकी कामवासना जाती रही और अपने प्राणोंकी चिन्ता हुई। रानीने बड़े जोरसे कहा कि कुरानको हाथमें लेकर शपथ खा कि आजके बाद मैं किसी अबला पर अत्याचार न करूंगा और न किसी राजपूत-कुलमें कलङ्क लगाऊंगा। अकबरने रानीके कथनानुसार

शपथ खायी। रानी जब उसे छोड़कर जाने लगीं तो उन्होंने अकबरकी मूंछ एक तरफकी काट ली। जिस पृथ्वीराजकी रानीने अकबरको ऐसा बदला दिया, उन्हींके भाई बीकानेरके राजा रायसिंहकी स्त्री अकबरके दिये हुए लालचमें फंस गयीं और उन्होंने अपना अमूल्य सतीत्व अकबरके हाथ बेच डाला! पृथ्वी-राजने अपने भाईसे इस घटनाका वृत्तान्त बड़े मर्मभेदी शब्दोंमें कहा था।

जब पृथ्वीराजने महाराणा प्रतापके पत्रको देखा तो उन्होंने अकबरसे कहा कि मैं महाराणाको अच्छी तरह जानता हूं और उनके हस्ताक्षर भी पहचानता हूं। मैं दावेके साथ यह बात कह सकता हूं कि यह पत्र उनका लिखा हुआ नहीं है। यदि आप अपना राजमुकुट भी उनके शिरपर रख दें, तो भी वे आपके सामने शिर नहीं झुका सकते। इसके बाद पृथ्वीराजने बादशाहकी आज्ञासे राणा को एक पत्र लिखा और दूत उनके पास भेजा। पत्रका कुछ मूल अन्श यह है—

अकबर समद अथाह, सूरायण भरियो सजल।
मेवाड़ो तिणमाहिं, पोयण फूल प्रताप सी ॥ १ ॥
अकबर एकणबार, दागलकी सारी दुनी।
अणदागल असवार, रहियो राणप्रताप सी ॥ २ ॥
अकबर घोर अन्धार, ऊंघाणा हिन्दू अबर।
जागे जगतादार, पोहरे राण प्रताप सी ॥ ३ ॥
हिन्दूपति परताप, पतिराखो हिन्दुआणरी।
सहे विपति सन्तान, सत्य शपथ कर आपणी ॥ ४ ॥
चौथो चोतोडाह, बांटो बाजन्तीतणू।
दीसै मेवाड़ाह, तो सिर राण प्रताप सी ॥ ५ ॥

चम्पा चीतोडाह, पौरसतणो प्रतापसी ।
सोरम अकबर शाह, अडियल आ भडिया नहीं ॥६॥
पातलखाग प्रमाण, सांची सांगाहरतणी ।
रही सदा लगराण, अकबरसू ऊभीअणी ॥ ७ ॥

दोहा—माई जण अहड़ा जणा, जहडा राणप्रताप ।
अकबर सूतो ओझकै, जाण सिराणो सांप ॥८॥

सोरठा—राओ अकबरियाह, तेज तिहारो तुरकड़ा ।
नम नम नीसरियाह, राण बिना सह रावजी ॥९ ॥
सह गावड़ियें साथ, येकण वाडै वाड़ियां ।
राणा न मानी नाथ, तोड़े राण प्रताप सी ॥१०॥
सोयो सो संसार, असुरप ढाजे ऊपरे ।
जागे जगदातार, पोहरे राण प्रताप सी ॥११॥

दोहा – धर वांको दिन पांधरा, मरदन मूके माण ।
घणे नरिन्दां घेरिया, रहे गिरिन्दां राण ॥१२॥

उपरोक्त कविताका भावार्थ यह है,—

१—अकबर अथाह समुद्र है जिसमें वीर रूपी जल भरा हुआ है। इस समुद्रमें मेवाड़ कमलके फूलके समान जलसे लिप्त नहीं ।

२—अकबरने एक ही वार सारी दुनियां कलङ्कित बना दी। केवल राणा प्रताप ही अकलङ्कित बचे ।

३—अकबरके घोर अन्धकारमें और सब हिन्दू सो गये। ईश्वरकी कृपा होनेसे वे जागेंगे। पहरे पर राणा प्रताप हैं ।

४—हिन्दूपति प्रताप हिन्दुओंकी लाज रखने वाले हैं। जिन्होंने अपनी शपथ सत्य बनानेके लिये विपत्ति और सन्ताप सहा ।

५—चित्तौड़पति, मेवाड़-पतनके लिये चार बार विजयके लड्डू बांट चुके। अब आपका शिर ही दिखायी देता है।

६—चित्तौड़ाधीश, आप पौरुषके चम्पा-फूल हैं। अकबर आपकी सुगन्ध लेनेके लिये अड़ा हुआ है, परन्तु पाता नहीं है।

७—राणा सांगाकी सन्तान और अकबरके बीच आकाश पातालका अन्तर है। अब तक अकबरके साथ सदा खड़ी नोक रही है।

८—माताएं राणा-प्रतापके समान ही पुत्र जन्मती रहें। जिसके कारण अकबर अपने शिरके पास सांप समझ कर सदा सशङ्क होकर सोता है।

९—अकबरके तेजके सामने राणाको छोड़ कर और सब राव शिर झुका कर निकल गये।

१०—जितने भी बैल थे, सबने नाथ डलवा ली, परन्तु एक राणा प्रतापने नाथ नहीं डलवायी।

११—ऐश आरामके पलङ्ग पर सारा संसार सो गया। ईश्वरकी इच्छा होनेसे वह जगेगा। पहरे पर राणा प्रताप हैं।

१२—मर्द अपना मान नहीं त्याग करते, चाहे वे कितने ही कष्टमें क्यों न हों। यद्यपि अनेक मनुष्योंने घेरा परन्तु महाराणा पहाड़ोंके बीच स्वतन्त्र ही रहे।

पृथ्वीराजके इस पत्रको पढ़ कर वीर शिरोमणि महाराणा प्रताप बड़े उत्साहित हुए। उन्होंने पत्र ले जानेवाले दूतसे कह दिया कि वह मेरा पत्र नहीं था। मैं मुगलोंके सामने

शिर झुकाना अपमान ही नहीं घोर पाप समझता हूं। दूतको रवाना करनेके बाद महाराणा मुगल सेना पर टूट पड़े और सारी सेना काट डाली। दिल्ली खबर पहुंचते ही वहांसे बहुतसी सेना भेज दी गयी और फिर महाराणा का पीछा किया गया। महाराणा फिर छिप छिप कर आक्रमण करने लगे। जिन जङ्गलोंमें महाराणा रहते थे, उनके वृक्षोंके फल-फूल खतम हो गये और पानीकी कमीसे घास भी पैदा न हुई। जिन चीजोंको खाकर वीर अपने प्राणकी रक्षा किये हुए थे, उनका भी अभाव हो गया! इस विपत्तिके समय राणा ने अपने सरदारोंके साथ बैठ कर निश्चय किया कि अब इस स्थानमें गुजारा नहीं हो सकता। इसलिये यहांसे चल कर सिन्धु-नदीके तट पर रहना चाहिये। यात्राकी तैयारी हुई, जीवन मरणके साथ देनेवाले सरदार अपने परिवार समेत उनके पास पहुंच गये। जब महाराणा अपनी प्यारी जन्मभूमि त्याग कर पहाड़ोंके नीचे उतरे तो उनकी आंखोंसे एक आंसू निकल पड़ा जिसे देख कर मेवाड़ राज्यके प्रधान कोषाध्यक्ष भामाशाहने कहा कि महाराज, मुझे छोड़ कर कहां जायेंगे। ठहरिये, मैं भी आपके साथ चलनेके लिये आ रहा हूं। अपनी स्त्रीसे विदा मांग आऊं। भामाशाह अपने घर आये और अपनी स्त्री तथा पुत्रको बुला कर बोले कि जिस राज्यकी बदौलत हम लोगोंने लाखों करोड़ोंकी सम्पत्ति पायी है, उसी देशके प्राण महाराणा प्रताप आज धनके बिना मेवाड़की इस दीनावस्थामें देशको मुसल्मानोंके हाथमें छोड़ कर जाना चाहते हैं। हमारे धनका सदुपयोग इस समयसे बढ़ कर नहीं हो सकता। यदि देश अपने पास बना रहेगा, तो धन-सम्पत्ति फिर हो जायगी।

यह कह कर भामाशाहने अपनी स्त्री और पुत्रको एक एक वस्त्र पहनाया और बाकी सारी सम्पत्ति महाराणाके चरणोंमें डाल दी! इतिहासकारोंने लिखा है कि यह सम्पत्ति २०।२५ हजार सैनिकोंके भरण पोषणके लिये दस-बारह वर्षके लिये पर्याप्त थी। इस विपुल धनको पाकर स्वाधीनताकी लीलाभूमि मेवाड़ त्यागनेका विचार महाराणाने छोड़ दिया। सरदारों और महाराणाजीके हृदयमें उत्साहकी कमी तो थी ही नहीं, केवल कुछ अवलम्बकी आवश्यकता थी, जिसे वैश्यशिरोमणि राजभक्त भामाशाहने पूरी की। महाराणाने नयी सेना एकत्र की और मुगलसेनाके अधिपति शहवाजखां पर टूट पड़े। देवीरमें भयानक युद्ध हुआ, जिसमें शहवाजखां और उसकी सारी सेना काम आयी।

महाराणाने इसके बाद अमैत नामक दुर्ग पर धावा किया, जहां पर बहुतसी मुसल्मान-सेना थी। वह किला भी उन्हें मिल गया। मुगलसेना काट डाली गयी। थोड़ेसे बचे हुए सैनिक कमलमीर चले गये। विजयोन्मत्त राजपूतवीरोंने शीघ्र ही कमलमीर पर चढ़ाई कर दी और मुगलसेनापति अब्दुल्ला तथा समस्त सेनाको मार डाला। यद्यपि मुगलोंकी तुलनामें राजपूत-सेना कुछ भी न थी, तो भी स्वदेशोद्धारकी दृढ़ प्रतिज्ञा मुगलोंकी सेनाकी संख्यासे कहीं अधिक शक्तिवान् थी। थोड़े ही दिनों बाद चित्तौड़, अजमेर और मण्डलगढ़को छोड़ कर सारा मेवाड़ मुसल्मानोंके हाथसे छीन लिया गया। अकबर बहुतसे घरेलू झगड़ों में पड़ गया इस लिये उदयपुरपर कोई चढ़ाई न की गयी। चित्तौड़को शत्रुओंके पास देख महाराणा सदा दुःखी रहा करते थे, वे सदा कहा करते थे कि जब तक चित्तौड़का उद्धार न हो तब तक किसी प्रकारकी वीरताका गौरव निरर्थक है।

कष्ट झेलनेके कारण प्रौढ़ावस्थामें ही महाराणा वृद्ध दिखायी देने लगे थे। चित्तौड़ोद्धारकी चिन्तासे उनके पुराने घाव फिर हरे हो गये। अन्तिम बार उन्होंने अम्बरपति मानसिंहसे देश-द्रोहका बदला लेना चाहा, इस लिये अम्बर पर चढ़ाई कर दी। यह नहीं कहा जा सकता कि मानसिंह स्वयं लड़े या नहीं, परन्तु कछुवाहोंने बड़ी सेना सजाकर महाराणासे युद्ध किया। महाराणा इस युद्धमें विजय प्राप्त कर मालपुर आदि कई गांव लूट कर वापस लौटे। लूटका बहुतसा धन सरदार और सैनिकोंको बांटा गया। पेशोला सरोवरके किनारे महाराणाने अपने रहनेके लिये झोपड़ियां बनवायीं। एक दिन जब अमरसिंह इन झोपड़ियोंमें प्रवेश करने लगे तो किसी बांससे उनकी पगड़ी उतर कर गिर गयी। उन्होंने फौरन तलवारसे उस बांसको काट डाला और झोपड़ी बनाने वालोंको धमकाया कि इतनी छोटी झोपड़ी क्यों बनायी गयी। महाराणा यह देख कर बड़े दुःखी हुए। उनका स्वास्थ्य उस समय अच्छा न था, इस लिये अमरसिंहसे वे कुछ न बोले।

महाराणा इस बीमारीसे अच्छे होकर फिर न उठे। कालने हिन्दू सूर्यको ग्रास कर लिया। महाराणाके अन्तिम समयमें जब सारे सरदार उनकी शय्याके पास बैठे हुए थे तो महाराणाजीने बड़ी लम्बी आह निकाली। सारे सरदार रोने लगे। सलम्ब्राधिपतिने पूछा महाराज, किस दारुण चिन्ताने आपकी पवित्र आत्माको दुःखी कर रखा है? आपकी शान्ति क्यों भङ्ग हो रही है? महाराणाने उत्तर दिया, सरदारजी, अभी तक प्राण नहीं निकले, केवल आपकी एक शान्तिमय वाणीकी प्रतीक्षामें हैं। आप लोग शपथ खाकर कहें कि जीवित रहते मातृभूमिकी स्वाधीनता किसी तरह भी दूसरोंके हाथ अर्पण न करेंगे।

गौरवकी चिन्ता थी। खुशामदियोंने सलाह दी कि व्यर्थ ही विपत्तिका सामना करनेसे क्या लाभ होगा। जब राजपूतानेके सभी नरेश दिल्लीकी अधीनता स्वीकार कर चुके हैं, तो मेवाड़ स्वतन्त्र नहीं रह सकता। महाराणाको ये बातें यद्यपि बुरी मालूम हुईं, परन्तु वे इतने आलसी हो गये थे कि उनका प्रतिवाद तक न कर स

गीरकी सेना

पड़े आनन्द कर रहे हैं, तो उन्हें बड़ा दुःख हुआ और वे सब मिल कर अमर-महलमें पहुंचे। उन्होंने राणासे कहा कि क्या आप इसी तरह स्वर्गीय पिताकी परमपवित्र आज्ञाका पालन कर रहे हैं। सालम्ब्रा-सरदारकी तेजस्वी बातें सुनकर सरदार उत्साहित हो उठे, परन्तु अमरसिंह नीचा मुंह किये ही बैठे रहे। चन्द्रावत वीरने गलीचे पर पड़े हुए एक पीतलके गोलेको उठाया और दीवाल पर लगे हुए विदेशी दर्पण पर इस जोरसे मारा कि वह टुकड़े टुकड़े हो गया। राणाका दाहिना हाथ पकड़ा और बड़े जोरसे कहा सरदारो, इन विलास-सामग्रियोंमें आग लगा दो, और प्रतापसिंहके पुत्रको घोडेपर सवार करा कर कलङ्क से बचाओ। शीघ्र ही युद्धकी तैयारी करो। सालम्ब्रापतिके इस आचरणसे महाराणा बड़े रुष्ट हुए। उन्हें कई बार राज-द्रोही राजापमानी बताया। परन्तु सब सरदारोंने मिलकर जबर्दस्ती राणाको घोड़े पर सवार करा दिया। राणाके क्रोधसे आंसू आ गये, परन्तु किसीने उनकी जरा भी परवा न की। धीरे धीरे जब देवीके मन्दिरमें पहुंचे तो उस समय तक राणाका क्रोध कम हो गया था और वे अपना कर्त्तव्य भी समझ गये थे। मन्दिरसे बाहर होते ही उन्होंने अपनेको बहुत धिक्कारा

और चन्द्रावत-सरदारोंसे क्षमा मांगी। राणाने सरदारजीसे कहा कि आप शिशोदिया बन्शके सच्चे हितैषी हैं। आपके ही कारण आज मेरा वंश कलङ्कसे बच गया। युद्धक्षेत्रमें आप देखेंगे कि मैं वास्तवमें प्रतापसिंहका पुत्र कहलाने लायक हूं। राणाजीके इन वाक्योंसे सेना और सरदारोंमें बड़ा उत्साह पैदा हो गया और उन्होंने देवीरमें पहुंच कर मुगल सेना पर आक्रमण किया। दोनों दलोंमें भीषण युद्ध हुआ। दोपहर तक पता ही न चला कि किस दलकी हार या जीत हो रही है। सन्ध्या होते होते वीर राजपूतोंने प्रायः बहुतसी मुगल सेनाको उस मैदानमें काट डाला। जो बचे वे रणस्थल त्याग कर भागे। सन् १६०८ ई० में सबसे पहला यह युद्ध देवीरके मैदानमें राणा अमरसिंहके साथ हुआ। इस युद्धमें राणा अमरसिंहके चाचा वीरवर कर्णाने बड़ी अद्भुत वीरता दिखायी। राणा उदयपुर लौटे और कई दिनों तक विजयोत्सव हुआ। उधर यद्यपि बादशाही सेना पराजित हुई, परन्तु जहांगीर हतोत्साह न हुआ। थोड़े ही दिनों बाद अब्दुल्ला नामक सेनापतिको मेवाड़ जीतनेके लिये भेज दिया गया। रणपुरके गिरिमार्गमें राणाजी अपनी सेना लेकर भिड़ गये। शीघ्र ही मुसल्मान सेनाके मोर्चे भङ्ग कर दिये गये। इस युद्धमें भी सारी मुगल सेना काट डाली गयी। जो थोड़ेसे सैनिक बचे वे प्राण बचा कर भागे। इस युद्धमें विजय प्राप्त कर राणाने और भी कई स्थानोंमें मुगल सेना पर आक्रमण किये। बादशाह जहांगीर इस पराजयसे बड़ा दुःखी हुआ। उसने इस बात पर आश्चर्य किया कि थोड़ेसे राजपूत किस तेजीसे इतनी बड़ी मुगल सेनाको काट कर विजय प्राप्त कर लेते हैं।

फिर बड़ी भारी सेना सजायी गयी। इस बार जहांगीरको एक कूट मन्त्र दिया गया। राणा अमरसिंहके चाचा सगरजी का अभिषेक शीघ्र ही चित्तौड़की गद्दी पर कराया गया और मेवाड़में इस बातका ढिंढोरा पिटवाया गया कि चित्तौड़की गद्दीका शासक ही सच्चा महाराणा कहाया जा सकता है। राजपूत-कुलकलङ्क सगरजी अपने पूर्वजोंके नष्ट हुए गौरवकी भस्म पर मुगल दासत्वका मुकुट पहर कर चित्तौड़के सिंहासन पर बैठ तो गया, परन्तु उसे रातदिन उस किलेके अन्दर महाराणा लक्ष्मणसिंह, महाराणा संग्रामसिंह आदि वीरोंकी भयानक मूर्तियां दिखायी दिया करती थीं। वह जब तक चित्तौड़में रहा किसी भी रातको सुखकी नींद न ले सका। मेवाड़के किसी वीर सामन्त या सरदारने सगरजीको महाराणा कह कर न पुकारा, इससे जहांगीरकी कूटनीति भी सफल न हुई।

एक रातको सगरजीने स्वप्न देखा कि कोई कह रहा है कि तू इस पवित्र राजसिंहासनको भोगने योग्य नहीं। इस स्थानसे शीघ्र ही चला जा, नहीं तो तेरा मङ्गल नहीं। सरगजीने सवेरा होते ही अमरसिंहको बुलाया और चित्तौड़का भार उनके हवाले कर एक जङ्गलमें जाकर रहने लगा। उसे जङ्गलमें भी शान्ति न मिली। जहांगीरने उसे पकड़ मंगाया और दरबारमें उसका पूरा अपमान किया। वृद्ध सरगजी इस अपमान को न सह सका और उसी क्षण अपनी छातीमें छुरा भोंक कर मर गया। देशद्रोहीने बड़ा भयानक प्रायश्चित्त किया।

महाराणा अमरसिंह चित्तौड़ पाकर बड़े प्रसन्न हुए। कई दिन उत्सव मनाया गया। उधर शीघ्र ही जहांगीरकी तीसरी चढ़ाईकी रणभेरी मेवाड़के द्वार पर सुनायी दी। मेवाड़के ८२

किलोंमें से ८० किले इस समय तक महाराणाकी अधीनतामें आ चुके थे। बादशाहने इस बार अपनी सेनाका अध्यक्ष सगरजीका पुत्र मुहब्बतखां बनाया। जहांगीरके सभी सेनापतियोंमें मुहब्बतखां सबसे अधिक साहसी माना जाता था। मेवाड़के राणा विधर्मियों और उनसे सम्बन्ध रखनेवालोंका बड़ा तिरस्कार करते थे, जिससे मुहब्बतखां बहुत चिढ़ता था। वह मेवाड़के प्रायः सभी पहाड़ी मार्गों से भी परिचित था।

मुगलसेनाकी चढ़ाई देख महाराणा सब तैयारियां कर चुके थे। इतनेमें ही एक नवीन घटना उपस्थित हो गयी। मेवाड़का यह नियम था कि प्रत्येक युद्धमें और प्रत्येक बार सेनाकी आगवानी (हिरोल) सरदारोंको बांट बांट कर मिला करती थी, परन्तु इधर महाराणा प्रतापके सङ्कटकालमें प्राचीन प्रणाली काममें न लायी जा सकी थी। इस युद्धके लिये प्रयाण करनेके समय उस समयके दो प्रधान वीरोंमें इस बातकी प्रतिद्वन्दता उपस्थित हुई कि हिरोल कौन ग्रहण करे। चन्द्रावतोंने यह कह कर कि हम बड़े हैं, हमारी सेवायें अधिक हैं, हिरोल मांगी। उनके प्रतिद्वन्दी शक्तावतोंने अपनेको महाराणा प्रतापका उद्धारक बताकर हिरोल मांगी। परिणाम यह हुआ कि दोनों ओरसे तलवारें निकल पड़ीं। कहा गया कि जिसकी तलवारमें बल होगा, उसे ही मेवाड़की हिरोल मिलेगी। महाराणाजीने घरेलू सङ्कट उपस्थित देख कर कहा कि अन्तला दुर्ग पर पहुंच कर जो कोई उसे पहले काबूमें कर लेगा वही हिरोलका अधिकारी माना जायेगा।

यह बात सुनते ही दोनों दल अपनी अपनी सेनाएं लेकर

उस ओर रवाना हुए । अन्तला-दुर्गमें प्रवेश करनेके लिये एक ही द्वार था और वह किला एक पहाड़के ऊपर था, जिसके चारों ओर खाई थी। मुसलमान सेना उसे काबूमें किये हुए थी। किलेके सैनिक मुगल दलसे मिलने वाले थे। सवेरा होते ही शक्तावत अन्तलाके द्वार तक पहुंच गये । मुगल सेना पहलेसे ही युद्धकी तैयारी कर रही थी, इसलिये सैनिकोंने दीवालों पर चढ़ कर शक्तावतोंके साथ युद्ध आरम्भ कर दिया। चन्द्रावत सरदार मार्ग भूल गये थे, इसलिये अन्तला पहुंचनेमें उन्हें विलम्ब हुआ। चन्द्रावतके साथ कुछ सीढ़ियां थीं। उन्होंने उन्हें दीवालोंसे लगा दिया। एक गोलीसे चन्द्रावत सरदार मारे गये और उनकी लाश किलेके भीतर गिर गयी ! जब शक्तावत सरदारने यह सुना कि चन्द्रावत किलेके भीतर पहुंच रहे हैं तो उन्होंने अपने महावतसे कहा कि हाथीको इस दरवाजे पर चढ़ा दो । हाथीने दरवाजे पर धक्का दिया। दरवाजे पर लोहेके बड़े बड़े किले लगे हुए थे, इसलिये हाथी चिङ्घाड़ कर वापस लौट पड़ा। इधर चन्द्रावतोंकी ओर बड़े जोरका जय जयकार हुआ, जिसे सुन कर शक्तावत कांप उठे। वे हाथी परसे नीचे उतर पड़े और बड़े बड़े कीलोंके सामने छाती लगा कर खड़े हो गये और महावतसे बोले कि मेरी छातीपर हाथीको चला । यदि देर हुई तो सबसे पहले तेरा ही संहार करूंगा । महावतने स्वामीकी आज्ञाका पालन किया। अंकुशकी भयङ्कर पीड़ासे बड़े जोरकी चिङ्घाड़ मार हाथीने बलपूर्वक धक्का मारा। किलेका दरवाजा उस टक्करका सामना न कर सका और दोनों दरवाजे टूट कर गिर गये। लोगोंने देखा कि उन दरवाजोंके साथ शक्तावत

सरदारकी देह कीलोंसे छिदी हुई नीचे लाश बनी पड़ी है! शक्तावत-वीर अपने सरदारकी मृत्युकी कुछ भी परवा न कर उसकी देह पर पैर रख किलेके भीतर घुस गये। शक्तावतों के इस अपूर्व आत्मत्यागने भी उन्हें हिरोलका सम्मान प्राप्त न करने दिये। जब पहले चन्द्रावत सरदार किलेके भीतर गोली खाकर गिर गये तो सेनाका भार बांदाजीने सम्भाला। भीतर पहुंच कर उन्होंने चन्द्रावत सरदारकी लाशको दुपट्टे में बांध कन्धे पर लाद कर मुगल सेनापतिके महलोंके ऊपर फेंक दी और उस स्थान पर मेवाड़की विजयपताका उड़ा दी। जिस समय शक्तावत सरदारने जय जयकारका शब्द सुना था, उस समय बांदाजी महल पर खड़े होकर कह रहे थे कि हिरोल चन्द्रावतोंने पायी। शक्तावत सरदार सैनासहित शिर झुकाये लौट आये।

जिस शक्तावत सरदारने अपूर्व आत्मत्याग दिखाया, उसका नाम बल्लाजी था। इस विजयका समाचार सुन राणाजी स्वयं अन्तला-दुर्ग पहुंचे और उन्होंने अपने हाथसे शक्तावत सरदारकी दाह-क्रिया की। वीरवर बल्लाजीके समयसे ही 'दूना दातार, चौगुना जूझार खुरासानी मुलतानीका अग्गल' कह कर उनके वंशधरोंका सम्मान आज तक किया जाता है।

अजमेरमें सेना एकत्र हुई। बादशाहने स्वयं सारी सेना सजा कर अपने पुत्र पर्वेजको उसके साथ भेजा और कहा कि इस बार तुम्हारी बहादुरीका इम्तिहान है। इस बातको याद रखना कि महाराणा या उनके पुत्र कोई भी तुमसे मिलने आयें, तो हर तरहकी खातिरदारीसे काम लेना। याद रखना कि बादशाह बादशाहके साथ जिस तरह पेश आया करते

हैं, उस वर्तावमें किसी तरहका अन्तर न हो । इस सेनाको भेज कर बादशाह को पूर्ण आशा थी कि मेवाड़ जीत लिया जायेगा । परन्तु उनकी वह आशा धूलमें मिल गयी । महाराणाने अपनी थोड़ीसी सेना सजा कर मुगलोंको घेर लिया, खगनोरके गिरिमार्ग पर दोनों दलोंकी मुठभेड़ हुई । बड़ी भारी मुगलसेना अमरसिंहके इने गिने सैनिकोंकी गति न रोक सकी । मुसलमान सेनाके पांव न जमे । बहुतसे सैनिक अजमेरकी तरफ भागे । राजपूतोंके सामने जो सैनिक आये उसी समय खतम कर दिये गये । पर्वेज लड़ाईके मैदानसे भागा । वह कई पहाड़ियोंमें ऐसा फंसा कि कई दिन तक बाहर न निकल सका । यदि महाराणा चाहते तो उन्हीं पहाड़ियोंमें उसे घेर कर खतम कर देते, परन्तु भागे हुए निरस्त्र शत्रु पर आक्रमण करना क्षत्रिय धर्मके विरुद्ध है, इस धर्म-भावनाने महाराणाको वह काम न करने दिया । जब पर्वेज हार कर लौटा तो जहांगीरने उसके पुत्रको बहुत बड़ी सेना देकर मुहब्बत खां के साथ चढ़ाई करने भेजा । इस बार भी मुगलसेना हार कर उदयपुर लौटी, और पर्वेजका पुत्र मारा गया । इस तरह १७ बार महाराणाने मुगल आक्रमण व्यर्थ बनाया । अठारहवीं बार खुर्रम बड़ी धूमसे मेवाड़ पर चढ़ा । राणाजीने जब इस चढ़ाई और मेवाड़की वर्तमान दशाका विचार किया तो उनकी चिन्ताका कोई ठिकाना न रहा । खजानेमें धन नहीं, दुर्गमें सेना नहीं, रणनिपुण सामन्त भी न थे । राणाजी थोड़ीसी नयी सेना लेकर रणस्थलमें उतरे । मेवाड़के व्यापारियोंने इस बार बहुतसा धन एकत्र कर महाराणाके पास भेजा । जिन राजपूतोंने कभी अस्त्र तक धारण न किये थे, वे भी सेनामें योगदान करने पहुंच गये । इस पर भी युद्धका फल भयानक निकला । महाराणा सफ-

लता प्राप्त न कर सके। उदयपुरकी उत्तरी ओर पहाड़ोंके नीचे कई झोपड़ियोंकी एक छोटीसी बस्ती थी, जिसका नाम राजनचौकी था। राणाजी युद्धसे लौट कर वहीं चले गये। वे राजधानी को वापस न लौटे। बस्तीकी झोपड़ीके भीतर महाराणा जबसे घुसे तबसे बाहर न निकले। वहीं पर तप करते हुए परमधामको सिधारे।

खुर्रम हिन्दू कन्याके गर्भसे उत्पन्न हुआ था। जो अम्बरके कछवाहोंकी लड़की थी। वह उदयपुरके महाराणाको दिलसे नीचा दिखाना चाहता था। बादशाह जहांगीरने भी उसे युद्धमें भेजते समय समझा दिया था कि महाराणा जिस शर्त पर सन्धि करें उनसे अवश्य कर लेना। खुर्रम स्वयं भी महाराणाकी अपूर्व वीरतासे घबराया हुआ था और इस चिन्तामें था कि वे किसी तरह भी अधीनता स्वीकार कर लें। युद्ध आरम्भ होनेके पहले उसने कई बार महाराणासे कहलाया था कि आप जिस तरह चाहें सन्धि-स्थापना हो सकती है, परन्तु महाराणाने अपने स्वर्गीय पिताकी कठोर आज्ञाका स्मरण रखते हुए सन्धिकी कोई बात स्वीकार न की। युद्धमें विजयी होने पर खुर्रमने महाराणा अमरसिंहके पास फिर दूत भेजा और कहलाया कि मैं अब भी हर तरहसे तैयार हूं। आप जिन शर्तों पर चाहें सन्धि कर सकते हैं। महाराणाने उसके पास अपने दो सरदार सूपकर्ण और झाला हरिदास भेजे और उनके द्वारा यह कहलवा दिया कि मैं अपने पितृगौरवकी रक्षा करना अपना प्रधान धर्म मानता हूं। यदि उसकी रक्षाके साथ देशकी रक्षाके लिये सन्धि करना पड़े तो की जा सकती है। खुर्रमने इन बातोंको बादशाहके पास लिख भेजा। बादशाहने इस पत्रको पाकर महाराणाके पास अपने हाथ

के पंजेको छाप कर एक आश्वासनपत्र लिखा कि आपके गौरवकी रक्षा होगी । आप अपने हृदयसे शत्रुताके भाव दूर कर दें । बादशाहके इस पत्रने दोनों दलोंके बीच सन्धि करा दी । सन्धिकी शर्तों में सबसे पहली शर्त यह थी कि चित्तौड़के गद्दीधर महाराणा, बादशाहके दरबारमें कभी न जायेंगे । युवराज दरबारमें जायेंगे ।

इस युद्धके बाद खुर्रमने आलम-गुमान नामक एक हाथी बादशाहके पास भेट स्वरूप भेजा । बादशाहने इस हाथी पर बैठ कर दिल्लीमें बहुतसी असर्फियां लुटायीं । 'जहांगीरनामा' में इन बातोंका पूरा उल्लेख है । उन्होंने लिखा है कि जिस राज्यको वश में करनेके लिये मेरे पूर्वजोंने अविश्रान्त उद्योग किया था और वह उनके अधिकारमें न आ सका, वही मेवाड़ मेरे शासनकालमें दिल्लीके अधीन हुआ । सन्धिकी शर्तों के अनुसार महाराणाके पुत्र युवराज कर्ण दिल्ली पहुंचे और उन्हें राजपूतोंमें सर्वोच्च स्थान बादशाहके ठीक दाहिनी ओर दिया गया । बादशाह उनके स्वागतके लिये स्वयं उठा था । अन्य सभी राजपूत बायीं तरफ थे और युवराज कर्ण दाहिनी ओर बैठाये गये । बादशाहने अपनी बेगम नूरजहांसे कर्णकी मुलाकात करायी और जब युवराज मेवाड़ लौटे तो उस समय तक बादशाह १५ लाखके रत्न-आभूषण हाथी-घोड़े उनकी भेट कर चुके थे । विदाके समय बादशाहने युवराजको जागीरदारीका पट्टा लिख कर दिया । इतना उच्च पद और सम्मान पाकर भी युवराज विशेष लज्जित ही दिखायी दिये, इसका उल्लेख स्वयं बादशाहने किया है । जिस दिन मेवाड़ बादशाहकी जागीर कह कर पुकारा गया, उस दिन कुमार कर्णका हृदय चूर चूर हो गया ।

———

एकादश-परिच्छेद।

राजसिंह।

—:—

सन् १६१६ ई० में युवराज कर्ण मेवाड़की गद्दी पर बैठे। सन् १६२१ ई० में उनका राज्याभिषेक हुआ। जिस दिनसे इनका अभिषेक हुआ, ये बादशाहके दरबारमें न जाकर अपने पुत्र जगत्‌सिंहको भेजने लगे। इनके शासनकालमें मेवाड़में पूर्ण शान्ति रही। यद्यपि ये मुगलोंके अधीन हो चुके थे, परन्तु इनका बादशाहके साथ समानताका ही बर्ताव रहा। कुछ दिनों बाद खुर्रमने राज्य पानेके लोभसे अपने पिता जहांगीर पर चढ़ाई की और महाराणाके भाई भीमसिंहने उसे मदद दी। अन्तमें खुर्रम बादशाहसे हार कर उदयपुर पहुंचा और महाराणाके साथ बहुत दिन तक रहा। राणा कर्णसिंहने टूटे-फूटे किलोंकी मरम्मत करायी। सन् १६२८ में उनकी मृत्युके उपरान्त उनके पुत्र जगत्‌सिंह राजसिंहासन पर बैठे। इस राज्याभिषेकके थोड़े ही दिन बाद जहांगीरकी मृत्यु हो गयी। खुर्रम कुछ दिनोंके लिये उदयपुरसे चला गया था, वह बादशाहकी मृत्यु सुन कर उदयपुर पहुंचा। बादल-महलमें दिल्लीके सामन्त और अन्य सब राजाओंने खुर्रमको शाहजहांके नामसे दिल्लीके तख्त पर आरूढ़ किया। शाहजहां कुछ दिन उदयपुर रह कर दिल्ली चला गया। उदयपुरमें शाहजहांके लिये बड़ा उत्सव मनाया गया था, क्योंकि वे महाराणाके पगड़ी-बदल भाई थे। राणा जगत्‌सिंहने २६ वर्ष

तक राज्य किया । इन्होंने ही जगनिवास, जगमन्दिर आदि बड़े बड़े महल बनवाये । चित्तौड़की किलेबन्दीको फिर मरम्मत की गयी । राणाजी मारवाड़ ब्याहे थे । उनके दो पुत्र हुए जिनमेंसे बड़े पुत्र राजसिंह सन् १६५४ ई० में महाराणा बने ।

महाराणा राजसिंह बड़े प्रतापी थे, इस लिये उनके गद्दी पर बैठते ही मेवाड़की शान्ति विदा हो गयी । मेवाड़में ही नहीं सारे राजस्थानमें अशान्ति उत्पन्न हो गयी । दिल्लीका बादशाह शाह-जहां इस समय बूढ़ा हो गया था, इस लिये उसके चारों पुत्रोंमें दिल्लीका तख्त पानेके लिये झगड़ा खड़ा हो गया । मुगलोंके हाथ महाराणाकी अधीनता वास्तवमें कर्णसिंहके जमानेमें ही एक पीढ़ी तक रही । मेवाड़ाधिपति राणा जगत्सिंहके प्रतिनिधि भीमसिंहने बादशाहके विरुद्ध खुर्रमका साथ दिया ही था और खुर्रमको उदयपुरमें स्थान भी दिया था । इस लिये उसी समय ही से मेवाड़के राणा एक प्रकारसे स्वतन्त्र हो गये थे । शाहजहांने उदयपुरसे मित्रताका ही सम्बन्ध रखा । बादशाहके चारों पुत्रोंने ही उदयपुरनरेशकी सहायताकी भिक्षा मांगी । दारा बादशाहका सबसे बड़ा लड़का होनेके कारण तख्तका अधिकारी था, इस लिये महाराणाने उसकी ही मदद की । उस समय राणा राजसिंह ही राजस्थानमें प्रधान माने जाते थे, इस लिये अन्य नरेश भी दाराका साथ देनेको तैयार हो गये । परन्तु फतेहाबादके मैदानमें जो युद्ध हुआ, उसमें दारा हार गया और औरङ्गजेबको विजय प्राप्त हुई जो शाहजहांके चार पुत्रोंमें सबसे छोटा था ।

जब सन् १६५८ ई० में औरङ्गजेब अपने पिता शाहजहांको कैद कर और अपने तीनों भाइयोंको राज्याधिकारसे वञ्चित कर दिल्लीके तख्त पर बैठा तो उसकी दृष्टि अपने प्रबल शत्रु महाराणा

राजसिंहकी तरफ पड़ी। मेवाड़की टीकादौड़का महाराणा राजसिंहने उद्धार किया था। उन्होंने गद्दी पर बैठते ही अम्बर राज्यके मालपुरा नामक स्थानको लूट लिया। जब बादशाहने इस लूटका समाचार सुना तो उन्होंने हंस कर बात टाल दी। उन्होंने कहा कि मेरा भतीजा बालक है। उसने भूल कर यह काम कर डाला है। वीर शिरोमणि महाराणा-प्रतापके साथ जो मेवाड़की वीरता विदा हो गयी थी, वह राजसिंहके गद्दी पर बैठते ही फिर चमकी। मेवाड़के सरदार तलवारें लेकर फिर देशोद्धार की तैयारी करने लगे।

मारवाड़के राठोर-कुलमें बहुतसे विभाग हो गये थे, जिनमेंसे एकने रूपनगरमें निवास किया। रूपनगर मुगलोंके अधीन था, इस लिये राठोर भी मुगलोंके सामन्त बन कर रहने लगे। उन राठोरोंके यहां प्रभावती नामकी एक सुन्दर कन्या थी। जब औरङ्गजेबने प्रभावतीके रूपलावण्यकी बात सुनी, तो वह उनके साथ विवाह करनेके लिये बड़ा लालायित हुआ। प्रभावती पहले से ही महाराणा राजसिंहकी वीरता और उनके कुलकी उच्चता सुन कर निश्चय कर चुकी थी, कि महाराणाजीके साथ ही विवाह करूंगी, नहीं तो आजीवन, कुमारी ही रहूंगी। औरङ्गजेबने अपना प्रस्ताव रूपनगरके राठोरोंके पास भेज दिया और साथ ही साथ दो हजार घुड़सवार रूपनगरको रवाना कर दिये। औरङ्ग-जेबके इस दुस्साहसकी बात सुनते ही प्रभावतीने अपने पितासे पूंछा कि इस विपत्तिसे बचनेका क्या उपाय है? जब राठोर कोई उपाय न सोच सके, तो उन्होंने प्रभावतीसे विवाहके लिये राजी हो जानेको कहा। प्रभावती यह सुन कर बड़ी चिन्तामें पड़ीं। जिन मुगलोंसे वे हृदयसे घृणा करती थीं, उनके साथ

अपने विवाहकी बात कैसे सुन सकती थीं। कुमारीने अपने काकाको बुला कर सारी बातें कहीं। काकाने कहा कि हम औरङ्गजेबके विरुद्ध कुछ भी नहीं कर सकते। प्रभावतीने कहा कि यदि आप मेरी रक्षा नहीं सकते तो विष या छुरी करेगी ! मैं औरङ्गजेबके पास जानेके लिये किसी तरह भी तैयार नहीं। प्रभावतीने महाराणा राजसिंहको एक पत्र लिखा। वह पत्र पुरोहितके हाथ भेजा गया। राजसभामें पहुंच कर पुरोहितने राणाजीको प्रभावतीका पत्र दिया। प्रभावतीने पत्रमें लिखा था कि महाराज, यद्यपि मेरा आपका कभी साक्षात्कार नहीं हुआ तो भी हिन्दू धर्मकी प्राचीन प्रणालीके अनुसार मैं आपका वरण कर चुकी हूं। आप मेरे स्वामी और मैं आपकी स्त्री हूं। और मुझे लेनेके लिये पापी औरङ्गजेब आ रहा है। महाराज, क्या राजहंसीको कौवेकी सहेली होना होगा ! क्या राजपूतोंकी कन्या विधर्मीकी अङ्कशायनी होगी ? राणाजी, इसका अर्थ यह होगा कि शिशोदियोंकी विवाहिता कुलवधू, हिन्दूपति महाराणा की अर्द्धाङ्गिनीको औरङ्गजेब भोगेगा ! मैंने तो यह निश्चय कर लिया है कि यदि आप मेरी रक्षा न करेंगे, तो विष मेरा रक्षक होगा। यह आप अवश्य समझ लीजियेगा कि आपके वंशकी सूर्य समान उज्वल कीर्तिमें अवश्य धब्बा लग जायेगा। इस पत्रको पढ़ते ही महाराणाको बड़ा क्रोध आया, परन्तु वे कुछ न बोले। राणाजीको चुप देख कर पास बैठे हुए चूड़ावत सरदार बोले कि महाराज, चुप क्यों हैं ? राणाजीने पत्र उनके हाथमें दे दिया और उसे सब सरदारोंको सुनानेकी आज्ञा दी।

इस पत्रको सुन कर महाराणाको चुप बैठा देख पास ही बैठे हुए चारणजी, राणाजी पर बड़े बिगड़े। आप बोले कि इसमें

इतना गम्भीर विचार क्या है। इस पत्रने आपको इतनी चिन्ता में क्यों डाल दिया। जो राजपूत कन्या तुम्हें अपने मनसे वर चुकी है, यदि तुम उसकी रक्षा न कर सकोगे, तो उसका क्या होगा? क्या वह विधर्मियोंके हाथ चली जायेगी? तुम्हारी विवाहिता रानीको तुर्क विवाह ले जायेंगे! हिन्दूपतिके लिये इससे अधिक और क्या अपमान होगा? जिस प्रतिष्ठाकी रक्षा के लिये हमारे तुम्हारे हजारों बापदादोंने लाखों सुपुत्रोंको हंसते-हंसते बलि चढ़ा दिया, आज उसी मेवाड़का अधीश्वर हंसते-हंसते अपनी रानीको बादशाहके हाथ चली जाने देगा! यदि कन्या आत्मघात कर मर गयी, यदि मेवाड़पति शरणागतकी रक्षा न कर सका, तो आपका तो कुछ न बिगड़ेगा, परन्तु मेवाड़के पवित्र नामपर धब्बा लग जायेगा। आपको इस पत्रके उत्तरके लिये क्या रुकावट है? राणाजी बोले कि महाराज, मैंने राठोरकन्या ब्याह लेनेका प्रस्ताव अस्वीकार तो नहीं किया, केवल वृद्ध पुरुषोंकी सम्मतिकी प्रतीक्षा कर रहा था। चूड़ावत सरदारने कहा कि राणाजी, आप अपने वंशकी सारी रीति जानते हैं। आज तक बप्पारावलके वंशधरोंने शरणागतोंकी प्रार्थना अस्वीकार नहीं की। अभी सेना सजाइये और विवाहकी तैयारी कीजिये।

रूपनगरके पुरोहितको विदा कर कुमारीको विश्वास दिलाया गया कि राजपूत-गौरवकी रक्षा अवश्य की जायेगी। उदयपुरमें रणभेरी बजी। देवीके मन्दिरमें सभी सामन्त-सरदार एकत्र हुए। राजकवि भी लाल वस्त्र धारण कर लड़नेके लिये तैयार हुए। चूड़ावत सरदार तो तीन दिन पहले हाडी रानीको ब्याह-कर घर लाये थे। हाथोंके कंकण भी न खुले थे, सुहाग रात्रि भी न मनायी गयी थी। हाडी-रानीकी अवस्था केवल

१६ वर्षकी थी। ज्यों ही चूड़ावत-सरदार प्रस्थान करने लगे और उन्होंने रानीकी तरफ देखा तो उनका मुंह फीका पड़ गया। रानीजीने कहा, सरदार, क्या कोई अशुभ समाचार सुना है जो मुखकी आकृति बिगड़ गयी ? आप जिस उमङ्गसे मेरे पास आये थे, वह कहां हवा हो गया ! चूड़ावतने उत्तर दिया कि रानीजो, रूपनगरकी राजकन्याको बादशाह जबर्दस्ती लेजाना चाहता है। मुझे उसका उद्धार करना है। बादशाहका मार्ग रोकनेके लिये मैं रूपनगरके आगे डटूंगा। हमारी सेना बादशाही, सेनाकी तुलनामें कुछ भी नहीं है। मुझे आशा है कि मैं इस युद्धसे न लौटूंगा। मैं मरनेसे नहीं डरता। मरनेका डर पैदा होनेसे मेरे पूर्वजोंकी कीर्तिमें धब्बा लगेगा। यदि मुझे कोई चिन्ता है, तो तुम्हारी ही है। तुम अभी ब्याही गयी हो, विवाहका कुछ भी सुख तुमने नहीं भोगा। तुम्हारे कङ्कण भी अब तक नहीं खुले। मुझे अभी मरनेके लिये जाना है। मैंने ज्योंही तुम्हारे मुखकी तरफ देखा मेरे हृदयकी आनन्द-लहर हवा हो गयी। हाडी-रानीने कहा सरदारजी, यदि आप रणस्थलमें विजय पाकर लौटेंगे तो मेरे लिये बड़े गौरवकी बात होगी। यदि आपने युद्धक्षेत्रमें स्वर्गलोकको प्रयाण किया, तो मैं क्षत्राणी होनेके कारण अपना कर्त्तव्य भली भांति जानती हूं, इसलिये ऐसे शुभ समयमें आप सब मायामोह त्याग कर आनन्द पूर्वक रणस्थलकी यात्रा करें। मेरे कारण आपके क्षत्रिय धर्म या कुलगौरवमें कलङ्क न लगे। विश्वास रखिये कि मैं अपने कर्त्तव्य पालनमें किसी तरहकी त्रुटि न करूंगी। विदा होते समय हाडी रानीने फिर कहा, महाराज, विजयी होकर शीघ्र लौटना। रणस्थलमें केवल शत्रु-सेना पर ही दृष्टि रखना।

चूडावत वाले, रानीजी, जय पाकर पीछे तो लौटना सम्भव ही नहीं । शत्रुके सामनेसे मैं भागूंगा नहीं, इसलिये यह हम लोगों की अन्तिम भेंट है । तुम अपने घरकी लाज और प्रतिष्ठाकी रक्षा करना । हाडीजीने कहा, आप मेरी ओरसे निश्चिन्त रहिये । आप अपना धर्म पालन करें । मैं अपने धर्मसे न हटूंगी । चूड़ावतजी रानीसे विदा लेकर रवाना हो गये, परन्तु उनके हृदयमें यह विश्वास न हुआ कि मेरे मरने पर हाडीजी सती हो जायेगी । उनके हृदयमें यही सन्देह बना रहा कि संसारके किसी सुखका अनुभव न करने वाली करुणहृदय रमणी सती न हो सकेगी । सीढ़ीसे उतरते हुए उन्होंने रानीजीसे कहा कि मैं जाता हूं, तुम अपना धर्म न भूल जाना । सरदार मैदानमें आये और रणभेरी बजायी । घोड़े पर सवार होकर ज्योंही रणमें जाने लगे उन्होंने रानीजीके पास अपना एक सेवक भेजकर फिर कहलवाया कि आप अपने धर्मको न भूलना । रानीजी ने समझा कि मेरे जीते रहने पर स्वामीका चित्त मेरी ओर रहेगा । वे रणस्थलमें पराक्रम न दिखा सकेंगे । हाडी रानीने सेवकसे कहा कि मेरा शिर सरदारजीको देकर कहना कि मैंने तो अपना कर्त्तव्य पालन कर दिया, अब आप अपने कर्त्तव्यको अच्छी तरह पालन करिये । ज्योंही सेवकने रानीजीका कटा हुआ शिर सरदारजीको दिया, उन्होंने रानीजीके शिरके बालोंके दो भाग कर उसे अपने गलेमें बांध लिया । उनकी व्याकुलता और मोह दूर हो गया । भट्ट-ग्रन्थोंमें लिखा है कि चुड़ावतजी जिस समय रानीका शिर बांध कर नङ्गी तलवार लेकर निकले तो मालूम होता था कि साक्षात रुद्रने विधर्मियोंका ध्वंस करनेके लिये तैयारी की है ।

महाराणा राजसिंह चुने हुए पन्द्रसौ घुड़सवारोंको लेकर दरवाजे पर चूड़ावतसे मिले। महाराणाजी ब्याह करनेके लिये रूपनगर चले गये। चूड़ावत सरदार अपनी सेना लेकर आगरा और रूपनगरके बीच रूपनगरसे कुछ ही दूर पर जा डटे। उन्होंने पता लगवाया कि पास ही बादशाही सेना पड़ी है। सवेरा होते ही वह रूपनगरके लिये कूच करेगी। जब बादशाहने मार्गमें एक दूसरा लश्कर देखा, तो उन्हें मालूम हुआ कि मेवाड़के चूड़ावत सरदार रास्ता रोके हुए हैं। बादशाहने सरदारसे कहला भेजा कि हम उदयपुर लड़नेके लिये नहीं जा रहे हैं। हम तो विवाह करने जा रहे हैं, इसलिये हमारा मार्ग छोड़ दो। चूड़ावतने जवाब दिलाया कि यदि साहस है तो मार्ग साफ कर लो। दोनों ओरसे भीषण युद्ध होने लगा। दूसरे दिन फिर बादशाहने सरदारसे कहलाया कि आप क्यों मार्ग रोके हुए हैं। साथ ही साथ उन्होंने धन-सम्पत्ति और भूमि-जागीरका भी लालच दिखाया। सरदारने एक बात भी न सुनी। दूसरे दिन भी युद्ध हुआ। तीसरे दिन भी सूर्योदयसे पहले ही युद्ध आरम्भ हो गया। भीषण युद्धमें चूड़ावत सरदारको स्मरण हुआ कि मैं महाराणाजीसे प्रतिज्ञा कर आया हूं कि जब तक आप विवाह कर रूपनगरसे उदयपुर न पहुंच जायेंगे, मैं बादशाहका मार्ग रोके रहूंगा। सरदारने बादशाह पर बड़े जोरका आक्रमण किया। सरदारका घोड़ा बादशाहके हाथी पर चढ़ गया। बादशाहको मारनेके लिये ज्योंही भाला निकाला, औरङ्गजेब गिड़गिड़ा कर बोला कि मेरी जान क्यों लेते हो? विवाहकी घड़ी तो यहीं पूरी हो गयी। चूड़ावतने कहा कि हाथमें कुरान् लेकर शपथ खाओ कि दश वर्ष तक

मेवाड़ पर चढ़ाई न करूंगा। इसके पीछे तुम्हारी इच्छा। उस भूमिमें यदि वीर होंगे तो रक्षा कर लेंगे। ज्योंही सरदारने घोड़ा लौटाया, उनका शिर किसी मुगल सेनापतिकी तलवारसे अलग हो गया ! भट्ट-कवियोंने लिखा है शिर कट जानेके बाद भी उस रातभर चूड़ावत सरदार लड़ते रहे। पूर्णिमाकी रात्रि शेष होने पर जब सबेरे लोगोंने कहा कि पूर्णिमा हो गयी, तो घोड़े परसे सरदारजीका धड़ नीचे गिरा !

इस युद्धमें लगभग ३७ हज़ार राजपूत मारे गये और अगणित मुगल-सेना काम आयी। महाराणा राजसिंह ठीक समय पर रूपनगर पहुंच गये थे और राजकुमारीको ब्याह कर वैशाख बदी प्रतिपदाको रूपनगरसे उदयपुर पहुंच गये। उदयपुर पहुंच कर चूड़ावत सरदारकी वीरताका हाल सुना। आज पर्यन्त भी चूड़ावतजीके स्मारक स्वरूप उनकी समाधि बनी हुई है, और केवल राजपूतानेके राजपूत ही नहीं, अन्यान्य स्थानोंकी अन्य जातियां भी 'जूझारजी' के नामसे उनकी पूजा किया करती हैं।

जिस समय औरङ्गजेब उदयपुरके साथ युद्ध कर रहा था उस समय दूसरी ओर भारतके राजनीतिक क्षेत्र में एक बड़ा तूफ़ान उठ रहा था। औरङ्गजेबके अधीन राजपूतोंमें सर्व प्रधान जयपुरनरेश जयसिंह और जोधपुरके राठौर राजा यशवन्तसिंह थे। यद्यपि दोनों राजा मुगलोंकी अधीनता स्वीकार कर चुके थे, परन्तु दोनोंका बल इतना बढ़ गया था कि यदि दोनों मिलकर भारतकी खोयी हुई स्वाधीनता प्राप्त करना चाहते तो न जाने भारतकी राजनीतिक अवस्था आज क्या होती। जब औरङ्गजेबने देखा कि ये राजा प्रत्येक अप्रिय बातका प्रतिवाद करते हैं और इनसे लड़ना कोई सहल काम नहीं, तो उसने

दोनोंका अन्त करना निश्चित किया। उसने यशवन्तसिंहको काबुल और जयसिंहको दक्षिण भेज दिया। थोड़े ही दिनोंमें समाचार मिला कि यशवन्तसिंह जहर देकर मार डाले गये। यशवन्तसिंह उदयपुर ब्याहे हुए थे। जब वे काबुल जाने लगे तो राठौर सरदार वीर दुर्गादासको अपने पुत्र अजीतसिंह और रानीकी रक्षाके लिये दिल्ली छोड गये थे। यशवन्तकी मृत्युका समाचार पाकर औरङ्गजेब भयभीत हुआ कि कहीं राठौर बिगड़ न उठें। इसलिये उसने यशवन्तसिंहकी रानी और बच्चेको भी मार डालना चाहा और दुर्गादासको लोभ देकर काबूमें करना चाहा। दुर्गादास बादशाहके पास बुला भेजे गये और उन्हें बहुत कुछ लोभ दिखाया गया, परन्तु वे अपने कर्त्तव्य-पथसे विचलित न हुए। तब बादशाहने रानी और दुर्गादासको कैद करनेकी आज्ञा दी।

वीर दुर्गादास और रानीने हाथमें तलवार लेकर अपने धर्म और बालककी रक्षा की और वे दिल्ली छोड़ कर भागे। दुर्गादासकी सलाहसे रानीने महाराणा राजसिंहकी शरण ली। महाराणाने आश्रय प्रदान किया। बादशाहने रानीका पीछा करनेके लिये एक बहुत बड़ी सेना भेजी। उदयपुरकी पहाड़ियोंमें राठोर मुगल सेनासे लड़े। दोनों ओरकी सेना काम आयी, परन्तु कुमार, रानी और दुर्गादास तीनों उदयपुर पहुंच गये। महाराणाने उन्हें केलवा भिजवा कर उनकी रक्षाका प्रबन्ध कर दिया। औरङ्गजेबने जब यह सुना कि महाराणाने अजीतसिंहको शरण दी है तो आज्ञा दी, कि वे अजीतसिंहको अपने राज्यसे निकाल दें। महाराणाने उत्तर दिया कि शरणागतकी रक्षा करना क्षत्रियोंका धर्म है। मेरे प्राण रहते अजीतसिंह न

मिलेगा। इस उत्तरसे बादशाह बहुत नाराज हुआ। यशवन्तसिंहकी रानी बादशाहसे बदला लेनेके लिये उदयपुरसे जोधपुर चली गयीं और वहां पहुंच कर सब राजपूतोंको एक साथ कर औरङ्गजेबके विरुद्ध लड़ाई छेड़नेकी तैयारी कराने लगीं। औरङ्गजेबका शासन शिथिल होने लगा था और कोषमें कमी आ रही थी, इसलिये उसने हिन्दुओंसे जजिया-कर लेनेकी घोषणा की। औरङ्गजेबकी इस घोषणाने यशवन्तसिंहकी रानी का कार्य और भी सुगम बना दिया। महाराणा राजसिंहने इस घोषणाका घोर प्रतिवाद किया और उसी समय महाराष्ट्रपति शिवाजीने औरंगजेबके नाम एक पत्र लिखा जो बड़ा ही निर्भीकतापूर्ण था। उस पत्रकी नकल नीचे दी जाती है।

"सर्वप्रकारकी स्तुति सर्व शक्तिमान् जगदीश्वरको उचित है और आपकी महिमा भी स्तुतिके योग्य है। आपकी उदारता और समदृष्टि चन्द्र और सूर्यकी भांति चमकती है। यद्यपि मैंने अपनेको आपके हाथसे अलग कर लिया है, किन्तु आपकी जो सेवा हो सके उसको मैं सदा दिलसे करनेको तैयार हूं। मेरी सदा इच्छा रहती है कि हिन्दुस्तानके बादशाह, रईस, मिर्जा, राजा, राय, ईरान, तूरान, रूम और शामके सरदार और सातों बादशाहतके निवासी और वे सब यात्री जो जल या स्थलसे यात्रा करते हैं, वे सब मेरी अभेद सेवा बुद्धिसे उपकार लाभ करें।

"वह इच्छा मेरी ऐसी उत्तम है कि जिसमें आप कोई दोष नहीं देख सकते। मेरे पूर्वजोंने पूर्व कालमें जो कुछ आपकी सेवा की है उस पर ध्यान रख मुझे अति उचित जान पड़ता है कि मैं नीचे लिखी हुई बातों पर आपका ध्यान दिलाऊं, जिसमें राजा और प्रजा दोनोंकी भलाई है। मुझको यह समाचार मिला है कि

आपने मुझ शुभचिन्तकके विरुद्ध एक सेना नियत की है और मैंने यह भी सुना है कि ऐसी सेनाओंके नियत होनेसे आपका खजाना जो खाली हो गया है, उसे पूरा करनेके लिये आपने नाना प्रकारके कर भी लगाये हैं।

"आपके परदादा महम्मद जलालुद्दीन अकबरने जिनका सिंहासन अब स्वर्गमें हैं, इस बड़े राज्यको बावन वर्ष तक ऐसी सावधानी और उत्तमतासे चलाया कि सब जातिके लोगोंने उससे सुख और आनन्द उठाया । ईसाई, दाऊदी, मुसलमान, ब्राह्मण, नास्तिक सबने उनके राज्यमें समान भागसे राज्यका न्याय और राज्यका सुख भोग किया और यही कारण है कि सब लोगोंने एक मुंह होकर उनको जगद्गुरुकी पदवी दी थी।

"शाहंशाह मुहम्मद नूरुद्दीन जहांगीरने जो अब नन्दन-वनमें विहार करते हैं, उसी प्रकार बाईस वर्ष तक राज्य किया। अपनी रक्षाकी छायासे सब प्रजाको शीतल रखा और अपने आश्रित या सीमास्थित राजन्यवर्गको भी प्रसन्न रखा और अपने बाहुबलसे शत्रुओंका दमन किया।

" वैसे ही उनके शाहजादे और आपके बड़े परम प्रतापी पिता शाहजहांने बत्तीस वर्ष राज्य करके अपना शुभ नाम अपने शुद्ध गुणोंसे विख्यात किया।

"आपके पूर्व पुरुषोंकी यह कीर्ति है। उनके विचार ऐसे उदार और सच्चे थे कि जहां उन्होंने चरण रखा, वहां विजयलक्ष्मीको हाथ जोड़े अपने सामने पाया और बहुतसे देश और द्रव्यको अपने अधिकारमें किया । किन्तु आपके राज्यमें वे देश अब अधिकारसे बाहर होते जाते हैं और जो लक्षण दिखायी देते हैं, उनसे निश्चय होता है कि दिन-दिन राज्यका क्षय ही होगा । आपकी

प्रजा अत्याचारसे अति दुखी हैं और सब दुर्बल पड़ गये हैं। चारों ओरसे बस्तियोंके ऊजड़ हो जानेकी और अनेक प्रकारके दुःखोंकी बात सुननेमें आती है। राजमहलमें दरिद्रता छायी हुई है। जब बादशाह और शाहजादोंके देशकी यह दशा है, तब और रईसोंकी कौन कहे। शूरता तो केवल जिव्हा पर आ रही है, व्यापारी चारों ओर रोते हैं। मुसलमान अव्यवस्थित हो रहे हैं। हिन्दू महा दुखी हैं। यहां तक कि प्रजाको सन्ध्याकालके समय खानेको भी नहीं मिलता। सब दुखी होकर तमाम दिन अपना शिर पीटा करते हैं।

"ऐसे बादशाहका राज्य कितने दिन ठहर सकता है? जिसने भारी करसे अपनी प्रजाकी ऐसी दुर्दशा कर डाली है। पूर्वसे पश्चिम तक सब लोग यही कहते हैं कि हिन्दुस्तानका बादशाह हिन्दुओंका ऐसा द्वेषी है कि वह रङ्क-ब्राह्मण, योगी और वैरागी पर भी कर लगाता है। अपने उत्तम तैमूरी वंशको इन धनहीन, निरुपद्रवी उदासीन लोगोंको दुःख देकर कलङ्कित करता है। अगर आपको उस किताब पर विश्वास है, जिसे ईश्वरका वाक्य कहते हैं, तो उसमें देखिये ईश्वरको मनुष्य मात्रका स्वामी लिखा है। ईश्वर केवल मुसलमानोंका ही नहीं है। उसके सामने हिन्दू और मुसलमान दोनों समान हैं। मनुष्य मात्रको उसीने जीवनदान दिया है। नाना रङ्गके मनुष्य उसीने अपनी इच्छासे उत्पन्न किये हैं। आपकी मसजिदोंमें उसीका नाम लेकर चिल्लाते हैं और हिन्दुओंके देवमन्दिरोंमें उसीके लिये घण्टा बजाते हैं। सब उसीको स्मरण करते हैं। इसलिये किसी जातिको दुःख देना ईश्वरको अप्रसन्न करना है। हम लोग जब कोई चित्र देखते हैं तो उस चित्रके चित्रकारका स्मरण किया करते हैं। यदि हम उस चित्रको बिगाड़ें

तो चित्रकार अप्रसन्न होगा। कविकी उक्तीके अनुसार जब कोई फूल सूंघता है तो उसके बनानेवालेका ध्यान करता है। उसको बिगाड़ना ठीक नहीं।

"सिद्धांत यह कि हिन्दुओं पर आपने जो कर लगाना चाहा है, वह न्यायके परम विरुद्ध हैं। राज्यप्रबन्धको नाश करनेवाला है। ऐसा करना अच्छे राज्याधीश्वरोंका लक्षण नहीं। वह बलको शिथिल करनेवाला है। हिन्दुस्तानी रीति नीतिके विरुद्ध है। यदि आपको अपने मतका ऐसा आग्रह हो कि आप इस बातसे बाज न आवें तो पहले राजसिंहसे जो हिन्दुओंमें मुख्य हैं, उनसे यह कर लीजिये और फिर अपने इस शुभचिन्तकको बुलाइये। किन्तु यों प्रजापीड़न वा रणभङ्ग, वीरधर्म और उदारताके विरुद्ध है। बड़े आश्चर्यकी बात है कि आपके मन्त्रियोंने आपको ऐसे हानिकर विषयमें कोई उत्तम मन्त्र नहीं दिया।"

इस पत्रको पाकर औरङ्गजेबके क्रोधका ठिकाना न रहा। उसने शीघ्रही सेना सजा कर पहले मेवाड़ पर ही चढ़ाई करनेकी तैयारी की। औरङ्गजेबने अपने सेनापतिको बुलाकर कहा कि जितनी भी सेना एकत्र हो सके सबको लेकर मेवाड़ पर चढ़ाई कर दो। बङ्गाल से शाहजादा अकबर, काबुलसे अजिम, दक्षिणसे मुअज्जिम सभी वापस बुला लिये गये और एक बड़ी भारी सेना तैयार कर मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी गयी। जब महाराणा राजसिंहने बादशाहकी चढ़ाईकी बात सुनी तो उन्होंने मेवाड़की प्रजाको पहाड़ोंमें आश्रय लेनेकी आज्ञा दी। वे भी अपनी सेना सजाने लगे। पहाड़ी भील-सरदार भी हजारोंकी संख्यामें अपने धनुष बाण लेकर पहुंचे। राणाने अपनी सेनाके तीन भाग किये। बड़े कुमार जयसिंहकी अधीनतामें पर्वतोंके शिखरों

पर सेना रखी गयी। गुजरात और चारों ओरके भीलोंसे सम्बन्ध रखनेके लिये पश्चिमी पर्वतोंकी रक्षाका भार भीम पर सौंपा गया। महाराणाने स्वयं नाइनके गिरीमार्गमें डेरा डाला। सैन्य-संचालनका भार शक्तावत सरदार गरीबदासके ऊपर था। उन्होंने बड़ी चतुरता पूर्वक सेनाको तीन भागोंमें बांट कर स्वयं सैन्य-सञ्चालनके निरीक्षण पर अपनेको नियुक्त किया था। बादशाहने पचास हजार सेना तहव्वरखांकी अधीनतामें अपने लड़के अकबरके साथ उदयपुरकी ओर भेजी। आप स्वयं बड़ी भारी सेना लेकर देवारी नामक भील-गांवमें डटा। अकबरने उदयपुर जाते हुए राहमें देखा कि सारे नगर और गांव सूने पड़े हैं! वह राणाजीकी इस चालको समझ गया। राजधानीमें पहुंच कर वह कई दिन तक चुप पड़ा रहा। उसकी सेनाको यह आशा न रही कि हम पर कोई आक्रमण करेगा। इसी बीचमें कुमार जयसिंहने बड़े जोरोंसे आक्रमण किया और यवन-सेना काम आयी। थोड़ेसे सैनिकोंको लेकर अकबर अपने पिताके पास जाना चाहता था, परन्तु महाराणाने उसका मार्ग रोक दिया। जब अकबरने वहांसे बच कर निकलने का कोई मार्ग न देखा, तो गोगुण्डा होकर भागनेका निश्चय किया। वह थोड़ी ही दूर गया था, कि भीलोंने उसका मार्ग बड़े बड़े पत्थरोंसे रोक दिया, और उसके साथके थोड़ेसे सैनिक भी काट डाले गये। प्राणों पर संकट आया समझ अकबरने कुमार जयसिंहसे दया-प्रार्थना की। साथ ही प्रतिज्ञा की कि छुटकारा मिलते ही मैं मेवाड़ और मुगलोंके बीचको शत्रुता बिल्कुल मिटा दूंगा।

अकबरकी गिड़गिड़ाहटसे कुमारका हृदय पिघल गया।

उन्होंने अपने कुछ आदमी साथ देकर जिलवाडेके गिरिमार्ग तक पहुंचा दिया। वहांसे निकल कर वह चित्तौड़के किलेके नीचे पहुंच गया! जब औरङ्गजेबने अकबरकी दुर्दशाका समाचार पाया तो वह उसकी सहायताके लिये आगे बढ़ा, परन्तु मुगल सेना पहाड़ी मार्गोंसे इतनी अपरिचित थी कि भीलों और राजपूतोंने राहमें बड़े बड़े पत्थर गिरा कर उसे दोनों तरफसे घेर लिया और पहाड़ों पर चढ़ कर उसका क्षय आरम्भ कर दिया। औरङ्गजेबके साथ उसकी बेगम और पुत्री भी थी। महाराणाके सिपाहियोंने बादशाहकी बेगम और लड़कीको कैद कर लिया। राणाजीने दोनोंको बड़े सम्मानके साथ अपने राजमहलमें रखा। भट्टोंने लिखा है कि शाहजादी कुमार जयसिंह पर बहुत प्रेम दिखाने लगी थी, और उसने उनके साथ अपनी शादीका प्रस्ताव भी किया, परन्तु कई कारणोंसे महाराणाने उसे स्वीकार न किया। महाराणी प्रभावती और औरङ्गजेबकी बेगमके बीच जो बातचीत हुई उसका भी भट्टोंने उल्लेख किया है। बादशाह, बेगम और शाहजादीकी गिरफ्तारीसे बहुत घबड़ाया, वह समझता था कि दोनोंकी इज्जत जानेसे बड़ी मुश्किल होगी, महाराणाने दोनोंको अपने सेनापतिके साथ भेज कर बादशाहसे कहलवाया कि मैं इसके बदलेमें और कुछ नहीं चाहता केवल इतना ही चाहता हूं कि यदि राहमें आपको कोई गौ मिल जाये तो उसे न मारना। दुराचारी औरङ्गजेबने महाराणाके कहने पर जरा भी ध्यान न दिया। वह सदा यही कहता रहा कि महाराणाने मुझसे डर कर ऐसा किया है।

औरङ्गजेब पहाड़ी मार्गसे निकल कर भागा। यह मुठभेड़ सन् १६८० ई० के मार्च मासमें हुई। औरङ्गजेब और उसका

पुत्र अकबर हार कर चित्तौड़के परकोटके पास एकत्र हुए। औरंगजेबका दूसरा पुत्र मुअज्जम दक्षिणसे लौट कर यहीं आ मिला। वीरवर जयमलके वंशधर सांवलदासने मुगल सेना पर राठोर वंशी सोलङ्की गोपीनाथ (रूपनगरके राजा) के साथ मिल कर भयानक आक्रमण किया। औङ्गजेब अपनी रक्षाका कोई उपाय न देख बीचमें ही भाग पड़ा, और अपने पुत्रसे कह गया कि जब तक मैं दूसरी सेना न भेजूं, तब तक यहीं रहना। अजमेर पहुंच कर उसने बहुतसी सेना तैयार की और खां-रूहेला की अधीनतामें चित्तौड़ भेज दी। सांवलदासने राहमें ही इस सहायक सेना पर आक्रमण किया और उसे खतम कर दिया। खां-रुहेला भी युद्धमें काम आये। चित्तौड़ और अजमेरके बीच जितने मुगल स्थान थे, सांवलदास द्वारा लूट लिये गये। इधर महाराणाजी विजयोत्सव मनाने लगे और उधर भीमसिंहने गुजरात पर चढ़ाई कर दी। राहमें ईदर नगर ध्वंस कर दिया। वहांका मुसलमान शासक अपनी सारी सेना लेकर भागा। भीमसिंहने पट्टन, बड़नगर आदि कई स्थान लूटे। जब लूटमार ज्यादा हुई, तो अधिवासी घबड़ा कर महाराणाके पास पहुंचे। महाराणाने भीमसिंहको वापस बुला लिया। वे सूरत पर चढ़ाई करने जा रहे थे।

औरंगजेब कई बार हार जानेसे दब तो गया, परन्तु उसके दिलमें बदला लेनेकी जो आग जल रही थी, वह धधकती ही रही। वह मेवाड़ पर चढ़ाई करनेकी तैयारी फिर करने लगा। महाराणाजी उसके साथ छेड़-छाड़ न करना चाहते थे, जब तक वह मेवाड़ पर चढ़ाई न करे। विजयोन्मत्त सामन्त महाराणाके निर्णयसे सन्तुष्ट न हुए। वे शत्रुको जड़से उखाड़ना चाहते

थे । राणाजीके दयालुदास नामक साहसी दीवान थे । उन्होंने बहुतसी घुड़सवार सेना एकत्र कर मालवा लूट लिया । वहांसे देवास, मांडू, चन्देरी आदि स्थान लूटते हुए और मुसलमानी सेना विध्वंस करते हुए लौटे । मुसलमान इतने भयभीत हो गये कि अपने स्त्री-पुत्रोंको छोड़ कर भागे । दयालुदासजीने काजियोंको पकड़ उनकी दाढ़ी-मूछ मुडवा दी और उनसे बदला लिया । लूटका धन महाराणाको भेट किया गया । इसके बाद कुमार जयसिंहके साथ दयालुदासने शाहजादा अजोम पर चढ़ाई कर दी । वह चित्तौड़से रणथंभारकी ओर भागा । इस बार महाराणा और उनके सामन्तोंने मेवाड़के सभी स्थानोंकी मुगल-सेनाको भगा दिया । हिन्दूपतिकी भूमि एकदम शत्रु-शून्य हो गयी ।

औरंगजेब जब महाराणा राजसिंहको नीचा न दिखा सका, तो उसने क्रुद्ध होकर मारवाड़ पर चढ़ाई की । वह जानता था कि महाराज यशवन्तसिंहका छोटा पुत्र और रानी महाराणाकी शरणमें हैं । महाराणा राजसिंह मेवाड़ और मारवाड़की सेना एकत्र कर गनौरामें भिड़ गये । दिल्लीकी तरफसे अकबर और तहव्वरखांकी अधीनतामें सेना भेजी गयी थी । महाराणाकी ओरसे भीमसिंहने एक विचित्र चाल चली । रातको बादशाही सेनामेंसे करीब पांचसौ ऊंट खुलवा मंगाये और उन ऊंटोंकी पीठों पर जलती हुई मशालें बांधकर वे बादशाही-सेनामें छोड़ दिये गये । ऊंट एक दूसरेके ऊपर मशाल देख बड़े जोरसे चिल्ला कर इधर उधर भागने लगे । ऊंटोंकी चिल्लाहट सुन कर सेनाके सभी सैनिक डर कर भाग गये । इसी अवसर पर राजपूतोंने बड़े जोरसे आक्रमण कर दिया और मुगल-सेनाको बुरी

तरहसे हरा दिया। इसके कुछ ही दिन बाद राजपूतानेके राजाओं ने मिल कर औरंजेबको दिल्लीके तख्तसे उतार कर अकबर को राजगद्दी देनेका विचार किया। अकबरके पास यह समाचार भेज दिया गया और गुप्त रूपसे युद्धकी सारी तैयारियां होने लगीं। ज्योतिषीने अकबरके राजतिलका दिन निश्चित किया। जब ज्योतिषीने देखा कि अकबरको राजसिंहासन देने की तैयारियां हो रही हैं, तो उसने भागकर औरंगजेबको खबर दे दी। खबर एक दिन पहले मिली, इसलिये औरंगजेब बहुत डरा। वह समझ गया कि मैं जरूर राजगद्दीसे उतार दिया जाऊंगा। औरंगजेबके पास उस समय कुछ सेना भी न थी। उसकी कुटिल बुद्धि अन्तमें काम कर गयी। उसने अकबरके नाम एक पत्र लिखा और उसे एक विश्वासी आदमीके हाथ देकर कह दिया कि इस पत्रको सेनापति दुर्गादासके डेरेमें डाल आना। उस पत्रमें उसने लिखा कि बेटा, तुम्हारी इस चतुराईको सुन कर मैं बड़ा खुश हुआ, परन्तु सावधान रहना। राजपूत कहीं इस गुप्त षड्यन्त्रको जान न जायें। जब राजपूत हमारे साथ लड़ते हों, तुम अपनी सेना लेकर उनपर चढ़ाई कर देना और उनका विध्वंस कर देना।

दुर्गादासको यह पत्र मिल गया। अकबरका नाम देख कर उसने उसे खोल कर पढ़ डाला। उसे पढ़ कर उन्हें बड़ा दुःख हुआ, उन्होंने कहा कि जिसके लिये हम लड़नेको तैयार हो रहे हैं, वह इतना विश्वासघाती है! मुसल्मानोंके सम्बन्धमें उन्हें पहलेसे ही अविश्वास रहता था, इसलिये अकबरका विश्वासघात उन्हें सत्य ही मालूम हुआ। वे अपनी सेना वापस लौटा ले गये। अकबरने अपनेको अकेला पाया और उसकी सारी

आशा धूलमें मिल गयी। इधर औरङ्गजेबने शीघ्र ही अपने अन्य दो लड़कोंको बुला लिया। राजपूतोंको पीछेसे बादशाहकी कूटनीति मालूम हो गयी।

औरङ्गजेब राजपूतोंसे भयभीत हो गया, इसलिये वह चाहता था कि महाराणासे सन्धि हो जाये। उन दिनों बीकानेरका राजा श्यामसिंह बादशाही-सेनामें था। बादशाहने उसे राणाजी के पास भेजा और उससे कह दिया कि राणाजीको पता न लगे कि बादशाह सन्धिके लिये बड़ा अभिलाषी है। थोड़े ही दिनोंमें सन्धि हो गयी। सन्धिकी शर्तें ये थीं,—

१—चित्तौड़के अन्तर्गत और सन्निकट जो स्थान बादशाहके अधीन हैं, वे राणाजीको लौटा दिये जायेंगे।

२—मन्दिर तोड़ कर जिन स्थानोंमें मसजिदें बनवायी गयी हैं, उस विषयमें कुछ न होगा, परन्तु भविष्यमें ऐसा घृणित कार्य न किया जायेगा।

३—यशवन्तसिंहके पुत्र और उनके कुटुम्बियोंको पुत्रके अवस्था प्राप्त करने पर उनका राज्य दे दिया जायेगा।

सन् १६६१ ई० में मेवाड़में भयानक अकाल पड़ा। महाराणाने कई लाख रुपये खर्च कर प्रजाकी रक्षाके लिये एक बड़ा तालाब खुदाया जो आज तक भी राजसमदके नामसे प्रसिद्ध है। इसके बाद २७ वर्ष शासन कर महाराणाजी स्वर्ग सिधारे और उनके पुत्र जयसिंह गद्दी पर बैठे।

——::※::——

द्वादश-परिच्छेद ।

जयसिंह ।

सन् १६८१ ई० में राजपूत-कुल-केसरी वीरशिरोमणि महाराणा राजसिंहके पुत्र जयसिंह मेवाड़के राजसिंहासन पर बैठे। यद्यपि जयसिंहके बड़े भाई भीमसिंह मौजूद थे, परन्तु चिरप्रचलित प्रथाका उल्लङ्घन एक विशेष कारणसे हुआ। महाराणाओंमें प्रथा थी कि पुत्रोत्पत्तिके दूसरे दिन महाराणा उसके हाथमें अपने हाथसे 'अमर दूब' एकत्र कर बांधा करते थे। राणा राजसिंहके कई रानियां थीं। एक ही साथ दो रानियोंके पुत्र हुए। भीम सिंह, जयसिंहसे कुछ घण्टे पहले पैदा हुए थे। महाराणा दोनोंके हाथमें एक ही समय 'अमर-दूब' बांधने गये। जयसिंहकी माता पर महाराणाजीका प्रेम विशेष होनेके कारण वे पहले उन्हींके महलमें गये और जयसिंहके हाथमें पहले 'अमर दूब' बांधी गयी एक दिन राणाजीने राजकुमार भीमके हाथमें अपनी नङ्गी तलवार दे दी और उससे कहा कि इससे अपने छोटे भाईको मार डालो, जिससे भविष्यमें भ्रातृ-विरोध न रहे। वीर भीम पिता की सब बातें समझ गये और वे बोले कि पिताजी, मैं आपके चरण और राजसिंहासनको छूकर शपथ खाता हूं कि जयसिंह ही सर्व प्रकारसे मेरे अधिकारका उपयोग करेगा, मैं राज्यको छोड़ कर जाता हूं। मेवाड़में पानी भी न ग्रहण करूंगा। यह कह कर वे मेवाड़ छोड़ कर चले गये। दिल्ली पहुंच कर वे बहादुर

शाहके प्रेमपात्र बने और बादशाही सेनाके साथ काबुल लड़ने गये। वहां पर वे मारे गये।

जयसिंहने जयसमद नामक एक बड़ा भारी तालाब बनवाया और उसीके किनारे जयमहल बनवाया। इन्होंने परमार कुलकी कमलादेवीसे विवाह किया था। एक विवाह बूंदीके हांडोंके यहां भी हुआ था, जिसके गर्भसे अमरसिंहने जन्म लिया। अमरकी माता यद्यपि बड़ी रानी थीं, परन्तु कमलादेवी पर महाराणाका विशेष अनुराग था। जयसिंह शिकारके बड़े प्रेमी थे। वे बराबर जङ्गलोंमें जाकर शेर मारा करते थे। महाराणा जब कभी शेर मारते, तो लोग उसको बड़ी प्रसन्नतासे हांडी रानीके पास पहुंचाते। हांडी-रानी सदा कह दिया करतीं कि कोई गीदड़ मारा होगा। एक दिन यह बात राणाजीके कान तक पहुंच गयी। उन्हें यह बात सुन कर बड़ा क्रोध आया और रानीके पास जाकर उन्होंने अपने क्रोधका हाल कहा। रानीने कहा कि बात तो ठीक ही है। मैं तो जो समझती हूं, वही कहा है। क्या रोज शेर मारे जाते हैं। यदि आपको वास्तवमें शेर मारना है तो बूंदीके जंगलोंमें चलिये। वहीं आपकी बहादुरी देखी जायेगी। हांडी रानीने अपने भाईको शिकारका इन्तजाम करनेके लिये पत्र लिख दिया। महाराणा रानीको लेकर बूंदीके जंगलोंमें पहुंचे। शेर मांदसे निकला। रानीके भाई भी महाराणाके साथ थे। उन्होंने पहले पहल गोली चलायी। शेर घायल होकर उछला और मचान पर पहुंच गया। रानीने अपनी बगलसे कटार निकाली और उस शेरसे लिपट गयीं! उसके नीचे गिरते गिरते उसका काम तमाम कर दिया। रानीने कहा देखिये शेर इस तरह मारा जाता है। महाराणा यह देख कर

बड़े लज्जित हुए। वे रानीसे पहले भी अप्रसन्न रहते थे, यह हाल देख कर उनकी अप्रसन्नता और भी बढ़ गयी। इस पर रानीजो वहां पर ही चिता जला कर भस्म हो गयीं। उन्होंने चित्तौड़ लौटना स्वीकार न किया।

कुछ दिनोंके बाद महाराणा जयसिंह कमलादेवीको लेकर जयपुर राज्यके एक निर्जन स्थानमें जा बसे थे। अमरसिंह अपनी माताकी मृत्युसे बड़ा क्रुद्ध हुआ। उसने बूंदीसे अपने मामाको लेकर उदयपुर पर चढ़ाई कर दी। यह समाचार पाकर राणाजीको राजधानी लौटना पड़ा। जैसे तैसे अमरसिंह एक लिंगके मन्दिरमें बुलाये गये और सन्धि हो गयी। निश्चय हुआ कि राणाजी अपनी राजधानीको लौटेंगे और अमरसिंह राणाजी के जीवनकालमें जयसमद्के तट पर रहेंगे। २० वर्ष तक राज्य कर महाराणा जयसिंह स्वर्ग सिधार गये। जयसिंहने अपने पिताके साथ रह कर जैसी वीरता दिखायी थी, वैसी अपने शासन-कालमें न दिखायी। कमलावतीके मोहने उन्हें कुछ न करने दिया।

सन् १७०० ई० में जयसिंहके पुत्र अमरसिंह राजगद्दी पर बठे। शासन भार ग्रहण करनेके बाद उन्होंने दिल्लीके मुगल बादशाह, शाह आलमसे सन्धि कर ली। सन्धिकी प्रधान शर्तें ये थीं, चित्तौड़की मरम्मत बादशाही खर्चसे हो । गोहत्या बिल्कुल बन्द हो। मेवाड़के जो स्थान बादशाही अधिकारमें चले गये हैं, वे सब लौटा दिये जायें। हिन्दू स्वाधीनता पूर्वक धर्माचरण कर सकें।

शिशोदिया-कुलकी एक शाखामें रावगोपाल नामक एक राजपूत था। वह चम्बल नदीके किनारे रामपुर और भनपुरका शासन सामन्त रूपसे किया करता था। राव गोपाल अपने पुत्रके हाथमें राज्यका भार देकर दक्षिणमें लड़नेके लिये गया था। लड़का

राज्यके लोभमें बादशाहसे मिल कर मुसलमान हो गया और बादशाहसे आज्ञापत्र ले आया कि अपने पिताका राज्य वही स्वयं भोगे। जब राव गोपालकी कोई शिकायत बादशाहने न सुनी तो उन्होंने महाराणाका आश्रय लिया। राव गोपालकी सहायता करनेसे महाराणा बादशाहके क्रोधभाजन बने। उनके विरुद्ध सेना भेजी गयी। सेना महाराणाका सामना करने न पहुंच सकी क्योंकि उसे दक्षिण चला जाना पड़ा। इसी बीचमें बादशाह औरङ्गजेब १७०७ में औरङ्गाबादमें मर गया।

औरंगजेबके मरते ही उसके पुत्रोंमें तख्तके लिये लड़ाई हुई। महाराणाने मुअज्जमका साथ दिया। धातनगरमें बड़ा भारी युद्ध हुआ और मुअज्जमकी जीत हुई। वह शाह आलम बहादुरशाह का नाम धारण कर दिल्लीके तख्त पर बैठा। महाराणा अमरसिंह के उद्योगसे राजपूतोंने प्रण किया कि भविष्यमें अपनी कन्याएं मुगलोंको न दी जायेंगी। बादशाहने राजपूत कन्याएं पानेके लिये बड़ी चेष्टा की, परन्तु वह सफलता न प्राप्त कर सका। इसी समय देशमें वीर सिखोंने शिर उठाया। बहादुरशाहको उनके विरुद्ध लड़नेके लिये उत्तरकी ओर जाना पड़ा। जयपुर, जोधपुरके राजाओंने भी मुगलोंका साथ न दिया। राणा अमरसिंहके जीवन में सबसे महत्वपूर्ण यह काम हुआ कि सब राजपूत राजाओंने महाराणाको अपना प्रधान माना और महाराणाने जयपुर, जोधपुरके साथ विवाह सम्बन्ध इस शर्त पर स्थापित किया कि वे मुगलोंको कन्याएं न देंगे। उदयपुर घरानेकी जो लड़कियां अन्यत्र ब्याही जायेंगी, उनके गर्भसे उत्पन्न होने वाले लड़के राज्यके उत्तराधिकारी होंगे। यदि कोई कन्या उत्पन्न होगी तो ऊंचे राजपूत घरानेमें ब्याही जायेगी। इस सन्धिसे जयपुर, जोधपुरमें बड़ा

आनन्दोत्सव मनाया गया। सबने शपथ खाकर सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर किये।

जोधपुरके अजीतसिंहने अपने रक्षक दुर्गादासको अपने राज्य से निकाल दिया था। उन्होंने महाराणाकी शरण ली। महाराणा ने उन्हें बड़े आदरसे अपने यहां रख लिया और उनके खर्चके लिये हर रोज पांचसौ रुपये देने लगे। जयपुर, जोधपुर और उदयपुरने निश्चय किया कि मुगलोंकी अधीनतासे छुटकारा पाया जाये और इस कामके लिये महाराणा प्रधान चुने गये। इसी बीचमें सैय्यदभाइयोंने बहादुरशाहको जहर देकर मार डाला और फर्रुखशियर बादशाह बना। उसने जब राजपूतोंकी सन्धि का समाचार सुना और साथ ही साथ यह भी सुना कि वीर दुर्गादास अजीतसिंहको छोड़ कर महाराणाके पास चले गये हैं, तो अजीतसिंहकी निर्बलता उसे प्रत्यक्ष दिखायी दी। उसने अजीतसिंह के विरुद्ध चढ़ाई कर दी। अजीतसिंह घबरा गया और राजपूतोंकी सहायता की प्रतीक्षा न कर बादशाहसे सन्धि कर बैठा। उसने अपनी लड़की भी राजपूत-सन्धिकी कुछ परवा न कर बादशाहके साथ ब्याह दी। मुगल बादशाहने उसे अपने दरबारमें उच्चपद दिया। महाराणा यह समाचार पाकर बड़े दुःखी हुए। फर्रुखशियरने ही एक अंग्रेज डाक्टरसे राजपूत कुमारीसे विवाह करनेके लिये अपनी एक भयानक बीमारीका इलाज कराया था, जिससे प्रसन्न होकर उसने अंग्रेजोंको देशमें व्यापार करनेके बहुतसे अधिकार और सुविधायें दे दीं। इसी समयसे भारतमें बृटिश शासनकी नींव पड़ी।

फर्रुखशियरने जब महाराणा अमरसिंहकी तैयारी और विरोधकी बात सुनी तो उसने उनसे, सन्धिका प्रस्ताव किया और

महाराणाको आपसकी फूट देख उसे स्वीकार कर लेना पड़ा। इस सन्धिके अनुसार ही हिन्दुओं पर से जजिया कर उठा दिया गया। महाराणा सन्धि कर जङ्गलमें चले गये और सन् १७१६ ई० में परलोक सिधारे।

महाराणा अमरसिंहके पुत्र संग्रामसिंह पिताकी मृत्युके बाद मेवाड़के शासक हुए। उन्होंने १८ वर्ष राज्य किया। वे मुगल बादशाह मुहम्मदशाहके तख्त पर बैठनेके एक साल पहले महाराणा हुए। इनके शासनकालमें मुगल साम्राज्य, बादशाहोंकी कमजोरीके कारण छिन्न भिन्न होने लगा। चारों ओर जागीरदार स्वतन्त्र बनने लगे। हैदराबादके निजामने अपना राज्य अलग स्थापित कर लिया। अवधके नवाब भी स्वतन्त्र हो गये। बंगाल भी दिल्लीसे अलग हो गया। जयपुर और जोधपुरके राजाओंने भी अपनी अपनी सीमायें खूब बढ़ायीं। यदि महाराणा चाहते तो इस समय शासनक्षेत्र बढ़ा सकते थे, परन्तु वे इस बातसे सदा डरते रहे कि दूसरों पर आक्रमण करनेसे कहीं मुगलोंकी सहायता न लेनी पड़े और अपनी स्वतन्त्रतामें बाधा पड़े तथा जयपुर जोधपुरके राजदूत घरानोंकी खुशामद करनी पड़े और उनसे विवाह सम्बन्ध स्थापित करना पड़े। मेवाड़के राणा अपने पवित्र सिद्धान्त के सामने राजनीतिक महत्वकी कुछ भी परवा न करते थे, जो दूसरोंकी गुलामी और खुशामदसे प्राप्त हो सकता था। इसीसे सुअवसर उपस्थित होने पर भी महाराणा संग्रामसिंहने सादा जीवन बिता कर अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षाकी ओर ही ध्यान दिया। दूसरोंकी कमजोरी देख कर उनके मुंहमें पानी न आया।

महाराणा संग्रामसिंहने अपने परिवार तथा सरदारोंके बीच मितव्ययिताका प्रचार करनेके लिये बहुतसे नियम बनाये थे,

जिनका वे स्वयं पालन किया करते थे। एक बार कोटरिया के चौहान-सामन्तने महाराणासे प्रार्थना की कि आप अपनी दरबारी पोशाक और भी बहुमूल्य बनायें। महाराणाने शिष्टतापूर्वक वह प्रार्थना स्वीकार कर ली। चौहान अपने इस सम्मानसे बड़े प्रसन्न हुए। कुछ ही दिन बाद महाराणाने अपने मन्त्रीको आज्ञा दी कि कोटरियाकी जागीरसे दो गांव ले लो। जब सामन्त ने यह बात सुनी तो वे घबरा कर महाराणाके पास पहुंचे और उन्होंने अपना अपराध जानना चाहा। राणाने उत्तर दिया कि अपराध तो कुछ नहीं हुआ। मेरी आमदनी अलग अलग खर्चों के लिये बंधी हुई है। आपने बढ़िया पोशाक पहननेको कहा है उसके लिये दो गांव चाहियें। इसीसे आपके अधिकारसे लिये हैं। सामन्त यह सुन कर बड़े लज्जित हुए और वे फिर किफायतके पक्षपाती बन गये।

राणाने एक गांव किसीको दे दिया था, जिसकी आयसे उनकी भोजनशालामें चीनीका खर्च पूरा हुआ करता था। एक दिन जब उन्हें रसोईदारने दही परोसा जिसमें चीनी न पड़ी थी, तो वे बड़े क्रुद्ध हुए, परन्तु जब उनसे कहा गया कि महाराजने अमुक गांव दान कर दिया है तो वे चीनी बिना दही खाकर ही उठ आये।

महाराणाने देशरक्षाके लिये शत्रुओंके साथ अठारह बार युद्ध किया। वे वप्पारावलके घरानेके अन्तिम प्रतापी राणा माने जाते हैं। उनके बाद मेवाड़को घरेलू झगड़ोंके कारण मराठोंकी शरण लेनी पड़ी और अन्तमें बृटिश छत्रछायामें जाना पड़ा।

सन १७३४ में महाराणा संग्रामसिंहके चारों पुत्रोंमें सबसे बड़े

पुत्र जगत[illegible]ने मेवाड़की गद्दी पायी। जोधपुरके राजा अजीतसिंह ने लोभमें पड़ कर जो तीनों राजाओंकी सन्धि तोड़ दी थी, उसे फिर स्थापित करनेके लिये महाराणा जयसिंहने फिर सबको हुड़ला नामक स्थानमें एकत्र किया और वहां पर इष्टदेवकी शपथ खाकर सबने सन्धि स्वीकार की। उसमें परस्परके विश्वास और सहायता की व्यवस्था थी। बूंदीके हाडा भी इस सभामें सम्मिलित हुए थे। महाराणा सर्वप्रधान बनाये गये और मुगलोंकी अधीनता त्यागनेके लिये रामपुरमें सेना एकत्र करनेका निश्चय हुआ। इसी समय दक्षिणमें मराठोंकी प्रभुता बहुत बढ़ गयी। वे धन लेकर राजाओंकी सहायता करते और लूटपाट भी किया करते थे। उन्होंने एक वार दिल्ली तक धूम मचायी और बादशाहसे चौथ वसूल की। इस अवस्थाके बीच नादिरशाह भी भारत लूटने पहुंचा और उसने दिल्लीमें लङ्काकाण्ड तथा भयानक लूटकी धूम कई दिन तक रखी। दिल्लीके कमजोर बादशाहने उसे कई प्रदेश और काबुल आदि देकर सन्धि कर ली।

जयपुर-जोधपुरके सरदारोंने इसी धूमसे लाभ उठा कर अपने अलग अलग स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिये। बाजीराव पेशवाने मालवेको जीत कर मेवाड़ पर चढ़ाई की। राणाजीने अपने सालम्ब्रा सरदार और प्रधान मन्त्री विहारीदासको सन्धिके लिये भेजा। सन्धिमें निश्चय हुआ कि राणाजी हर साल पौने दो लाख रुपया मराठोंको दिया करेंगे। उदयपुरके राणाकी बहन जयपुर ब्याही हुई थीं, उनके माधोसिंह उत्पन्न हुए। सन्धिके अनुसार उन्हें गद्दी न देकर ईश्वरीसिंहको दी गयी। माधोसिंह राणाजीके पास शिकायत लेकर पहुंचे। उन्होंने ईश्वरीसिंह पर चढ़ाई की। मेवाड़ पर कोई संकट तो था ही नहीं, इसलिये मेवाड़के वीर

सरदारोंने इस युद्धमें विशेष उत्साह न दिखाया, जिससे राणाकी हार हुई। राणाकी सहायताके लिये बूंदी कोटावाले भी पहुंचे थे, इस लिये उनसे बदला लेनेके लिये ईश्वरीसिंहने सिन्धियाकी सहायतासे उनपर चढ़ाई कर दी। ईश्वरीसिंहकी हार हुई। महाराणाने पीछेसे होल्करसे सहायता मांगी और कहा कि यदि मेरा भानजा जयपुरकी गद्दी पर बैठा दिया जाये तो आपको ६४ लाख रुपये दिये जायेंगे। होल्करने माधोसिंहको गद्दी पर बैठा दिया और महाराणासे ६४ लाख रुपये ले लिये। मराठोंको पता लग गया कि मेवाड़में अधिक धन है। सन् १७५२ ई० में राणा जगतसिंहकी मृत्यु हो गयी।

उनके पुत्र प्रतापसिंह राजगद्दी पर बैठे। इन्होंने केवल तीन वर्ष राज्य किया। मराठोंने तीन बार मेवाड़ पर आक्रमण किया। जयपुरके राजा राजसिंहकी पुत्रीसे इनका विवाह हुआ था। इस रानीके गर्भसे राजसिंह उत्पन्न हुए और वे पिताकी मृत्युके बाद गद्दी पर बैठे। राजसिंहने सात वर्ष तक राज्य किया। प्रत्येक वर्ष मराठोंने आक्रमण कर, कर वसूल किया। सन् १७६२ में राजसिंहके चाचा अरिसिंह गद्दी पर बैठे। इनके शासनमें मल्हारराव होल्करकी चढ़ाई हुई। अरिसिंहने उन्हें ५१ लाख रुपये देकर सन्धि कर ली। इसी समय मेवाड़के सरदारोंमें आपसमें बड़ी फूट फैली। राणाने एक पराक्रमी राजपूत जालिमसिंहको सामन्त बना लिया था। उन्हींकी सलाहसे सरदारोंका विद्रोह दबानेके लिये राणाने महाराष्ट्र सेनापति रघू पांगे और दौलामियां नामक एक मुसल्मानको अपने यहां बुला लिया।।

सरदारोंने माधोजी सिंधियाको अपने पक्षमें कर लिया और दोनों ओरकी सेना मैदानमें डट गयी। सिंधिया और विद्रोही सर-

दार हार कर उज्जैन भागे । राणाकी सेना अपनी पूर्ण विजय समझ कर आनन्दोत्सव मनाने लगी । माधोजीने अपनी सेना फिर सजा कर चढ़ाई कर दी । राणाजीको बड़ी हानि उठानी पड़ी । सलम्ब्रा, शाहपुर और बुनेराके सरदार युद्धमें काम आये । जालिमसिंह युद्धमें गिरफ़ार हा गये और दौलामियां घायल हुए । जालिम सिंह दो वर्ष बाद कुछ धन देकर छूट सके । थोड़े ही दिन बाद सिंधियाने उदयपुर घेर लिया । सालम्ब्राके सरदार भीमसिंह को नगर-रक्षाका भार दिया गया । राणाजीके पुराने मन्त्री नष्ट होकर नौकरी छोड़ गये थे । उदयपुर पर सङ्कट आया समझ वैश्यकुलोत्पन्न अमरचन्द बरवा एकलिंगके मन्दिरमें फिर राणाजी से मिले और बोले कि उदयपुरकी दुर्गति मुझसे नहीं देखी जा सकती । राणाजीने अपने सब अपराध स्वीकार किये और भविष्य के लिये यह बात तय हुई कि अमरचन्दजीके कार्यमें कुछ भी हस्तक्षेप न किया जायेगा । अमरचन्दजीने जब मन्त्रीत्व ग्रहण किया उन्होंने सेनाको विद्रोही पाया, क्योंकि उसका वेतन न चुकाया गया था । उन्होंने राजकोषमें ... हुतसी अनावश्यक वस्तुएं बेच कर उस धनसे ... तन चुका दिया । बाजारोंमें व्यापार भी चमकने लगा ... ने इसी समय राणा से ७० लाख रुपया देकर सन्धि ... स्वीकार कर लिया । इस बातको सुन कर सिंधियाकी ... और भी बढ़ गयी । सन्धि पर सही कर उन्होंने २० ... और मांगे । अमरचन्दको सिंधिया की बात पर बड़ा क्रोध ... उन्होंने सन्धि फाड़ डाली और सिंधिया पर आक्रमण ... । ६ महीने तक इधर उधर लड़ाई होती रही । अन्तमें ग... नोंमें अमरचन्दने सिंधियाकी सेनाके पास पानीका जाना ... दिया । इससे सिंधियाने घबरा कर

सन्धिका प्रस्ताव किया। अमरचन्दने कहा कि ६ महीनेकी हानि काटने पर ७० लाखमें जो बचे वह लेना हो तो ले लो।

अन्तमें ६३॥ लाख पर फैसला हो गया। ३३ लाख तो नकद दिये गये और ३० लाखमें कई गांव बन्धक रख दिये गये। अहेरियाके उत्सव पर राणा अरिसिंहको एक हाडा राजपूतने मार डाला। उनकी एक उपपत्नी उनके साथ सती हो गयी। सन् १७७२ में उनका बड़ा पुत्र हमीर गद्दी पर बैठा। उसकी अवस्था १२ वर्षकी थी, इस लिये राज्यशासनका भार उसकी माताने सम्भाला। मराठोंने फिर उदयपुर पर धावा किया। इस समय राजमाता लोगोंके बहकानेसे मन्त्री अमरचन्दसे नाराज हो गयीं। अमरचन्दने अपनी सफाईके लिये अपनी सारी सम्पत्ति और वस्त्र तक राजमाताके पास भेज दिये। बहुत समझाने पर उन्होंने पुराने वस्त्र फिर वापस लिये। रानी उनके हृदयकी शुद्धता कुछ समयके लिये तो मान गयीं परन्तु फिर लोगोंके कहनेमें आ गयीं, और उन्हें जहर देकर मरवा डाला। जिस अमीरचन्दने मातृभूमिके गौरवकी रक्षार्थ सर्वस्व अर्पण करके की थी, उसके साथ कुसंगमें पड़ी हुई एक अबलाने इस प्रकारका नीच वर्ताव किया। अमरचन्दकी मृत्युके बाद मेवाड़ पर मराठोंने फिर आक्रमण किया और ६ लाख रुपया सालानाका कर उन्होंने वीर भूमिसे लिया। सन् १७७८ ई० में हमीर स्वर्गवासी हुए और उनके छोटे भाई भीमसिंह गद्दी पर बैठे। उन्होंने लगभग ५० वर्ष तक राज्य किया।

भीमसिंहके शासनकालमें मराठोंकी शक्ति शिथिल हो गयी। जयपुर, जोधपुर वालोंने मराठोंको दिये हुए गांव फिरसे छीन लिये। इसी अवसर पर राणाजीके दीवान मालदास मेहता और

सहकारी मौजीरामने नीमबहेड़ा और उसके आस पासके महाराष्ट्र किले दबा लिये। जावदाके किले पर भी आक्रमण किया गया। और भी सरदार पुराने वैर भावको भूल कर शामिल हो गये और मेवाड़की खोई हुई सारी भूमिका उद्धार कर लिया गया। उदयपुर वाले अपनी इस विजयसे इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने मराठोंके गांवों पर भी अपना अधिकार जमाना चाहा। अपनी भूमि भी हाथसे जाती देख होल्कर वंशकी महारानी अहिल्याबाई एक दम क्रुद्ध हो उठीं। सन् १७८८ ई० में अहिल्याबाईकी सेना राणाकी सेनासे मंसोरके पास भिड़ गयी और भीषण युद्ध हुआ। राणाजीका मन्त्री बहुतसी सेनाके साथ मारा गया और कई स्थानोंके सरदार गिरफ्तार हो गये। जो परगने मेवाड़वालोंने छीने थे, उनमेंसे जावदाको छोड़ कर और सब फिर मराठोंके हाथ चले गये।

इन उपद्रवों और विप्लवोंसे मेवाड़के राज्यमें इतना अन्धेर मच गया कि कोई किसीको न मानता था। दिन-दहाड़े बाजार और शहर लूटे जाते थे। जो अपना बल दिखा सका वही प्रजासे कर वसूल करने लगता था।

थोड़े ही दिनोंके बाद माधोजी सिंधियाकी मृत्यु हो गयी और उनका भतीजा दौलतराव बलपूर्वक उनका उत्तराधिकारी बना। मराठोंमें भी घरेलू वैमनस्य आरम्भ हो गया। राणाने कई बार भिन्न भिन्न व्यक्तियोंका साथ दिया। वे कई बार जीते और कई बार पराजित हुए। सन् १८०२ में इन्दौरमें होल्कर सिंधियाके बीच भयानक युद्ध हुआ। होल्कर हार कर राणाजीके पास चला गया और नाथद्वारामें रहने लगा। नाथद्वारा पहुंचकर उसने अपनी बदमाशी दिखायी। वहांके पुरोहित और गोसाईंको घेर

कर तीन लाख रुपये वसूल कर लिये। नाथद्वारेके पुजारी इस बातसे बहुत घबराये और वे देवमूर्ति तथा सभी वस्त्र आभूषण उदयपुर ले गये। मूर्ति जाने पर होल्करने सारे नाथ द्वारेको बड़ी निर्दयतासे लूटा। पुजारीजो उदयपुरसे गसियर नामक पर्वत पर चले गये और वहां एक मन्दिर बनवा कर सशस्त्र रहने लगे। उनके पास पांचसो हथियारबन्द सिपाही भी थे।

सिंधिया होल्करका पीछा करता हुआ होल्कर पहुंचा और महाराणासे उन्होंने तीन लाख रुपया मांगा। खजानेमें रुपया न था इसलिये राणाने स्त्रियोंके गहने और वस्त्रों तथा अपने वस्त्रोंसे तीन लाख रुपयोंकी पूर्ति की। फिर होल्करने चढ़ाई की और ४० लाख रुपये मांगे। रुपया एकदम ही न था। चीजें बेचकर १२ लाख दिये गये और बाकी रुपयोंके लिये कुछ आदमियोंके शरीर गिरवी रखे गये। जो स्थान छीने गये, उनके ठाकुरोंने रुपया देकर उन्हें वापस पाया। महाराष्ट्र सेनापति अम्बाजी इन दिनों मेवाड़में था। राणाजीकी हीनावस्था देख कर उसने निश्चय किया कि देश मराठोंमें बांट दिया जाये। कुछ बेचकर धन एकत्र किया जायेगा। शक्तावत सरदार संग्रामसिंह यह बात सुनकर बड़े दुःखी हुए और वे होल्करके पास इस विषयकी शिकायत करने चले गये। सिंधियाकी स्त्री बाईजीने स्वाधीनताकी लीलाभूमि मेवाड़की जब यह दुरवस्था देखी तो उसका हृदय बड़ा दुखी हुआ। उसने बीचमें पड़कर चन्द्रावत और चूड़ावत सरदारोंका मनोमालिन्य दूर करा दिया। वह सब सरदारोंको अपने साथ लेकर होल्करके पास गयी। सरदारोंने होल्करसे पूछा कि क्या आपने अम्बाजीको आज्ञा दी है कि वह मेवाड़ बेच दे। सिंधियाकी स्त्रीने भी होल्करको बहुत फटकारा। इसपर

होल्करने शपथ खायी कि मेरे रहते हुए मेवाड़की यह दुर्दशा कभी न होगी। वह उन सब सरदारोंको साथ ले सिंधियाके डेरेमें पहुंचा और उसने सिंधियासे कहा कि यह कार्य हमारे लिये बड़ा ही अनुचित होगा। होल्करने यह भी कहा कि यदि आप न मानें तो न मानें परन्तु मैं तो राणाजीका पक्ष कभी न छोड़ूंगा और इसके प्रमाण स्वरूप राणाजीको नीम-बहेड़ा लौटाये देता हूं। महाराष्ट्रोंकी इस उदारताका विशेष कारण था। अंगरेजोंकी प्रभुता बढ़ने लग गयी थी। एक स्थान पर महाराष्ट्र उनसे हार भी चुके थे। वे जानते थे कि मेवाड़के राणाका पक्ष लेनेसे उनके किलोंमें आश्रय लेनेका सुभीता हो जायेगा। सिंधियाने मेवाड़के कुछ सरदारोंको वापस भेज दिया और कुछको अपने पास उत्तर देनेके लिये रख लिया। उन दिनों होल्कर और सिंधियाके डेरे पास ही पास पड़े हुए थे। एक दिन अचानक होल्कर एक पत्रको पढ़कर बिगड़ उठा और उसने मेवाड़के दूत बुलाए और उनसे कहा कि तुम्हारे राणाने मराठोंको भगानेके लिये राणाके साथ परामर्श किया है। उसने पत्र भी दिखा दिया। उसने फिरंगियोंके साथ मित्रता करने पर बड़ी नाराजी दिखायी। होल्कर अंगरेजोंसे लड़नेके लिये मेवाड़ छोड़ कर चला गया, परन्तु सिंधिया अपना डेरा डाले पड़ा रहा।

राणाजीके कृष्णाकुमारी नामक एक अत्यन्त सुन्दरी लड़की थी। उसका विवाह जयपुरके महाराज जगतसिंहके साथ निश्चित हुआ था, इसलिये जयपुरकी फौज दान-दहेजकी सामग्री ले जानेके लिये उदयपुरमें पड़ी हुई थी, परन्तु जोधपुरके राजा मान-सिंहने इस सम्बन्धमें विघ्न उपस्थित कर दिया। कृष्णाकुमारीके

रूपकी बात सुन, मानसिंह उससे स्वयं विवाह करना चाहता था। उसने राणासे कहला दिया कि यदि आप मुझे कृष्णा न देंगे, तो मैं उसे जगतसिंहको कभी न देने दूंगा। मैं अपनी सारी शक्ति इसके लिये लगा दूंगा।

मानसिंहने यह भी प्रचार कर दिया कि कृष्णाका सम्बन्ध जोधपुरके स्वर्गवासी राजासे निश्चित हो चुका था, इसलिये उसका सम्बन्ध अब मुझसे ही होना चाहिये। मानसिंहने जयपुर पर चढ़ाई कर दी। सिंधियाने कुछ दिन पहले जयपुरसे धन मांगा था, परन्तु उन्होंने कुछ न दिया। इस अवसर पर सिंधिया मान-सिंहके साथ मिलकर जयपुरसे लड़नेको तैयार हो गया। सिंधियाने राणासे भी कहला दिया कि जयपुरवालोंको मेवाड़से निकाल दो और कृष्णाका विवाह उनके साथ न करो, परन्तु राणाने यह बात न मानी। सिंधियाने मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी। राणाजी जगतसिंहकी सेना अपने सेनाके साथ लेकर पहाड़ोंमें उससे भिड़ गये। वे युद्धमें हार गये और नगरको भागे। सिंधियाने उनका पीछा किया और जाकर शहर घेर लिया। वह एक महीने तक घेरा डाले पड़ा रहा। अन्तमें यह बात तय हुई कि एक लिङ्गके मन्दिरमें राणाजीके साथ सिंधियाका दरबार हो। इस दरबारमें सिंधियाने अपनी उच्चता दिखानेके लिये अंगरेजोंके प्रतिनिधिको बुलाया। राजस्थान इतिहासके लेखक कर्नल टाड प्रतिनिधि रूपसे उपस्थित हुए। जयपुरके जगतसिंह कृष्णाको न पाकर बड़े दुःखी हुए। और उन्होंने मेवाड़ पर चढ़ाई कर दी। जोधपुरवालोंने भी इस चढ़ाई की बात सुन कर आक्रमण कर दिया।

जयपुरके महाराजके साथ एक लाख बीस हजार और जोध-

पुरके नरेशके पास इससे भी अधिक सेना आक्रमणके लिये थी। पर्वतसर नामक स्थानमें दोनों सेनाओंके बीच घोर युद्ध हुआ। जयपुर नरेश अन्तमें विजयी हुए और वे जोधपुर तक बढ़े चले गये, जिसे उन्होंने खूब लूटा। पीछेसे जोधपुरके राठोरोंने जयपुर वालों पर बड़े जोरसे आक्रमण किया और वे विजयी हुए। जयपुरके जगतसिंह अपनी बची हुई सेना लेकर भागे। यद्यपि जयपुर जोधपुरके राजा लड़ कर शक्तिहीन हो गये, परन्तु दोनों ही कृष्णाकी पानेकी अभिलाषा किये रहे। उन दिनों अमीरखां नामक एक दुष्ट मुगल राणाजीके दरबारमें आया जाया करता था। एक दिन उस नीचने राणाजी और उनके कई सरदारोंके सामने साफ कह दिया कि या तो राजकुमारी जोधपुरके राजा मानसिंहसे अपना विवाह कर ले या विष खाकर अपने प्राण त्याग दे, तभी मेवाड़में शान्ति होगी। यदि इन दो उपायोंके अतिरिक्त और कुछ किया जायेगा तो राणाजीको सङ्कटमें पड़ना होगा। राणाजीका हृदय यह बात सुन कर सिहर उठा। जिस कन्याको देख कर वे अपनी विपत्तिके दिन भी भूल जाते थे, उसी निरपराधिनी कन्याके बलिदानकी बात उन्हें भला किस तरह सह्य हो सकती थी। इस दयाशून्य कार्यका भार आखिरको शिशोदिया कुलके सरदार दौलतसिंहको सौंपा गया। जब सरदारने यह बात सुनी तो उन्होंने इस कार्यको बिलकुल ही अस्वीकार किया। इसके बाद राणाके स्वर्गवासी पिताकी उपपत्नीके गर्भसे उत्पन्न हुए जवानदासको वह भीषण काम सौंपा गया। जब निरीह कुमारी उसके सामने पहुंची, तो वह छुरी फेंक कर भागा। धीरे धीरे यह बात सारे रनवासमें फैल गयी। महाराणी उस छुरीको देख कर रोती रोती बेहोश हो गयीं। उन्हें

पीना बिलकुल ही छोड़ दिया। उन्हें जीवित कुमारी भी मृत-वत् दिखायी देने लगी। कृष्णाने माताको बहुत कुछ समझाया और कहा कि मैं मरनेसे नहीं डरती, मैंने भी तो तुम्हारे गर्भसे जन्म लिया है। राजपूत-बालाएं मरनेसे नहीं डरा करतीं। जहरका प्याला कृष्णाको दिया गया, जिसे वह आनन्दपूर्वक पी गयी। प्राणोंसे विष पराजित हो गया। हलाहल विषका दूसरा प्याला फिर तैयार किया गया। वह भी काम न आया। तीसरा प्याला दिया गया और वह भी व्यर्थ हुआ। जब तीसरे प्यालेसे भी कृष्णाके प्राण न गये तो मेवाड़के सरदार भयभीत हो उठे। अमीरखां बार बार यही कहता रहा कि जब तक कृष्णा जीवित है, मेवाड़में शान्ति नहीं हो सकती। अबकी बार अफीम और कसूंवेको मिला कर बड़ा भयानक विष तैयार किया गया। कृष्णा समझ गयी कि इस वार अन्तिम विदा लेनी पड़ेगी। वह यह कह कर कि भगवान् इस वार मृत्यु दे, हंसती हंसती वह प्याला पी गयी और फिर वह ऐसी सोयी कि फिर न उठी!

थोड़े ही दिनों बाद पुत्रीके शोकमें महाराणीने शरीर त्याग दिया। महाराणाके १५ पुत्र थे। कृष्णाकी मृत्युके बाद जवानसिंह को छोड़ कर और सब मर गये। सन् १८०९ ई० में अमीरखांने बहुतसी सेना एकत्र कर मेवाड़ घेर लिया और महाराणासे कहा कि मुझे ११ लाख रुपया दो, नहीं तो एकलिङ्गजीका मन्दिर ध्वंस कर दिया जायेगा। नौ लाख रुपया देनेकी बात तय हुई, परन्तु रुपये अदा न किये जा सके। दुराचारी अमीरने अपनी सेना उदयदरमें घुसा दी। कुछ ही दिन बाद मराठोंकी सेना भी उदयपुरमें घुसा दी। और शहर-गांव खूब ही लूटे गये। कोई गृहस्थ न बचा। जब दोनोंका अत्याचार बहुत बढ़ गया तो

मेवाड़-गौरव १४ जय

महाराणाजीने दोनोंके बीच अपना राज्य बांट देना निश्चित किया। धवल-मंगरामें सभा हुई। राणाजीके निर्णयको सुन दोनों शांत हो गये । इसी बीचमें बापूजी सिंधिया ने धावा किया । उसे जो मिला अपने साथ लूट ले गया और कुछ आदमी भी पकड़ ले गया, जिन्हें अजमेरमें कैद कर दिया । इधर अंग्रेजोंसे राणाजीकी सन्धिकी बात चलने लगी । सन् १८१७ के अक्टोबर मासमें लार्ड हेस्टिंगने सब राजपूतोंकी एक सभा दिल्लीमें की जिसमें महाराणाके साथ सन्धि हो गयी । अंग्रेजोंने मेवाड़में पड़े हुए सब शत्रुओंको खदेड़ दिया और शान्ति स्थापित कर दी। कई सभाओंके बाद मेवाड़के सभी सामन्त सरदारोंके साथ राणा की सन्धि हो पायी ।

अभी तक वही सन्धि वर्तमान है । यद्यपि मेवाड़का वह वैभव नष्ट हो गया, तथापि मेवाड़ने अपने नामको अपने अद्भुत सूर्य कलावोंसे अमर कर दिया। मेवाड़के गिरि-पर्वत और समतल भूमि और नदियां हमारी वन्दनीय हैं।

समाप्त ।

